बीज में ब्रिच्छ और ब्रिच्छ में है बीज ।
द्वैत मत छोड़ कर पार परना ।। २ ।।
कहे मानपुरी माया ब्रह्म कु यक कर ।
तब मिटेगा तेरा जन्म मरना ।। ३ ।।

४१६—पद : गौरी आदिताल

सब जिय येक बिरछ के पात ।
जहाँ के तहाँ ही समात ।। ध्रु० ।।
नये नये पात सुहावन लागे ।
जूने सब झर जात ।। १ ।।
जे टुटे ते डार न लागे ।
बिरछ नही कुमलात ।। २ ।।
कहत मानपुरी ब्रह्म वृक्ष के ।
साधु संत फल खात ।। ३ ।।

४१७—पद : राग नायकी कानड़ा आदिताल

सब परब्रह्म न जाना ।
पढ़ि पढ़ि वेद पुराना ।। ध्रु० ।।
गुरु को ग्यान न जाने पंडित ।
करि करि वाद भुलाना ।। १ ।।
सेजै खर पर चंदन लादो ।
तैसे गुरु बिन ग्याना ।। २ ।।
कहत मानपुरी मनमुख प्राणी ।
क्यों कर होत शयाना ।। ३ ।।

४१८—पद : राग कल्यान इमन अड़ताल

साईं नित वह मारो तुही ।
नाहीं न जग सो न्यारो ।। ध्रु० ।।
रैन दिना तोरे गुन गाऊँ ।
पार न पायो तिहारो ।। १ ।।

बार न पार जहाँ तहाँ पूरण ।
जानत जानत हारो ।। २ ।।
मानपुरी साईं बिसरत नाहीं ।
मन मानो पिया प्यारो ।। ३ ।।

४१६—पद : राग नटताल रूपक

सोने की मूर्ति सोने को भूखन ।
भूखन पहिरे कैसो मन लागी ।। ध्रु० ।।
अंबर सूत, सूत है अंबर ।
सूत की गोंदरी सूत सो तागी ।। १ ।।
देव सो भगत भगत सो देव ।
गुरु की मिठाई गुरु हि सो पागी ।। २ ।।
कहत मानपुरी जग ज़गदीस को ।
जाने मर्म सोई बड़भागी ।। ३ ।।

४२०—पद : राग बिलावल

रूप अरूप प्रभु को ।
सब जग स्वरूप ।। ध्रु० ।।
दक्षन वाम एक ही अंग ।
जो सूरज अरु धूप ।। १ ।।
एक ही ब्रह्म भयो अब दूजा ।
ओही रंक ओही भूप ।। २ ।।
मानपुरी कछु कहत न आवे ।
साहेब आप अरूप ।। ३ ।।

४२१—पद : राग खमाज आदिताल

तूही तूही बोलत तूती ।
अगम अवधूती ।। ध्रु० ।।
सुन री सखी तू समजत नाहीं ।
मेरो मेरो कछु प्रतीती ।। १ ।।

चाह नहीं पिया के मिलन की ।
ताको कहा करो धूती ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु मदन मनोहर ।
बिना जो नेत्रिया सूती ॥ ३ ॥

४२२—पद : राग बिलावल ताल बिलंदी

तू तो कौन कहाँ से आयो रे ।
तेरा मर्म न पाया रे ॥ धृ० ॥
आया कहाँ कहाँ है ज्याना ।
कोन सो गाँव बसाया रे ॥ १ ॥
अपने तन का सोच न लीना ।
उत्तम जनम गमाया रे ॥ २ ॥
कहत मानपुरी सुन मन मेरे ।
आतम ग्यान भुलाया रे ॥ ३ ॥

४२३—पद : धनाश्री आदिताल

अंतर मों साईं आव रे ।
तुहि तुहि तेरो गुन गाव रे ॥ धृ० ॥
मितु मेटी दृष्टि करि निर्मल ।
जन वन दरस दिखाव रे ॥ १ ॥
आप आपको आप भुलानो ।
आपको आप मिलाव रे ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु बेगि आवना ।
भूला मन समझाव रे ॥ ३ ॥

४२४—पद : अलैयाव जैतश्री आदिताल

देखा अलख तुम्हारा नूर ।
देखा अलख तुम्हारा नूर ॥ धृ० ॥
अंतर बाहर दीन दुनिया मों ।
आप रहा भरपूर ॥ १ ॥

वार न पार सदा सुखसागर।
नाहीं निकट नाहीं दूर ।। २ ।।

कहत मानपुरी हम तुम माहीं।
बाजत अनहत तूर ।। ३ ।।

४२५—पद : राग बिलावल

अलख भेद बोले चारों बेद ।। धृ० ।।
वार न पार जहाँ तहाँ पूरा।
अगम अरूप अछेद ।। १ ।।

मूरख जन हरि के मिलने की।
राखत नाहि उमेद ।। २ ।।

मानपुरी साईं सब घट पूरन।
कोन करे अब खेद ।। ३ ।।

४२६—पद : राग यमन कल्यान आदिताल

तुमरी दया बिन मिथ्या धन जोबन।
ज्यान सुजान पिया प्यारे हो ।। धृ० ।।

सुन्दर स्वरूप पर तन मन वारो।
दरसन देवो सांवरे हो ।। १ ।।

निशिवासर मोहे नींद न आवे।
तलपत नयन बिचारे हो ।। २ ।।

मानपुरी सदा अन्तर्यामी।
नाहीं न हम से नियारे हो ।। ३ ।।

४२७—पद : राग पीलू आदिताल

हो पिया तुमई बलम रहे परदेस।
पायो नहीं जस हेस ।। धृ० ।।
लगन लगाय मगन हि कीनी।
सफेद भये सिर केस ।। १ ।।

पावसरी तू पिय की सुधि आई।
करि हो जोगनिया को भेस ।। २ ।।

मानपुरी प्रभु घट घट भेंटे।
नासत कष्ट कलेस ।। ३ ।।

४२८—पद : ताल झंपा

अगम पंथ तेरो भगवान।
तन मन व्यापक सर्व समान ।। ध्रु० ।।

अग्यानी सिखये होय ग्यानी।
ग्यानी ना होवे अग्यान ।। १ ।।

अग्यानी समझाये समझे।
ग्यानी नाते जे मान गुमान ।। २ ।।

कहत मानपुरी जानी बुझी को।
अग्यानी सोई सग्यान ।। ३ ।।

४२९—पद : बिलावल आदिताल

अंतरंग सो बुझाना।
नैन के नैनन सुझाना।
हार जीत चितवनी होमों जुझाना ।।ध्रु०।।

कछु जो पिया मेरा मन भाया।
जग आपस ते प्रगटाया।
वाहि आप बनि आया ।। १ ।।

वोहि जंतर वोहि अलापे हो।
जो जो दिसे सो सो जापे हो।
सब प्रीतम प्यारे आपे हो ।। २ ।।

और दूजा भाव न आनिये।
सब यक पिया करि मानिये।
कहत मानपुरी यह जानिये ।। ३ ।।

४३०—पद : राग पूर्वी आदिताल

अब तू अंतरंग सो देखा ।
अगम अरूप अलेखा ।। धृ० ।।
कहुँ राजा कहुँ रंक बनो है ।
कहुँ ब्राह्मण कहुँ शद्र ।। १ ।।
कहुँ अग्यानी कहुँ सग्यानी
के के धारत भेख ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु जित तित दीसे ।
जाके रूप न रेख ।। ३ ।।

विनय-पद

४३१—पद : यमन कल्यान आदिताल

लीला को जाने कितनी ।
कितनी कितनी कितनी ।। धृ० ।।
जितनो आप अलेख निरंजन ।
माया छायी तितनी ।। १ ।।
नाहीं रूप, नाम, भुज नाहीं ।
देखत लाज कथनी ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु जहाँ तहाँ तुमही ।
अब मन आई इतनी ।। ३ ।।

४३२—पद : राग बरवा

साईं मेरा भूलि न जाय ।
अँखियन मों रहो है समाय ।। धृ० ।।
भो भ्रम भाग्यो मिट्यो संशयो साईं ये ।
सोवत मोहे दियो जगाय ।। १ ।।
तूही पशु पंछी भया तुही न वारिया ।
निरखत दूर गयो मैं हिराय ।। २ ।।
कहत मानपुरी तुही मनमानिया ।
मगन तेरे गुन गाइया ।। ३ ।।

४३३—पद : राग श्री चौताल राग पूर्वी आदिताल

से रिसि पद आने दीवाने ।
सब जाने तब माने ।। धृ० ।।
ग्यान अग्यान कछु नहीं जाने ।
सैंत गुरु हाथ बिकाने ।। १ ।।
मानपुरी प्रभु आप जहाँ तहाँ ।
संत संग पहिच्याने ।। २ ।।

४३४—पद : बिहागड़ा अड़ताल

दया करि हमरी हा आवो ।
तुम हमको भावो ।। धृ० ।।
तुमरे राव रंक सब यक सा ।
मेरो मन समझावो ।। १ ।।
दूजा और न कोई हमको ।
तुम जिन बिसरावो ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु करुणासिंधु ।
ठैरत उठ धावो ।। ३ ।।

४३५—पद : सारंग सावत राग आदिताल

रूप अरूप प्रभु को सहज स्वरूप ।। धृ० ।।
दक्षिन नाम येक ही अंग ।
जो सूरज और धूप ।। १ ।।
येक ही ब्रह्म भये अब दूजा ।
वोहि रंक वोहि भूप ।। २ ।।
मानपुरी कछु कहत न आवे ।
साहेब आप अनूप ।। ३ ।।

४३६—पद : बिहागड़ा अड़ताल

साईं हर घट मों बोले ।
मूला धूंडत डोले ।। धृ० ।।

आपही गावे आपही नाचे ।
आप बजावे ढोले ।। १ ।।
आवे न जाई जहाँ तहाँ पूरन ।
आपही आप कलोले ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु अमूरत ।
बिनत करी जग तोले ।। ३ ।।

४३७—पद : बिभास आदिताल

सपना मनमानारे ।
पीहरवा ।। धृ० ।।
यह जग सपना को नही अपना ।
कहा देखि ललचाना रे ।। १ ।।
सोवत सोवत जनम गयो ।
आप नही पहिचाना रे ।। २ ।।
कहत मानपुरी हरि सुमिरन बिन
अंतकाल कू पछताना रे ।। ३ ।।

४३८—पद : गौड़ सारंग आदिताल

अब क्या सोवे रे मन पंछी ।
दिल का मैल न धोवै ।। धृ० ।।
सपने का सुख देख भुलाना ।
जागे बिन सुद न होवै ।। १ ।।
ऐसी भेंटि सुखी नहीं होवे ।
नाहक उमर खोवै ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु जैसे को वैसा ।
अगम अपार न जोवै ।। ३ ।।

४३९—पद : राग श्रीताल चौताल

बूझत सोवत जागत को तेरो ।
लोचन मूंदत खोवत को है ।। धृ० ।।
पाँच पचीस तिही गुन मों तोही ।
रैन दिना लिये डोलत का है ।। १ ।।

सारी देह का नांव नियारो।
तेरे नांव पुकारे ते बोलत को है ।। २ ।।

कहे मानपुरी तीनों लोक भरे।
जामों वा बिन और कलोलत को है ।।३।।

४४०—पद : छाया नाटक ताल

जाग रे जाग तू देख दृग खोल।
अग्यान को चोर घर माहि बैठा ।।धृ०।।

इस चोर को बाँधि लेजा तू गुरु तीर।
तू क्या यों ही बेखबर बैठा ।। १ ।।

जाय घर उजरत तू सदा अकड़ता।
गर्व गुमान में रहे ऐंठा ।। २ ।।

कहे मानपुरी ऐसे चोर को चाहिये ग्यान।
सुपकरी कैसी रहुँ मैं बैठा ।। ३ ।।

४४१—पद : बिहागड़ा आदिताल

घड़ी गई रैन जागो रे जागो रे जागो रे।। धृ० ।।

जो सोवे सो सब हो खोवे।
ऐसी निद्रा त्यागो रे त्यागो रे ।। १ ।।

तुम हो कौन कहाँ से आयो।
मारग अपने लागो रे लागो रे ।। २ ।।

मानपुरी कहे पहुँचे चाहो।
ग्यान गुरु से मांगो रे मागो रे ।। ३ ।।

४४२—पद : राग बिरावर आल्या आदिताल

कहुँ जागे कहुँ रहता सोय।
तुज बिन दूजा और न कोय ।। धृ० ।।

येक अनेक तुही सब जड़ जिय।
गुरु अंजन बिन न दीसे सोय ।। १ ।।

तुज बिन ठौर न खाली दीसै।
लख चौरासी व्यापक होय ।। २ ।।
कहत मानपुरी ग्यान गङ्गा में।
दुरित मैल सब दूरो धोय ।। ३ ।।

४४३—पद : बिहाग

भली समझाई सोवत आन जगाई ।। धृ० ।।
आज रखी मोहे प्रेम पियारे ।। १ ।।
दीन दयाल दया करि मो को।
रम की तान सुनाई ।। २ ।।
मानपुरी साईं अंतर जामी।
दामी जदुमन भाई ।। ३ ।।

४४४—पद : मधु माधवी आदिताल

जागो भाई हा जागो भाई।
अब नर देह पाई ।। धृ० ।।
जाग बे को आयो इत।
सोवना सुहावे नित।
सोवते अग्यान नीद आई ।। १ ।।
घट घट सब ठौर।
दूजा कोई नही और।
साध सन्त येही बस्त भाई ।। २ ।।
मानपुरी जागे सोय।
अंतर सो शुध्ध होय।
सतगुरु परसाद भ्रम जाई ।। ३ ।।

४४५—पद : बंकावली आदिताल

कोई हरदम जागो रे जागो रे।
जा गुरु के पद लागो रे ।। धृ० ।।
ऐसा जागो सुख दुख त्यागो।
ग्यान गर्ब सो भागो रे ।। १ ।।

जो जागे सो दरसन पावे ।
जो सोवे सो अभागी रे ।। २ ।।
कहत मानपुरी दियो है ढिंढोरा ।
जो जागो सो जागो रे ।। ३ ।।

४४६—पद : राग काफी आदिताल

मोहे मित्र जगावे ।
मगन भयो मन मारो जी ।। ध्रु० ।।
लागी लगन अब तो नही छूटे ।
जैसे चन्द्र चकोरा, जी ।। १ ।।
जब से प्रीतम प्रीत लगाई ।
सब सखियन पर तो राजी ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु तुम बहुनायक ।
हो जसु गायो जी तो राजी ।। ३ ।।

४४७—पद : यमन कल्याण आदिताल

जागी री निस दिन जागी ।
हरि गुण गावन लागी ।। ध्रु० ।।
शामसुदर को संग न छोड़ो ।
प्रेम प्रीत से योगी ।। १ ।।
मगन भई अब नींद न आवे ।
तन की दुरमत भागी ।। २ ।।
मानपुरी सहजे सतगुरु के ।
चरन कमल अनुरागी ।। ३ ।।

४४८—पद : काफी आदिताल

मुको बंगाली भात ही भात पुकारे ।।ध्रु०।।
जागत सोवत भात न भूले ।
पल पल नाहीं बिसारे ।। १ ।।
ऐसो लगन लगी साहेब सों ।
आप तरे जग तारे ।। २ ।।

कहत मानपुरी तीर पतत वही।
सारा सार बिचारे ॥ ३ ॥

४४६—पद : राग विहागड़ा अड़ताल

अब किसहि को कोइ नाहीं।
समझि देख मन माँही ॥ धृ० ॥
दिन चारि की झूठी माया।
जो दुपहर की छाँईं ॥ १ ॥
राजा रंक बराबर दिसे।
दो कर जारत जाई ॥ २ ॥
मानपुरी भवसिंधु उतारो।
धरि सतगुरु की बाँही ॥ ३ ॥

४५०—पद : बिलावल आदिताल

आपको आप विचारत नाहीं।
उत्तम जनम सँवारत नाहीं ॥ धृ० ॥
विख को खाय अमर भयो चाहे।
काम क्रोध सो हरत नाहीं ॥ १ ॥
आप सुसी जग भ्रमित डोले।
तन की दुर्मति डरत नाहीं ॥ २ ॥
कहत मानपुरी दाव बनो है।
बैरी भ्रम निकरत नाहीं ॥ ३ ॥

४५१—पद : ललित आदिताल

माया तेरो वार न पार।
तू हि सब संसार ॥ धृ० ॥
अलख निरंजन अगम अमूरत।
तू हि सब आकार ॥ १ ॥
जहाँ लगि काया तहाँ लगि माया।
काया बिन अँधियार ॥ २ ॥
कहत मानपुरी नजर न आवे।
बिन दरपन दीदार ॥ ३ ॥

४५२—पद

अपने मूल को खोजकर मूरख देह के देव को ध्यान धरना ।।
एक है वस्त परकास सब एक का, दूसरे भाव को दूर करना ।।
बीज में ब्रिच्छ ग्रो ब्रिच्छ है बीज में द्वैतमत छांड़कर पार परना ।।
'कहे मानपुरी' माया ब्रह्म को एक कर तब मिटेगा तेरा जनम मरना ।।

४५३—पद : चाल कानड़ा नायकी ताल रूपक

साधो सबद सिंधु को ।
काहु न पायो पार ।। ध्रु० ।।
सतजुग त्रेता द्वापर कलियुग ।
धिग धिग है अपार ।। १ ।।
कथि कथि कथनी सब जग थाके ।
रहे बार के बार ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु सबद से न्यारो ।
ताको करहो विचार ।। ३ ।।

४५४—पद : राग रामकली आदिताल

देख सपना संवसार ।
बूझे बूझनहार ।। ध्रु० ।।
मोरो मोरो करत जलम सब खोयो ।
जाते दो कर झार ।। १ ।।
थोरे दिनन के जियन कारन ।
पचि पचि मरत गँवार ।। २ ।।
कहत मानपुरी रंक राव सब ।
आखर होते छार ।। ३ ।।

४५५—पद : राग रासा आदिताल

देखो री पानी प्यासा ।
क्या कहुँ अजब तमासा ।। ध्रु० ।।
अपनी खबर आप को नाहीं ।
आप मिलन की आसा ।। १ ।।

जैसे रूप नाम परि आयो।
शकर माहिं बतासा ॥ २ ॥
तैसे मानपुरी ब्रह्म माँही।
जग जीवन परकासा ॥ ३ ॥

४५६—पद : राग सोरठ ताल झंपा

तेरा नाँव कैसा तेरा गाँव कैसा।
तेरा रूप कैसा तेरा देस कैसा ॥ धृ० ॥
चार पाँच पचविस का मूल कैसा।
ब्रह्मा विष्णु का महेस का भेद कैसा ॥१॥
आकार कैसा निराकार कैसा ॥ २ ॥
कहे मानपुरी इहाँ दर्द दरकार है।
दर्द बिन उपदेस होय कैसा ॥ ३ ॥

४५७—पद : चाल काफी आदिताल

साईं मेरे दिल का मरहम।
दरद न जाने और ॥ धृ० ॥
बैद कहावत दरद न पावत।
ठगि ठगि कीन्हों चोर ॥ १ ॥
सब जग ढूंडा बैद न पाया।
इह लग मेरी दौर ॥ २ ॥
कहत मानपुरी दरद गयो अब।
सतगुरु कीन्हों गौर ॥ ३ ॥

४५८—पद : राग जोनपुरी आदिताल

यो पूंछता है सो बोलता रे।
बिन दांडी जग तोलता रे ॥ धृ० ॥
ना पतियाव तो दरपन देखो।
जो देखे सो दिखता रे ॥ १ ॥

तिल भरि जागा न दिखत खाली।
निरखि निरखि जग डोलता रे ॥ २ ॥
मानपुरी साईं अगम अमृत।
करि करि प्रगट खोलता रे ॥ ३ ॥

४५६—पद : जोनपुरी आदिताल

यह कौन सुने कौन गावत है।
ताल मृदंग बजावत है ॥ ध्रु० ॥
गीत प्रबंध कथा परमार्थ।
मथि मथि अर्थ बतावत है ॥ १ ॥
आवत जावत लखो नहीं जाई।
नाना स्वांग नचावत है ॥ २ ॥
कहत मानपुरी सो नर दुर्लभ।
जिय को रूप दिखावत है ॥ ३ ॥

४६०—पद : यमन कल्याण आदिताल

बिन कर बीन बजावे।
तान मान उपजावे ॥ ध्रु० ॥
बिन जीभिया निरगुन गावे।
बिन पग नाच नचावे ॥ १ ॥
नैनन बिना सरूप निहारे।
बिन सरवन सुनि आवे ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु तन सो न्यारो।
जो पावे सो छिपावे ॥ ३ ॥

४६१—पद : आडाना आदिताल

साईं को नाम ले रे साज मुवा।
सुख पावे तन मनुवा ॥ ध्रु० ॥
यो भवसागर तारण कारण।
आवत है हरि जनुवा ॥ १ ॥

जपत ग्यान ध्यान धरि देखो।
मन नहीं होत मगनुवा ॥ २ ॥
कहत मानपुरी सुधो मारग।
आपको देख अपनुवा ॥ ३ ॥

४६२—पद : सोरट आदिताल

अजर अमर नाम स्मर बाई।
सुधि सुधि रहा बताई ॥ धृ० ॥
नाम अनामी मरस सलोना।
परम ग्यान सुखदायी ॥ १ ॥
गुरु परसाद साधु की संगत।
अगम सुगम हो जाई ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु प्यारे की छबि।
चहुँ दिस देत दिखाई ॥ ३ ॥

४६३—पद : बिभास आदिताल

नाम साईं को आज गावो रे ॥ धृ० ॥
सब घट ब्रह्म यक करि देखो।
मन की दुविधा त्यागो रे ॥ १ ॥
सोवत सोवत रैन बिहानी।
राम नाम अब गावो रे ॥ २ ॥
कहत मानपुरी सो नर जागे।
सत गुरू के पद लागो रे ॥ ३ ॥

४६४—पद : बिहागड़ा अड़ताल

साईं तेरो नाम जपती दासी वो।
अगम देस के वासी वो ॥ धृ० ॥
नाम लेत सब पाप कटत है।
को जावे अब कासी वो ॥ १ ॥

रैन दिना तेरे गुण गावे।
हरि दरसन की प्यासी वो ।। २ ।।
मानपुरी मन में मन मोहन।
देह भाव नासी वो ।। ३ ।।

४६५—पद : विभास आदिताल

अब चरन कमल चित्त लावो रे।
नाम साईं का आजि गावो रे ।। धु० ।।

फेरी मिले नहीं ऐसा दावो।
हरबर मन समझावो रे ।। १ ।।

त्या माया दुपर की छाया।
माको जी पतियावो रे ।। २ ।।

कहत मानपुरी अलख निरंजन।
ताको पल न भुलावो रे ।। ३ ।।

४६६—पद : जैतश्री आदिताल

राम तो लौ गाऊँ रे तो लौं गाऊँ रे ।।
जो लौं है नर देही बाना ना बिसराऊँ रे ।। धु० ।।
नाम रूप बिन अगम अगोचर।
बोले साधु संत।
सो अब रूप नाम धरि आयो।
खेले खेल अनन्त ।। १ ।।

रामनाम को जाने बाबा।
जो गुरु कृपा होय।
जहाँ तहाँ नजरि परे जल थल में।
वा बिन और न कोय ।। २ ।।

मानपुरी प्रभु अनाथ बंधु।
तारक तेरा नांव।
पावन पतित करो छिन माहीं।
आ बिद की बलि जाय ।। ३ ।।

जपत ग्यान ध्यान धरि देखो ।
मन नहीं होत मगनुवा ।। २ ।।
कहत मानपुरी सुघो मारग ।
आपको देख अपनुवा ।। ३ ।।

४६२—पद : सोरट आदिताल

अजर अमर नाम स्मर बाई ।
सुधि सुधि रहा बताई ।। धु० ।।
नाम अनामी नरस सलोना ।
परम ग्यान सुखदायी ।। १ ।।
गुरु परसाद साधु की संगत ।
अगम सुगम हो जाई ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु प्यारे की छबि ।
चहुँ दिस देत दिखाई ।। ३ ।।

४६३—पद : बिभास आदिताल

नाम साईं को आज गावो रे ।। धु० ।।
सब घट ब्रह्म यक करि देखो ।
मन की दुविधा त्यागो रे ।। १ ।।
सोवत सोवत रैन बिहानी ।
राम नाम अब गावो रे ।। २ ।।
कहत मानपुरी सो नर जागे ।
सत गुरू के पद लागो रे ।। ३ ।।

४६४—पद : बिहागड़ा अड़ताल

साईं तेरो नाम जपती दासी वो ।
अगम देस के वासी वो ।। धु० ।।
नाम लेत सब पाप कटत है ।
को जावे अब कासी वो ।। १ ।।

रैन दिना तेरे गुण गावै ।
हरि दरसन की प्यासी वो ।। २ ।।
मानपुरी मन में मन मोहन ।
देह भाव नासी वो ।। ३ ।।

४६५—पद : बिभास आदिताल

अब चरन कमल चित्त लावो रे ।
नाम साईं का आजि गावो रे ।। ध्रु० ।।

फेरी मिले नहीं ऐसा दावो ।
हरबर मन समझावो रे ।। १ ।।

त्या माया दुपर की छाया ।
माको जी पतियावो रे ।। २ ।।

कहत मानपुरी अलख निरंजन ।
ताको पल न भुलावो रे ।। ३ ।।

४६६—पद : जैतश्री आदिताल

राम तो लौ गाउँ रे तो लौ गाउँ रे ।।
जो लौ है नर देही बाना ना बिसराउँ रे ।। ध्रु० ।।

नाम रूप बिन अगम अगोचर ।
बोले साधु संत ।
सो अब रूप नाम धरि आयो ।
खेले खेल अनन्त ।। १ ।।

रामनाम को जाने बाबा ।
जो गुरु कृपा होय ।
जहाँ तहाँ नजरि परे जल थल में ।
वा बिन और न कोय ।। २ ।।

मानपुरी प्रभु अनाथ बंधु ।
तारक तेरा नांव ।
पावन पतित करो छिन माही ।
या बिद की बलि जाय ।। ३ ।।

४६७—पद : राग सोरट आदिताल

राम राम गावतो गावो गावो रे भैया ।।ध्रु०।।

जब तुम गावो तब तुम गावो ।
गुरु चरन चित लावो रे भैया ।। १ ।।
अलख निरंजन सब घट ध्यावो ।
बहुरि जनम नहीं आवो मेरे भैया ।। २ ।।
कहत मानपुरी अलख जगावो ।
गगन मंडल घर छायो रे भैया ।। ३ ।।

४६८—पद : आडानी ताल बिलंदी

जी राम गावो बार बार गावो ।
ऊजड़ गाँव बसावो ।। ध्रु० ।।
तजी अभिमान भजो भगवान ।
दिन दिन प्रेम बढ़ावो ।। १ ।।
आप ही आप आपकु चूका ।
आप कु आप मिलावो ।। २ ।।
मानपुरी निहकाम होय के ।
सब घट सतगुरु ध्यावो ।। ३ ।।

४६९—पद : चाल कल्याण यमन आदिताल

बंदे गाव गाव गावा गाव ।
नाम साईं का गाव ।। ध्रु० ।।
यो दुनियाँ सपना करि लेखो ।
ग्यान नजरि जो देखो ।। १ ।।
लालच संग जनम सब खोयो ।
दिल मैल का न धोयो ।। २ ।।
कहत मानपुरी समझो भाई ।
दूर करो हो चतुराई ।। ३ ।।

४७०—पद : राग गौड़ सारंग ताल बिलंदी

मीठो रे नाम बोलो गाय गाय ।
गाय गाय गाय ।। ध्रु० ।।
पतित पावन दीनबंधु करुणासिंधु ।
रहो लौ लाय लाय लाय लाय ।। १ ।।
कोई किसी को नहि साथी देखा झूटा खेल ।
यो हि जनम जाय जाय जाय जाय ।।२।।
कहत मानपुरी अब येक बिच्यार ।
गहो गुरु पाय पाय पाय पाय ।। ३ ।।

४७१—पद : राग ठोला ताल बिलंदी

गावो रे गीत पियारे प्रीत ।। ध्रु० ।।
तेरे बचन सुन मोरे मन मोहे ।
अब नहीं छूट लगी प्रीत ।। १ ।।
तुज बिन और कछु नहि भावे ।
मगन भई अब छोड़ी नीत ।। २ ।।
मानपुरी साईं अब तान सुनाई ।
अब मैं ये जग लीनो जीत ।। ३ ।।

४७२—पद : काफी आदिताल

रसना मेरो कहो कर ।
निस दिन हरि रस चाख ।। ध्रु० ।।
थोरे दिन को जियन कारन ।
झूट न भरिये साख ।। १ ।।
जो दिन जाये सो फेर न आये ।
पल पल हरि गुण भाक ।। २ ।।
कहत मानपुरी हरि के भजन बिन ।
अंतर खाक की खाक ।। ३ ।।

४७३—पद : सारंग गौड़ आदिताल

साधो गाइये रिझाइये राम को।
राम को राम को राम को ॥ ध्रु० ॥
छिन छिन यह तन छीन होत है।
बिलम न कीजै इस काम को ॥ १ ॥
सुख दुःख से न्यारे ह्वै रहिये।
तब पैये निज धाम को ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु पतितन तारे।
गहि रहिये हरि नाम को ॥ ३ ॥

४७४—पद

नाम सखा कर ले रे मनुजा ॥ ध्रु० ॥
यै जुग म्याने जुगवा थोरा अजपा जप जप ले रे।
खटपट झांड पंथ धर सीधा, अलख भुवन लिख ले रे।
कहत मानपुरी डाव बनो है, भवसागर तर ले रे।
—मनुजा।

४७५—पद : राग इमन कल्याण आदिताल

गावो मंगल गावो।
सुन्दर वर मन भायो ॥ ध्रु० ॥
भात भात सो बनाव बनायो।
बनरी ब्याहन आयो ॥ १ ॥
लागी लगन मग मगन भई प्यारी।
चित लगायो चित सो ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु के रंग रंगी।
अनहद आनंद पायो ॥ ३ ॥

४७६—पद : सारंग सावत रूपकी

मंगल गाऊँ।
श्यामसुन्दर कु रिझाऊँ ॥ ध्रु० ॥
प्रीतम प्यारे मोरे घर आये सखी।
फूलन सेज बिछाऊँ ॥ १ ॥

प्रेम सरोवर नित नित न्हाऊं ।
मान गुमान बहाऊं ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु सो हिलि मिलि के ।
चुपकी बात सुनाऊं ॥ ३ ॥

४७७—पद : सारंग आदिताल

मंगल गाउ दिन रैन ।
आठ पहर सुख चैन ॥ ध्रु० ॥
प्राणनाथ दरसन दे ये सजनी ।
सीतल भये अब नैन ॥ १ ॥
अब कछु हो सरहिं नहि मनमों ।
सुनि सुनि पिय के बैन ॥ २ ॥
मानपुरी पिय के मिलने की ।
लखिये नैनन की सैन ॥ ३ ॥

४७८—पद : जैवंति आदिताल

आज सैया तो गुसैंया मेरे ।
मेरे गृह आये हैं ॥ ध्रु० ॥
भयो है सुफल जलम ।
मोरे कंथ पायो है ॥ १ ॥
गरीब नवाज साँचे ।
यहि ते कहाय है ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु दयाल ।
मोरे मन भायो है ॥ ३ ॥

४७९—पद : राग बंगाला अड़ताल

साजन घर आयलो ।
उजेर खेरा फेर बसाय लो ॥ ध्रु० ॥
साजन आयलो ।
मो मन भाव लो ।
बहु विध बढ़ाय लो ॥ १ ॥

गाव लो बजाय लो।
प्रेम बिठाय लो।
मेरो मन समझाय लो ॥ २ ॥
मानपुरी साईं।
हर घट माँही।
ऐसी तान सुनाय लो ॥ ३ ॥

४८०—पद : सारंग आदिताल

सीतल छाया साजन की।
ताप हरे तन मन की ॥ धु० ॥
ग्रीष्म ऋतु और ठीक दुपहरी।
गावत तान लगन की ॥ १ ॥
अब तो भूक ताप सब भूली।
दृष्टि पड़ी लालन की ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु के संग लागी।
नाही जलम मरण की ॥ ३ ॥

४८१—पद : ललित आदिताल

पियवर आजि मोरे घर आवे।
मेरे मन समझाव ॥ धु० ॥
रैन दिना मोहे नींद न आवे।
तेरे मिलन को चाव ॥ १ ॥
तू तो गरीब नवाज गुसाईं।
सहज सरूप दिखाव ॥ २ ॥
मानपुरी साईं जहाँ तहाँ पूरण।
कहु नहीं रीता ठाव ॥ ३ ॥

४८२—पद : राग बिरावर आदिताल

सहज हमारो आजी आया वे।
मोहन रूप दिखाया वे ॥ धु० ॥

मगन भई अब महासुख दीनो।
प्याला प्रेम पिलाया वे ॥ १ ॥
जब देखा तब जित तित दीसे।
भूला मन समझाया वे ॥ २ ॥
मानपुरी साइँ मोरे मन माना।
अंतर राम माया वे ॥ ३ ॥

४८३—पद : गौरी आदिताल

लाज राखियो महाराज।
राखियो महाराज ॥ ध्रु० ॥
भाव भगति बिना जन्म गमायो।
पतितन के सिरताज ॥ १ ॥
पावन पतित नाम तुम्हारो।
सुमिरत होवे काज ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु करुणासिंधु।
बिद बाने की लाज ॥ ३ ॥

४८४—पद : गौरी आदिताल

लज्या रखिये जन की।
सबरी नही तन की ॥ ध्रु० ॥
अपनी भगति बंदगी दीजो।
चाह नही धन की ॥ १ ॥
मुख हरि नाम साधु की सङ्गत।
अरु गति गायन की ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु अन्तरजामी।
जानत हो मन की ॥ ३ ॥

४८५—पद : राग देव गंधार आदिताल

अपने व्रत की लज्या राखो हो ॥
राखो हो राखो हो ॥ ध्रु० ॥

जो तुम पावन पतित उधारो।
हम री ओर जिन ताको ही ॥ १ ॥
तुमहि कहत सत आप निरंजन।
भली बुरी भाखो हो ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु जगत जगत मों।
प्रेम रसायन चाखो हो ॥ ३ ॥

४८६—पद : बिरावर आदिताल

सरम पकर बेसरम मना।
धिग् धिग् धिग् तेरो जीवना ॥ ध्रु० ॥
राम भजन कबहुँ न कीनो।
लोहो मोहो बिसरे दिना ॥ १ ॥
या नरदेह बहुरि न पैहिये हो।
करयो नहीं, खोज करे अपना ॥ २ ॥
मानपुरी गुरु युगल गोपाल।
अजपा जप छिन छिन जपना ॥ ३ ॥

४८७—पद : कवित

औगुन को भरो तेरो चरनन सो तेरो।
अब साध संग धरो तेरो प्रेम रस चाखिके ॥
भयो हैं दयाल दास कियो है निहाल।
काटे भव के जंजाल बानि बोले वचन भाषिके ॥
मेरे तो एके बोल देखो सब ब्रह्म गोल।
रचो है त्रिबिध खेल देहो कहाँ नाखिके ॥
मानपुरी ऊँच नीच तेरी तो अजब रीझ।
आये हैं सर नेता ले हैं सरन राखिके ॥

४८८—पद : बिहागड़ा अड़ताल

प्रभु मेरे औगुन कहाँ लो गनि है।
तेरी दया धनि धनि है ॥ धु० ॥

गुण औगुण में सलाबरि है।
जाननहारो जानि है॥ १॥
पावन पतित बिद है तेरे।
एक भाव मन भीनी है॥ २॥
मानपुरी प्रभु अधम उधारण।
दरस दिखाये बनि है॥ ३॥

४८६—पद : राग असावरी ताल बिलंदी

दीनानाथ गरीब निवाजा।
दारिद्र भाजा भाजा॥ धृ०॥
तीन लोक जाकी फिरत दुहाई।
बाजत अनहद बाजा॥ १॥
दीन दयाल दया के सिंधु।
भक्त वत्सल महाराजा॥ २॥
जब से दया द्रिष्टी करि चितयो।
मानपुरी मन ताजा॥ ३॥

४९०—पद : राग भैरवी आदिताल

प्रभु तुम साँचे दीन दयाल।
कीन्हो पतित निहाल॥ धृ०॥
ज्या दिन ते गुरु के सरन आयो।
पाय परे कलि काल॥ १॥
कहा कहुँ कछु कहत न आवे।
पायो प्रेम सुकाल॥ २॥
कहत मानपुरी कहुँ नहीं हिरता।
परिपूरण गोपाल॥ ३॥

४९१—पद : राग धनाश्री आदिताल

प्यारे मेरे हम जन तेरे।
हित करि दरसन दे रे॥ धृ०॥

पंथ निहारत तीन पन बीते ।
सिर के केस पके रे ।। १ ।।
हम अजान तुम को कहा जाने ।
धरते आस घने रे ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु नाम तिहारो ।
लेवहि भगत घनेरे ।। ३ ।।

४६२—पद : नट रूपक

पतितन को पावन कीजे हो ।
तुम बिन कछु न सूझे हो ।। ध्रु० ।।
जे जे आवे सरन तुम्हारी ।
तोही प्रेम रस दीने हो ।। १ ।।
राखो लाज बिरद बाने की ।
मोहि अपनो कर लीजे हो ।। २ ।।
मानपुरी प्रभु मोरे घर आवो छिन छिन ।
यो तन छीजे हो ।। ३ ।।

४६३—पद : राग पूर्वी चौताल

कौन सो मात पिता सुत भ्रात ।
सो कौन अनेक सो कौन अकेला ।।ध्रु०।।
पापी सा कौन, पुण्यात्म कौन ।
सो कौन गुरु अरु कौन सो चेला ।। १ ।।
हां जी कौन मरे अरु कौन जिये ।
बिरला कोई जानत है अलबेला ।। २ ।।
कहत मानपुरी होय यक पानी मों ।
लाख तरंग को ठेला मे ठेला ।। ३ ।।

४६४—पद : राग बिहागड़ा अड़ताल

नाथ अनाथ सनाथ कियो है ।
पूर्ण दया करी प्रेम दियो है ।। ध्रु० ।।

माया मोह नजर नही आवे।
राम रूप जग जान लियो है ॥ १ ॥
अमर भयो अब मरत न मारे।
चरणामृत परतीत पियो है ॥ २ ॥
कहत मानपुरी गुरु परसादे।
मुवा हुवा जीव फेर जियो है ॥ ३ ॥

४६५—पद : रामकली आदिताल

आरे मोरे प्यारे जगत उधारे।
केतक भगत उधारे ॥ धु० ॥
गीध व्याध गज गनिका तारी।
अधम मगन करि डारे ॥ १ ॥
कौन गने गनती नही पूरे।
सब के काज सँवारे ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु दरसन दीजो।
हम तो दास तिहारे ॥ ३ ॥

४६६—पद : काफी आदिताल

कछु सौदा नहि कीन्हा।
क्यों आये क्यो चले ॥ धु० ॥
काहू लेन तुम हाटे आये।
दीसत हो तुम भले ॥ १ ॥
हरि की भगति न गुरु की सेवा।
काम क्रोध फल फले ॥ २ ॥
कहत मानपुरी समझो यारो।
किस कारण तुम चले ॥ ३ ॥

४६७—पद : चाल सदर सोरट ताल झंपा

न तो पुन्य जानौं न तो पाप जानौ।
मुझे ग्यान अग्यान सो काम नाहीं ॥धु०॥

न तो शोर करो न तो चुप रहो।
सब नाम तेरा मेरा नमूना ही ॥ १ ॥
तीनों लोक की लछमी मुख सेवी।
मेरे गांठ के बीच तो दाम नाहीं ॥ २ ॥
कहे मानपुरी पूछे मति कहीं।
बिना ऐन रूप और कोई नाहीं ॥ ३ ॥

४९८—पद : असावरील बिलंदी

बाबा किसकी पूजा करना।
यह भव सागर तरना ॥ धु० ॥
येक बिना कछु नजरि न आवे।
कहा छोड़ि कहा धरना ॥ १ ॥
अब कहा करिये कहा न करिये।
किस बिद यह भरना ॥ २ ॥
कहत मानपुरी चुप भली अब।
सबके गहिये चरना ॥ ३ ॥

४९९—पद : गोंड सारंग आदिताल

सुमिरन बिन जनम गमायो रे।
मूरख फिरत पछतायो रे ॥ धु० ॥
काया माया के रंग रचो।
अपनो मर्म न पायो रे ॥ १ ॥
भयो गुलाम अब दुनिया को।
माल मुलख मन भायो रे ॥ २ ॥
कहत मानपुरी प्रेम मगन होय।
राम नाम नहीं गायो रे ॥ ३ ॥

५००—पद : अलया बिलावत अड़ताल

नरदेही आकर मिथ्या जीवन।
धनी नाम धनी को धोक ॥ धु० ॥

समझत ना समझावत डोले ।
हँसते होय के लोक ।। १ ।।
आसा छोड़ निरासा होना ।
तजि दुख हो निरदोख ।। २ ।।
मानपुरी सतगुरु परसादे ।
फिर पावे संतोख ।। ३ ।।

५०१—पद : राग गोड़ सारंग ताल बिलंदी

यो ही जनम जात सिरानो ।
अब कासो कहियो मिथ्या परपंच सत्य मानो ।।धु०।।
सपने को सुख देखी मेरा मन ललचानो ।
प्रीतम श्रीराम नहिं जाने ।। १ ।।
सब कहु को जानो मेरो मुजहि माहिं भुलानो ।
कहा जानी बेद मों बखानो ।। २ ।।
कहत मानपुरी येक भावहि आनो ।
घट घट महराज पहिचानो ।। ३ ।।

५०२—पद : राग यमन कल्यान अड़ताल

साजनवा सावध हो रे ।
सपनो है दिन दो रे ।। धु० ।।
भव सिंधु को मंझधार मों ।
कहे जात बहो रे ।। १ ।।
झूठी काया झूठी माया ।
झूठे तो ही ठगो रे ।। २ ।।
कहत मानपुरी जनम गमायो ।
अपनो घर बिसरो रे ।। ३ ।।

५०३—पद : मधु माधवी आदिताल

हाती घोरे हाँ हाती घोरे ।
माने मन तारे ।।धु०।।

सुख संपत्ति देखी विस्तारी।
जय भो यह सर्व हारी ॥
सपन साँच मानि के ठगो ठगो रे ॥ १ ॥

कनक कामिनी सो प्रीत यतो।
यतो सब अनित।
याको सुख जानि दौरे ॥ २ ॥

मानपुरी कहे साँच।
सोही कहे तीन पाँच।
गुरुमुख आनंद कंद हो रे ॥ ३ ॥

५०४—पद : राग भैरवी

यहे रे! आया बेमान प्यारे लाल ॥धु०॥

माता पिता कु पूजत नाही।
सुसरे कु होत गुलाम लाल ॥ १ ॥

लड़ने कु है लाख हरामी।
लाखन में एक सुजान लाल ॥ २ ॥

मानपुरी के प्रभु तुम गावे।
राखत सबकु मान सारे लाल ॥ ३ ॥

५०५—पद : बिहागड़ा आदिताल

देखा संसार आखर माटी हो ॥ धु० ॥

जो आवे सो रहे न कोई।
यही बात मन थाटी वो ॥ १ ॥

थोरे दिन के जीवन कारण।
मिथ्या आय आटी वो ॥ २ ॥

मानपुरी हरि के गुण गावत।
छाती जम की फाटी हो ॥ ३ ॥

५०६—पद : छाया नाटक ताल

दुःख भयो भवसागर मों ।
अब कासों कहे जिय की करतार ।।धृ०।।
कोटि करे मैं तो पाप प्रभु भवसिंधु ।
सो पापी को बूड़त सो तार ।। १ ।।
तुमसो नहीं साहेब सांचा ।
मुझसो नहीं मूरख मूढ़ गँवार ।। २ ।।
मोहि मिलो सो दुखी हि मिलो ।
न मिलो परदुख निवारनहार ।। ३ ।।

५०७—पद : राग मालश्री आदिताल

आखर जाना बे ।
काहे कु करत गुमाना ।। धृ० ।।
जो आयो सो रहा न कोई ।
कहा रहो व लोक कर हो बखाना ।।१।।
जो जो दिसे सो सो नासे ।
खोजो पद निरबाना ।। २ ।।
कहत मानपुरी तन धन मिथ्या ।
सतगुरु कु पहिचाना ।। ३ ।।

५०८—पद : बिरावर आदिताल

अभागी धन संपति मनमानी ।
साँची बस्त भुलानी ।। धृ० ।।
दुनिया फानी बेद बखानी ।
मिथ्या करम कहानी ।। १ ।।
बहुत टंगाये फिर पछिताये ।
आखिर जात न जानी ।। २ ।।
मानपुरी साईं सब घट माँही ।
बूझत नाहीं नदानी ।। ३ ।।

५०९—पद : राग कल्यान इमन पुरी ताल ध्रुव चंपक

संतन सौ मिलिये रे।
पग छूवत अगम सूझे अंबन ॥ ध्रु० ॥
तन मन प्रान समर्पन कीजे।
ते जे बिज अमृत पीजे ॥ १ ॥
यह संसार सुफल कर लीजे।
हर घट मों हर निरंजन साजे ॥ २ ॥
गुरु के बचन सुनो चित लाई।
हरि कृपा जो नरदेही ॥ ३ ॥
मानपुरी प्रभु निज सुखदाई।
तूट जात सब भवबंधन माहीं ॥ ४ ॥

५१०—पद : बिरावर अदिताल

निंदक दुर्जन की बलिहारी ॥ ध्रु० ॥
आगे पीछे देवे गारी।
निर्मल काया होय हमारी ॥ १ ॥
मल मूत्र धोवे महतारी।
ऐसा निंदक पर उपकारी ॥ २ ॥
राम नाम सो करे न यारी।
भोर भये उठ मांडे रारी ॥ ३ ॥
कहत मानपुरी न माने हारी।
ताकी बात मोहे लागत प्यारी ॥ ४ ॥

५११—पद : आसा आदिताल

जोबन मद गरब न करना नी।
जोबन मद गरब न करना नी ॥ ध्रु० ॥
जोबन ते च्यार देहाड़े।
अंत मिट्टी बीच मिलना नी ॥ १ ॥
ढोल न बाजे बिलली कुड़ियो।
नाल किसी दिन हुलना नी ॥ २ ॥

मानपुरी प्रखेर सुननी कमली।
साहेब को लो डरना नी ॥ ३ ॥

५१२—पद : धनाश्री आदिताल

तोहे कुमौति नहिं डरु रे।
आनंद सुदिन भरु रे ॥ ध्रु० ॥
ना तू जन्मो ना तू मरि है।
भ्रम नामो जिनु परु रे ॥ १ ॥
साँचि कहत हौं रामदुहाई।
हित चित सो मन धरु रे ॥ २ ॥
कहत मानपुरी सब परमेश्वर।
जित तित दरसन करु रे ॥ ३ ॥

५१३—पद : राग बिहागड़ा अड़ताल

दोन दिन के मिजमान पियारे।
कहाँ राजा कहाँ रंक विचारे ॥ ध्रु० ॥
हाटे आये करण सवाये।
मूल गँवाय चले बनजारे ॥ १ ॥
यो संसार रैन को सपनो।
यो करि साधु संत पुकारे ॥ २ ॥
मानपुरी बलि बलि सतगुरु की।
मोसे पतित अनंत उधारे ॥ ३ ॥

५१४—पद : राग काफी आदिताल

आ रे प्राणी इहाँ भवसिंधु तरो रे ॥ ध्रु० ॥
इहाँ है सतगुरु देव मन मुक्त करैया ॥ १ ॥
मेरे पीछे तरो चाहे।
तो काय देया ॥ २ ॥
आगे पीछे धनी ठाड़ो।
दुःख को हरैया ॥ ३ ॥
मानपुरी प्रभु सांचो।
मोछ को करैया ॥ ४ ॥

५१५—पद : राग ललित आदिताल

लाजो ना गँवार ।
नहि करे अपनो विच्यार ।। धृ० ।।

ना रहे राजा ना रहे परजा ।
ना रहेगो संसार ।। १ ।।

अनि फंसो अब कौ करि छूटो ।
बिधि रहे माया मो हजार ।। २ ।।

कहत मानपुरी समज दिवाने ।
गुरु बिन जग अंधियार ।। ३ ।।

५१६—पद : राग बिलावल आदिताल

समज्या देखतरो कौन सगारे ।। धृ० ।।

अन्तकाल को काम न आवे ।
गुरु चरणन सों चित लगा रे ।। १ ।।

छोड़ा साँच झूठा मन भाया ।
सोवत सोवत नाहीं जगा रे ।। २ ।।

कहत मानपुरी कहाँ लग सिखाऊँ ।
ज्यान बूज मर खात दगा रे ।। ३ ।।

५१७—पद : राग ललित आदिताल

लगो निहोरा सुख दुख मिथ्या ज्यानी परा ।।धृ०।।

जैसा तैसा सदा सर्वदा ।
जहाँ तहाँ ब्रह्मण्ड भरा ।। १ ।।

संत समागम सहज स्वरूपी ।
चूको भव झगरा ।। २ ।।

मानपुरी कहे गुरु परसादे ।
सरग नरक बिसरा ।। ३ ।।

५१८—पद : राग यमन कल्यान अड़ताल

मोही डर नाहीं किस ही को।
बोध भयो मन ही को॥ ध्रु०॥
सतगुरु हात धरे सिर मोरे।
कीन्हों आप सारी को॥ १॥
कैपकाल बंदे की धाक।
अमल रहो उस ही को॥ २॥
कहत मानपुरी साँचा साहेब।
राव रंक सब ही को॥ ३॥

५१९—पद : राग ललित

जगत गुसैंया पार पद पाया।
जगत गुसैंया पार पद पाया॥ ध्रु०॥
जग ही मों जग दिसे बिराजे।
किसन चरावत गैंया॥ १॥
अपनो प्रेम देत भक्तन को।
करि करि सीतल छैंया॥ २॥
मानपुरी साईं हर घट माहीं।
बिरहन लेत बलैंया॥ ३॥

५२०—पद : सोरट आदिताल

छांड़ि छांड़ि पिय मगरूरी॥ ध्रु०॥
समज बिचार देख मन माँहीं।
जलि बलि देह होय धूरी॥ १॥
जो लग छोत जात नहीं तन को।
सो लग राम रहे दूरी॥ २॥
आतम ग्यान बिना रे प्राणी।
जो सरिता जल बिन झूरी॥ ३॥
मानपुरी स्वामी अन्तरजामी।
सद्गुरु कृपा होय तो पूरी॥ ४॥

साधु-संगत

५२१—पद : सारंग आदिताल

संगति साधुन की करिये ।
कपटी लोगन सो डरिये ।। ध्रु० ।।
कौन नफा दुरजन के संग ।
हाय हाय करि मरिये ।। १ ।।
बानी मधु रस समुख बोलत ।
सुख सुनि भव तरिये ।। २ ।।
मानपुरी अंतर निरमल होय ।
भेदाभेद बिसरिये ।। ३ ।।

५२२—पद : राग गौरी आदिताल

साधु भवबन्धन नहिं जाने ।
तातें कौन मूरति को को माने ।। ध्रु० ।।
माया मोह न निवृत्ति कारण ।
वेद पुराण बखाने ।। १ ।।
आप देखे ते बस जग मूवा ।
भला बुरा सब कोई ।। २ ।।
कौन ब्रह्म सो न्यारा हुवा ।
पकरि बतावो सोई ।। ३ ।।
जीवनमुक्त सो ही नर कहिये ।
जाकी कल्पना नासी ।। ४ ।।
पाप पुण्य जो लिप्त न होवे ।
तोहि मिले अबिनासी ।। ५ ।।
जब मरिहो तब मुकति पैहो ।
कर्म वासना राखी ।। ६ ।।
कहत मानपुरी गुरु परसादे ।
है काई गवाही साखी ।। ७ ।।

५२३—पद : राग भैरवी आदिताल

संगति साधुन की बन आई ।
क्या कहुँ अजब कमाई ।। ध्रु० ।।
अलम अलम को जप तप साधन ।
सुफल सिद्ध मन भाई ।। १ ।।

पूरन पावन गमता कीनी ।
धुंडत धुंडत पाई ।। २ ।।
कहत मानपुरी सबद हमारा ।
गुरु लीला गाई ।। ३ ।।

५२४—पद : कनड़ा नायकी ताल रूपक

प्राएया शुभ दिन सोई ।
साधु संग धरे ।। ध्रु० ।।
पल पल दरसन पल पल परसन ।
पल पल प्रेम बढ़े ।। १ ।।

पल पल गावे पल पल ध्यावे ।
पल पल प्रेम बढ़े ।। २ ।।
कहत मानपुरी पल पल पूजा ।
तब वैकुन्ठ चढ़े ।। ३ ।।

५२५—पद : राग कानड़ा नायकी ताल रूपक

साधो सोई दिन उत्तम ।
साधु संगति होय ।। ध्रु० ।।
सुदिन दसरा सुदिन दिवाली ।
कुदिन मानो न कोय ।। १ ।।

सुदिन सुमथुरा सुदिन सुकासी ।
सु दिन सु जानो सोय ।। २ ।।
मानपुरी कहे साधु संगे
तन मन डारो धोय ।। ३ ।।

५२६—पद : राग गौरी आदिताल

सेवा संतन की करिये।
करिये करिये भव तरिये ।। धु० ।।

तन मन धन सब एक भाव सो।
गुरु चरनन पर धरिये ।। १ ।।

अपनी मोक्ष मुक्ति के कारण।
लोक लाज परिहरिये ।। २ ।।

मानपुरी नाम निरंजन।
सुमिरि सुमिरि दिन भरिये ।। ३ ।।

५२७—पद : राग सोहनी ताल झूमर

चेत मन करले रामजी सो प्रीत ।। धु० ।।

नर तनु दुर्लभ जनम दियो जाने।
बिसरिये कवन ये रीत ।। १ ।।

शुक सनकादिक आदि ब्रह्मादिक।
नारद गावे गीत ।। २ ।।

मानपुरी परमार्थ कारण।
मानों येहि हित ।। ३ ।।

५२८—पद : राग प्रभात

भज मन राम हि राम।
और छोड़ सब काम ।। धु० ।।

भोर भयो तू अब का सोवे।
ले सतगुरु का नाम ।। १ ।।

बिन हरि भगति सकल जग धंदा।
कोन काम यह नाम ।। २ ।।

मानपुरी प्रभु के गुन गावे।
पावेगो निज धाम ।। ३ ।।

मराठी पद

५२९—पद : सोरट

कांहीं साधन साधी बापा ।
चुकविति विष तापा ॥ ध्रु० ॥

जन्मा येवून साधन हे चौ, भवबन्धन तुम्ही कापा ॥ १ ॥
सन्त समागमीं राहूनी या रे, चुकवि राहील्या पापा ॥ २ ॥
मानपुरीं गुरु नाथ प्रसादे, भेटसी आपण आपा ॥ ३ ॥

५३०—पद : राग रासा आदिताल

तुम्हारी राम भजा निर्वानी रे ।
करिल तो भवहानी रे ॥ ध्रु० ॥

रामस्मरणी गणी का पाहे, धावुनी नेली विमानी रे ॥ १ ॥
दुष्ट दुरात्मी पावन जालो, अपना राम निदानी रे ॥ २ ॥
मानपुरी म्हणताची उघडे, स्व अनुभवामृत खानी रे ॥ ३ ॥

५३१—पद : राग तोडी आदिताल

मन सतगुरु चरणी विनटे ।
तरि च भवभ्रम निवटे ॥ ध्रु० ॥

ज्याचे नाम स्मरणे करुनी, परमानन्द स्वयं प्रगटे ॥ १ ॥
वार पार सदा परिपुरण, पाहता संश्रुति वोहटे ॥ २ ॥
मानपुरी दिनानाथ प्रसादे, भेटे निज सुख गोमटे ॥ ३ ॥

५३२—पद : यमन कल्याण आदिताल

अरे हरि तुजविण कांहीं मी नेना ॥ध्रु०॥

अंतर बाहेर पाहतां दृष्टि, तुजविण आन दिसेना ॥ १ ॥
भक्त सनातन करूनिया रे, वारी सी भव भय सेना ॥ २ ॥
मानपुरी जब जीवन केला, ऐक्य जसे जल फेना ॥ ३ ॥

५३३—पद : नायकी कानडा आदिताल

काहि नाहि ते तु पाहि।
व्यापक ठाइं ठाइं ॥ ध्रु० ॥

दृश्य पदारथ जो जो दिसे, ते तु नाहीं नाहीं ॥ १ ॥
सारासार विचार विवेके, निज गुन समजुनीं राही ॥ २ ॥
मानपुरी म्हणे ब्रह्म सदोदित, होसिल काही वाही ॥ ३ ॥

५३४—पद : राग काफी आदिताल

कान्ह्या नको नको करू।
मजसी फार विनोद ॥ ध्रु० ॥

ऐसे हे कलल्या नित पति सी, होईल तुजसी विरोध ॥ १ ॥
शाहना तु तव दिससी मोठा, काय करू तुज बापा ॥ २ ॥
मानपुरी सहसा न करी, परकामिनी चा शोध ॥ ३ ॥

५३५—पद : सारंग आदिताल

बाई येसि गा खेळे।
ब्रजपति नन्दकुमार ॥ ध्रु० ॥

गोपी गोप समस्त मिळोनी, करती जय जय कार ॥ १ ॥
ज्ञान गुलाल विवेक विचारे, घेऊनि टाकती फार ॥ २ ॥
मानपुरी प्रभु भक्त शिरोमणी, पाहे जगदाधार ॥ ३ ॥

५३६—पद : कामोद आदिताल

महाराजा देवादीदेव गुरु रे।
तुझ्या संगे सुफल संसारु रे ॥ ध्रु० ॥

तु तर महा उदार दीनबंधु, तुझा तरे भवसिंधु रे ॥ १ ॥
माझे हाती दिला ज्ञान दीप, दिसे परात्पर निज रूप ॥ २ ॥
रूप अरूप एक करी जाना, बोले मानपुरी मस्ताना ॥ ३ ॥

५३७—पद : कालिंगड़ा आदिताल

वा माया नहीं हरी बिन काही।
सतगुरु करू या पाई ।। ध्रु० ।।

दाही दिशा हरो भरूनि उर ला, नाम रूप न साईं ।। १ ।।
ज्याचा अनुभव ज्याला कळला, काय करावे त्याही ।। २ ।।

५३८—पद : राग देसाही आदिताल

मनुजा नाहीं यावर की।
सतगुरु हावर की ।। ध्रु० ।।

जो सकळांतरी भरूनि उर ला, तो चि परावर की ।। १ ।।
माया मोह मदादिक सकळ ही, याचे सावर की ।। २ ।।
'मानपुरी' सतगुरु परसादे, होसी रमावर की ।। ३ ।।

५३९—पद : राग बिभास आदिताल

विश्वम्भर नि विश्वंभर उर ला।
संत संग भव पार उतरला ।। ध्रु० ।।

ना कोन्ही आला ना कोन्ही गेला, पार पार ब्रह्मरूप पसरला ।। १ ।।
हरि रस प्याला तन मन धाला, म्हणूनी सुख सहज बिसरला ।। २ ।।
मानपुरी ला अनुभव झाला, श्री गुरुनाथ चहुँदिस भरला ।। ३ ।।

सन्त अनन्तनाथ

जीवन-परिचय
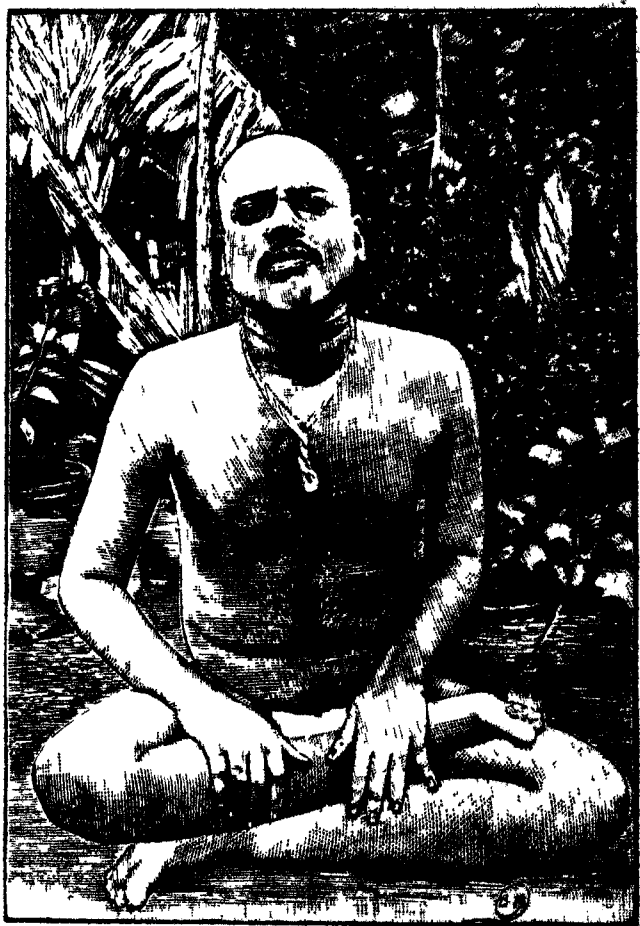
श्री अनन्तनाथ महाराज

सन्त अनन्तनाथ महाराज

'असे दासभावें गतो तो अनंती, अनंती मती मीन लीसे अनंतीं।
अनंतास वाणीं अनंतानु भावें, न से अंत याहो अनंतासि ठावें ।।'

—अनंत

श्री अनन्त[1], अनन्तनाथ, अनन्तसूरि ब्रह्मचारी महाराज अथवा श्री अनन्त महाराज के सन्तसमागम की चर्चा और अर्चा नाते महाड़ से लेकर दक्षिण में हरिहरेश्वर सावन्तवाडी, निपाणी तक होती रही है और बाद में ये पैठण और औरंगाबाद के औरंगपुरे मुहल्ले के नागेश्वर मन्दिर में आकर रहने लगे। इनका जन्म कारवार[2] जिले के किसी ग्राम में हुआ था, पर जिस ब्राह्मणकुल में आपका जन्म हुआ था उस कुल में श्री एकनाथ महाराज की भावभक्ति का अतिशय आदर था। आपके कुल में एकनाथकृत ग्रन्थों का अध्ययन निरंतर होता रहता था। केवल आठ या नौ वर्ष की आयु में आप एकनाथ रचित रुक्मिणी स्वयंवर को हाथ में लेकर घर से निकल गये और गोकरणतीर्थ के समीप ब्रह्मगिरि नामक पर्वत पर आ गये। यहाँ 'योगेश्वर' नाम के एक साधु रहते थे। अनन्तनाथ भी यहीं रहने लगे, पर छह मास तक उनका योगेश्वर महाराज से क्षण भर संवाद न हो सका, पर बाद में उनका उनसे ऐसा संवाद आरम्भ हुआ कि उसकी फलश्रुति उनके गुरु-शिष्य के संबंध में परिणत हो गयी। आपने उन्हीं से एकनाथकृत 'रुक्मिणीस्वयंवर' का इष्ट भावार्थ समझा और योगाभ्यास भी किया। श्री योगेश्वर के देहावसान पर आपने ब्रह्मगिरि छोड़ दिया और कोंकण स्थित 'हरिहरेश्वर' ज्योतिर्लिंग की ओर चले आये। पैठण के श्री जी० कृष्णराव के कथनानुसार श्री अनन्तनाथ ने श्री योगेश्वर के स्वर्गवास के बाद पी० डब्लू० डी० विभाग में कुछ काल तक नौकरी की थी।[3] वहाँ एक दुर्गम मार्ग के एक रास्ते को इन्होंने एक ही रात्रि में

१—'अनन्त' पाया भाव सरीखो, हरिरस प्याला पीवत नीको। 'अनन्तनाथ स्फूर्ति : प्रस्तावना', 'अनन्तनाथ ब्रह्मचारी महाराज' याचे समग्र ग्रन्थ (१२२६) इति श्रीमदनन्तसूरिविरचित श्रीनाथ लीला समाप्त।

२—श्री सदाशिव केशव नेऊरगांवकर: अनन्तमठ चे अल्पचरित्र, पृ० ७

३—श्री अनन्तनाथस्फूर्ति, पृ०५, पोस्टमास्टर जी० कृष्णराव का कथन।

दुरुस्त करा दिया और रात्रि को ही उस स्थान को छोड़कर अन्यत्र चल दिये। वहाँ से चारोंधामों की यात्रा की ओर चल पड़े। साधुसन्तों से भेंट करते-करते ये हरिहरक्षेत्र में आ गये और गाँव से करीब डेढ़ मील दूर सागर के किनारे स्थित महादेव के मन्दिर में रहने लगे। एक रात्रि में आपने ध्यानस्थ अवस्था में देखा कि दरवाजा बाहर से बन्द है पर एकाएक खिड़की से लाठियों, लकड़ियों की मार आप पर पड़ने लगी। जब मन्दिर का आधा भाग लाठियों से भर गया तो उन्हें अपने पास के चाकू की याद आयी। तुरन्त उस चाकू से उन्होंने खिड़की की लकड़ी की सलाखें काट डालीं और वे सागर में कूद पड़े।[1] कहते हैं उसी क्षण से आपको कवित्व की स्फूर्ति हुई और जो कुछ रचना वे करते स्व० बलवन्त राव मास्टर उसकी प्रतिलिपि करते और अनन्तमहाराज की अनुज्ञा से पोस्टमास्टर जी० कृष्णराव के पास पैठण भेज देते थे। एक बार जो लिख दिया गया वही मान्य होता था। सागर के किनारे किनारे उन्होंने पर्यटन किया। कारवार, रामेश्वर, गोकर्ण, महाबलेश्वर, गोमंतक, मलाबार किनारा एवं सावंतवाड़ी आदि स्थानों का भ्रमण किया। इस भ्रमण के साथ इनकी चित्रकला के उत्कर्ष का भी पता लगता है। सन् १८७८ में आप कोलाबा जिले में महाड़ गाँव में आए और यहाँ वीरेश्वर के देवालय में रहे। इस समय आपकी बढ़ी हुई जटाओं को देखकर लोग आपको बैरागी कहने लगे। इस वीरेश्वर के देवालय में आपने कई सुन्दर चित्र बनाये और आपकी ख्याति 'चितारी बुवा' नाम से होने लगी। सन् १८७९ में आप वहाँ से 'नाते' नामक ग्राम में आ बसे। यहीं के श्री रावसाहब भीमराव बापूजी रुईकर को चित्रकला में बड़ी रुचि थी। वे इन्हें अपने रमणीय शान्त एकान्तनिवास 'मले' में ले आये, पर थोड़े ही दिनों के बाद सन् १८८० में चातुर्मास्य के हेतु वे श्री शिवराम बाजीराव देशमुख के घर में रहे। एक साल के बाद वे श्री विनायक बुवा हरदास के घर में रहने लगे, जहाँ रहकर आपने कई ग्रन्थों की रचना की और कई चित्रों का निर्माण किया। सन् १८८२ में अनन्तमहाराज नाते ग्राम छोड़कर नहर महाबलेश्वर में आकर कृष्णाबाई के मन्दिर में रहने लगे। कृष्णाबाई के लिये आपने एक देवी का चित्र बनाया। वहाँ आपसे वेदशास्त्र सम्पन्न मोर दीक्षित और संस्थान के कारकून से भेंट हुई, जिनके

१—कूद परो रे निरमल डोही, जामों अनुभव रेट।
अनंत संती गहिरि जमुना, जसुमति बालक भेंट ।।—पद ३१८

कहने पर अनन्त महाराज ने महाबलेश्वर के मन्दिर में उत्तमोत्तम चित्र बनाये। दो मास रहने के बाद वे पंढरपुर की ओर चल पड़े। रास्ते में नांदगाँव स्थान पर अनन्तनाथ महाराज की श्री बलवन्तराव मास्टर से भेंट हुई और वे उनके घर में दो मास रहे। यहाँ भी उन्होंने दत्तमन्दिर आदि स्थान में कई चित्र बनाये तथा 'कोलूसे' गाँव के महादेव मन्दिर में चले आये। अनन्त महाराज के कई सुन्दर चित्र एकनाथ महाराज की समाधि पर, नेवासे ग्राम स्थित श्री मोहनीराज के मन्दिर में तत्समीप मांजरी ग्राम के मन्दिर में पाये जाते हैं। अनन्त महाराज की एकनाथ महाराज पर परम श्रद्धा थी। वे प्रतिवर्ष फाल्गुन बदी षष्ठी को पैठण आते। वहाँ से वे औरंगाबाद आये और औरंगपुरे मुहल्ले के नागेश्वर मन्दिर में कई वर्ष रहे। इस मन्दिर में आपके द्वारा बनाये गये कई चित्र हैं, जो आज भी भक्तों और दर्शकों के द्वारा देखे जा सकते हैं। महाडवासी उनके भक्त श्री माणिकचंद दामोदर धारिया के पास शाके १८०५ तदनुसार सन् १८८० का बनाया हुआ एक विराट्स्वरूप का सुन्दर चित्र आज भी उपलब्ध है।

एक बार अनन्तनाथ महाराज ने एकनाथ षष्ठी के मुहूर्त पर अपने शिष्यवृन्द को जनार्दन स्वामी के दर्शन कराये थे। अनन्तनाथ महाराज के पदों में एकनाथ के गुरु जनार्दन स्वामी के नाम का भी उल्लेख कई बार मिला है।[१] पर इतना निश्चित है कि अनन्तनाथ गुरु एकनाथ[२] के शिष्य थे। पैठण में आपने निवास किया। पैठण[३] में वे रोज प्रातः चार बजे उठते,

१—अनंत सहजीनाथ जनार्दनि। लेखक मति नवसिदा : श्रीनाथ लीला पृ० ६५।

२—अनंती समर्थ गुरु एकनाथ। सार्थ हरिपाठ : मा० दा० धारिया।
सद्गुरु हा सर्वार्थी। ऐक्य गती येकनाथ श्रीनाथलीला अ० १, १०
अनन्त ही वाणी शांती ची शिराणी। गुरु केला धणी एकनाथ, पृ० २३
अनंत प्रकृति चा भाव। येकनाथ गुरु राव।
भाव तैसा देव। हा अनुभव सर्वासी। ११२। इति पत्र चिरंजीवी।

३—प्रतिष्ठानवासी संत महाभावी। वंदूनि गोसावीसुखी जालो। १।
दिली भेट जधी भुललों। समूह हरलों देहपण। २।
जडलों चरणां मुकलों मरणा। अभंग चरणां ला गलों जी। ३।
अनन्त पणानें नाम उच्चरिले। अनंत जहालें गीत त्यांचे। ४।
सार्थ हरिपाठ : मा० दा० धारिया, प्रा० वसन्त स० जोशी एम०ए०
'रंगिदंग होऊनी बहुगती प्रहुगती प्रती गडी। पावले हिपावतील पैठणांत आ वडी।' गुरु एकनाथाष्टक अ० ४, ५, ५।

गंगास्नान करते तथा पाँच बजे से आठ बजे तक तीन घंटे अभंगों की रचना करते। यहाँ आप 'पैठणी ब्रह्मचारी बुवा' कहलाये।[१] प्रियशिष्य श्री बलवंतराव को वे वसंत-संत[२] कहते थे।

जीवन की दो चमत्कार कथाएँ

पोस्टमास्टर श्री जी० कृष्णराव एक बार पिंपरी गाँव के श्री ब्रह्मानन्द महाराज के आग्रह से पिंपरी आ गए। वहाँ रुक्मिणीस्वयंवर का पारायण चल रहा था। स्वामी ब्रह्मानन्द ने कृष्णराव जी से उन्हें स्वप्न में उनके संन्यास की दीक्षा लेने की घटना सुनाई। वे दिङ्मूढ़ हो गये। पोस्टमास्टर साहब जब पिंपरी से पैठण लौटे तो उन्होंने देखा कि उनकी पत्नी सन्तान सहित स्वर्गवासी हो गईं। संन्यास की दीक्षा और ब्रह्मानन्द जी का शिष्यत्व तो पहले ही ले चुके थे। एक दिन अनन्तनाथ जी के समीप बैठकर वे रुक्मिणीस्वयंवर पढ़ रहे थे। अनन्तनाथ जी अर्थ समझा रहे थे, परन्तु उन्हें ऐसा लग रहा था कि साक्षात् ब्रह्मानन्द जी अर्थ कह रहे हों। वे आश्चर्य कर रहे थे कि यह सब कैसे हो रहा है? समाधिस्थ ब्रह्मानन्द जी अर्थ कैसे समझाने लगे और वे पैठण से पिंपरी[३] कैसे आ पहुँचे? ज्योंही दृष्टि उठा कर देखा तो सुना कि अनन्तनाथ जी उनसे कह रहे थे, मास्टर! मैं और ब्रह्मानन्द भिन्न-भिन्न थोड़े ही हैं। रुक्मिणीस्वयंवर के सोलहवें अध्याय में वर्णित जीव शिव के ऐक्य का भाव जब उन्हें समझाया तो वे अभूतपूर्व अनुभव प्राप्त कर अनुगृहीत हुए।

दूसरा चमत्कार यह कहा जाता है कि नाथ की बहिन का नाम शांताबाई था और उनका पुत्र अबोल था, बोलता ही नहीं था। अनन्तनाथ महाराज ने कहा कि उसे भक्ति के अभंग पढ़ाइये, वह बोलने लगेगा। शीघ्र ही यह देखा गया कि वह अबोल बालक भक्ति के अभंगों को याद कर कर श्री अनन्तनाथ महाराज को सुनाने लगा। कहा जाता है कि बलवन्तराव मास्टर को चारों वेद, छहों शास्त्र मुखोद्गत थे। एकनाथ महाराज ने उन्हें वचन दिया

१—अनन्तनाथस्फूर्ति : प्रस्तावना ५।

२—अनंत आगम वसंत संगम जंगम बुद्धि चकोरी, अनंत संती वसंत पंगती भ्रमर कला घर आतम लोका। अनंतनाथ के पद।

३—सार कथीं मज सायुज्य वाटत साधुजनामधि अनंत हा।
तारि दयानिधि तारि रघूपति या रंक पींपरिं राहत हा। १२३।
श्री अनन्तमहाराजांचे समग्र ग्रंथ भाग १, पृ० ५७।

था कि मैं तेरे घर आऊँगा। कदाचित् इसी आधार पर वसंतसंत श्री बलवन्त-राव महाराज ने अनंत महाराज के चरित्र को 'अनंत सद्गुरु एकनाथ का चरित्र' शीर्षक दिया है और वे उन्हें श्री एकनाथ महाराज का अवतार मानते थे। स्वयं अनंत महाराज के द्वारा श्री एकनाथ विषयक अनेक ग्रन्थों का निर्माण भी इसी भावना को स्पष्ट करता है; यथा : श्रीनाथलीला, श्रीनाथाष्टक, श्रीनाथस्तुति आदि। पैठण के एकनाथ मन्दिर में अनन्त महाराज का एकनाथ का चित्र बनाना भी उनकी एकनाथ के प्रति भक्ति प्रगट करता है।[1] कई भक्तों की यह धारणा है कि श्री एकनाथ महाराज के पौत्र श्री मुक्तेश्वर ही अनन्त महाराज हैं, कारण कि अनन्त महाराज का उल्लेख भी 'श्रीमदनन्त मुक्तेश्वर' नाम से किया जाता है।[2] संभव है कि इनके सरस सुन्दर अभंगों को सुनकर इन्हें 'मुक्तेश्वर का अवतार' कहा जाने लगा हो तथा समकालीनता, समस्थानीयता, समशैली के कारण इन्हें डा० विनयमोहन शर्मा[3] ने संत अनंतनाथ का वंश संबंध एकनाथ से लगाकर उन्हें (नं० ७) अनन्त एकनाथ का साम्प्रदायिक वारिस मान लिया है। संभव है मुक्तेश्वर का संबंध इनसे मेल खाता हो। सन्त अनंतनाथ के पार्थिव शरीर का अन्त नेवासे के पास 'मांजरी' गाँव में हुआ और मांजरी के समीप नेऊरगाँव में सभी संतभक्तों ने गंगातट पर इनके पवित्र पंचभूत शरीर का अग्निदहन संस्कार कर दिया। यहाँ उनकी एक सुन्दर समाधि बना दी गई जहाँ उनकी ज्योति भक्तों की भावना को अब भी प्रकाशित करती रहती है। भक्तों ने इसका उल्लेख इन शब्दों में किया है। उनके एक भक्त ग्यानगिरी बुवा ने लिखा है :

'अष्टादश शत विंशति, मधुमासी सोम शुद्ध षष्ठीला।
पूर्ण ब्रह्म सनातन, अनंत गुरु पावले स्वरूपाला'...ग्यानगिरि बुवा।
'नेवासीं कधिं कोंकणी मठि प्रतिष्ठानांत राहे कदा।
ऐसे वागुनि जो जनातित जनीं देहावसाना करीं।

१—हिन्दी को मराठी सन्तों की देन; पृ० १४५.

२—'मुक्तेश्वर ऐसे नामवाच्य होता। प्रत्योत्तर विता होय बाल
अमरासी आणि कथा रसपानी। पीयुषवासना विटवोनी'; १२.
'कथामृत पानीं अनंत अभंग। रंगवी श्रीरंग मुक्तेश्वरीं'; १४.
'लीलावदे तात, संतान है भुकें। नाथवेद मुखें मुक्तेश्वर'; ६.

३—हिन्दी को मराठी सन्तों की देन, पृ० १४५.

गंगास्नान करते तथा पाँच बजे से आठ बजे तक तीन घंटे अभंगों की रचना करते। यहाँ आप 'पैठणी ब्रह्मचारी बुवा' कहलाये।[१] प्रियशिष्य श्री बलवंतराव को वे वसंत-संत[२] कहते थे।

जीवन की दो चमत्कार कथाएँ

पोस्टमास्टर श्री जी० कृष्णराव एक बार पिंपरी गाँव के श्री ब्रह्मानन्द महाराज के आग्रह से पिंपरी आ गए। वहाँ रुक्मिणीस्वयंवर का पारायण चल रहा था। स्वामी ब्रह्मानन्द ने कृष्णराव जी से उन्हें स्वप्न में उनके संन्यास की दीक्षा लेने की घटना सुनाई। वे दिङ्मूढ़ हो गये। पोस्टमास्टर साहब जब पिंपरी से पैठण लौटे तो उन्होंने देखा कि उनकी पत्नी सन्तान सहित स्वर्गवासी हो गईं। संन्यास की दीक्षा और ब्रह्मानन्द जी का शिष्यत्व तो पहले ही ले चुके थे। एक दिन अनन्तनाथ जी के समीप बैठकर वे रुक्मिणीस्वयंवर पढ़ रहे थे। अनन्तनाथ जी अर्थ समझा रहे थे, परन्तु उन्हें ऐसा लग रहा था कि साक्षात् ब्रह्मानन्द जी अर्थ कह रहे हों। वे आश्चर्य कर रहे थे कि यह सब कैसे हो रहा है? समाधिस्थ ब्रह्मानन्द जी अर्थ कैसे समझाने लगे और वे पैठण से पिंपरी[३] कैसे आ पहुँचे? ज्योंही दृष्टि उठा कर देखा तो सुना कि अनन्तनाथ जी उनसे कह रहे थे, मास्टर! मैं और ब्रह्मानन्द भिन्न-भिन्न थोड़े ही हैं। रुक्मिणीस्वयंवर के सोलहवें अध्याय में वर्णित जीव शिव के ऐक्य का भाव जब उन्हें समझाया तो वे अभूतपूर्व अनुभव प्राप्त कर अनुगृहीत हुए।

दूसरा चमत्कार यह कहा जाता है कि नाथ की बहिन का नाम शांता-बाई था और उनका पुत्र अबोल था, बोलता ही नहीं था। अनन्तनाथ महाराज ने कहा कि उसे भक्ति के अभंग पढ़ाइये, वह बोलने लगेगा। शीघ्र ही यह देखा गया कि वह अबोल बालक भक्ति के अभंगों को याद कर कर श्री अनन्त-नाथ महाराज को सुनाने लगा। कहा जाता है कि बलवन्तराव मास्टर को चारों वेद, छहों शास्त्र मुखोद्गत थे। एकनाथ महाराज ने उन्हें वचन दिया

१—अनन्तनाथस्फूर्ति : प्रस्तावना ५।

२—अनंत आगम वसंत संगम जंगम बुद्धि चकोरी, अनंत संती वसंत पंगती अमर कला घर आतम लोका। अनंतनाथ के पद।

३—सार कथीं मज सायुज्य वाटत साधुजनामधि अनंत हा।
तारि दयानिधि तारि रघूपति या रंक पींपरि राहत हा। १२३।
श्री अनन्तमहाराजांचे समग्र ग्रंथ भाग १, पृ० ५७।

था कि मैं तेरे घर आऊँगा। कदाचित् इसी आधार पर वसंतसंत श्री बलवन्त-राव महाराज ने अनंत महाराज के चरित्र को 'अनंत सद्गुरु एकनाथ का चरित्र' शीर्षक दिया है और वे उन्हें श्री एकनाथ महाराज का अवतार मानते थे। स्वयं अनंत महाराज के द्वारा श्री एकनाथ विषयक अनेक ग्रन्थों का निर्माण भी इसी भावना को स्पष्ट करता है; यथा: श्रीनाथलीला, श्रीनाथाष्टक, श्रीनाथस्तुति आदि। पैठण के एकनाथ मन्दिर में अनन्त महाराज का एकनाथ का चित्र बनाना भी उनकी एकनाथ के प्रति भक्ति प्रगट करता है।[१] कई भक्तों की यह धारणा है कि श्री एकनाथ महाराज के पौत्र श्री मुक्तेश्वर ही अनन्त महाराज हैं, कारण कि अनन्त महाराज का उल्लेख भी 'श्रीमदनन्त मुक्तेश्वर' नाम से किया जाता है।[२] संभव है कि इनके सरस सुन्दर अभंगों को सुनकर इन्हें 'मुक्तेश्वर का अवतार' कहा जाने लगा हो तथा समकालीनता, समस्थानीयता, समशैली के कारण इन्हें डा० विनयमोहन शर्मा[३] ने संत अनंतनाथ का वंश संबंध एकनाथ से लगाकर उन्हें (नं० ७) अनन्त एकनाथ का साम्प्रदायिक वारिस मान लिया है। संभव है मुक्तेश्वर का संबंध इनसे मेल खाता हो। सन्त अनंतनाथ के पार्थिव शरीर का अन्त नेवासे के पास 'मांजरी' गाँव में हुआ और मांजरी के समीप नेऊरगाँव में सभी संतभक्तों ने गंगातट पर इनके पवित्र पंचभूत शरीर का अग्निदहन संस्कार कर दिया। यहाँ उनकी एक सुन्दर समाधि बना दी गई जहाँ उनकी ज्योति भक्तों की भावना को अब भी प्रकाशित करती रहती है। भक्तों ने इसका उल्लेख इन शब्दों में किया है। उनके एक भक्त ग्यानगिरी बुवा ने लिखा है :

'अष्टादश शत विंशति, मधुमासी सोम शुद्ध षष्ठीला।
पूर्ण ब्रह्म सनातन, अनंत गुरु पावले स्वरूपाला'...ग्यानगिरि बुवा।
'नेवासीं कधिं कोंकणी मठिं प्रतिष्ठानांत राहे कदा।
ऐसे वागुनि जो जनातित जनीं देहावसाना करीं।

१—हिन्दी को मराठी सन्तों की देन; पृ० १४५.

२—'मुक्तेश्वर ऐसे नामवाच्य होता। प्रत्योत्तर विता होय बाल
अमरासी आणि कथा रसपानी। पीयुषवासना विटवोनी'; १२.
'कथामृत पानीं अनंत अभंग। रंगवी श्रीरंग मुक्तेश्वरीं'; १४.
'लीलावदे तात, संतान है भुकें। नाथवेद मुखें मुक्तेश्वर'; ६.

३—हिन्दी को मराठी सन्तों की देन, पृ० १४५.

षष्ठी सोमदिनीं सुशुद्ध प्रथमी मासांत त्या मांजरी ।

अठ्राशेंविस् अब्दि शांत समयीं गा माधवा सत्पदा[१] ।।८।।

शाके १८२० में अपनी आयु के ६३वें वर्ष में अनन्त महाराज अनन्त में विलीन हो गये । इस पुण्यात्मा की पुण्यतिथि आज भी प्रतिवर्ष पैठण, नेऊर गांव, मांजरी नेवासे, नातें, निपानी आदि स्थलों में बड़े उत्साह और श्रद्धा से मनाई जाती है । एक भक्त के अनुसार शाके संवत् १८२० तदनुसार सन् १८६८ में उनकी आयु ६३ वर्ष की बतलाई जाती है । यदि यह सत्य है तो इनका जन्म शाके संवत् १७५७ तदनुसार सन् १८३५ में होना चाहिये ।[२]

अनन्तनाथ के सन्तसमागम का आनन्द लेने वालों में श्री बलवन्त व मास्टर 'वसंत संत', श्री जी० कृष्णराव, श्री ग्यानगीरबुवा, श्री विट्ठल मोतीराम धारिया, धारप, उपाध्ये आदि मंडली प्रमुख थी । आज भी उस मंडली में श्री माणिकचंद दामोदर धारिया, पु० वि० धारिया, श्री शहा आदि जीवित हैं, जो आज भी नित्यप्रति अनन्त महाराज के भक्तिपूर्ण अभंगो का आनन्द लेते हैं । गङ्गापुर के वकील श्री बापूराव वा बले के पास अनन्तमहाराज का पद्य में लिखा पत्र है, जिसमें लिखा है :-

'अजुनिया कसी उरली अंदेशा । भेटा याचि आशा देह भावें

देखणा अंतरी सर्वदा भेटतो, मजसी पटतो भाव चित्तीं ।।

तो ची जासी तेथें संगीत तु जा वसे, परी न ची दिसे कसातरी,

कसातरी छंद अनन्त भेटी चा । कायिक वेठी चा भास लागी ।

इनके कुछ पद मलाबारी भाषा में भी लिखे हुए हैं, जो 'नाते' ग्राम के श्री विठुभाई के घर संगृहीत हैं,

ग्रन्थ :

१—सीतास्वयंवर

२—बोधरूप (भुजङ्गप्रयातवृत्त)

३—दसरथवार्धक्यविचार

१—कै. म. रा. फडके मास्तर पैठण विरचित सद्गुरु अनंत म० अष्टक पृ० ७० ।

२—शाके १८२० चैत्र शुद्ध ६ रात्रौ ६ वाजतां मांजरी मुक्कामी अदर्शन म्हणजे अभाव झाला, येऊन नेऊरगांव येथें शंकराचें मंदिरानजीक पश्चिम बाजू जे जागेत देह दहनविधिझाला ।

४—राधाविलास
५—सुभद्राहरण
६—शुकरंभा संवाद
७—सुदामाचरित्र
८—चिरंजीवपत्र
९—मनोबोध
१०—दधिमंथन
११—राधाप्रीति
१२—काकभुशुंडीचरित्र

अनन्त महाराज ने अपने जीवनकाल में ४०,००० छन्दों से अधिक रचना की है। १५,००० से अधिक श्लोक, १६,००० से अधिक अभंग तथा ३,००० पद और कई दोहे भी लिखे हैं। आपकी सारी रचनाएं प्रेम, भक्ति, ज्ञान और वैराग्य से ओतप्रोत हैं, रचनाओं की भाषा सरल सरस सुबोध और सुलभ हैं। कहीं-कहीं संत कवियों की परम्परागत विशेषतायुक्त प्रांजल भाषा तथा श्लेष-यमक आदि अलंकारों को समाविष्ट करने वाली शैली भी प्रयुक्त हुई है, विशेष देखिये[1]।

१—डा० विनयमोहन शर्मा : हिन्दी को मराठी सन्तों की देन, पृ० १४५, १४७।

१—सतगुरु

[१]

सतगुरु साहेब सन्त कृपाल, आतम बोध नृपाल ।
प्रत्यावृत्ती अनुभव-दल सो, हटवायो सब काल ।।
सत्ता जिनकी जागत जोती, दरसन गुन अकाल ।
अनंत अवनी सम प्रभुताई, धाई मानस चाल ।।

[२]

बंदूँ सतगुरु आतम भाव ।
दीनपनो से सुभाव करियो, पायो निरमल ठाव ।।
निमि दिन भजनों में जिय जीयो, बिसर्‍यो दुरमद भाव ।
अनंत सुगमो नित निरभय की, निगम प्रेम जड़ाव ।।

[३]

सतगुरु बिन गति नहीं, स्थिर की सब ही भवती चर की ।।
निरधार नहीं अभिमति देहीं, विषमाकृति नर की ।।
काम, मोह, मद माहीं निसिदिन, दुरदम नर तर की ।।
भेद भूतों में संकल्प सबी गति, नाहिं बनी थर की ।।
भ्रांति सब ही काल की लीला, जाणीव स्थिर चर की ।।
सतसंगति से सद् चिद् विलसे, ताह गती अन्तर की ।।
अंतर माहीं अनंत हरषित, तन है हरिहर की ।।

[४]

सतगुरु के पग लग रहियो, निज रस भर भर पीयो ।
मन तुम मोरा थोर मत कीजो, भज आतम जीयो ।।
सूरज चन्द्रमा पवन बिहारी, जनम सुफल करियो ।
समता भावै अनंत सदनीं, भेद रहा हरियो ।।

[५]

सतगुरु ने लिखवाया, निगम बात मुनवाया।
तब सों भावत हा जग माही, सब ही गुन भव भाया।।
अब नहिं दूजा भाव मनोका, राम नाम बिन बिसवासा।
अनंत सहजी भजन प्रतापे, दुरमद पावत नासा।।

[६]

सतगुरु घर का भयउ गुलाम, तब से नेह सलाम।
येलम अलम का कलम कर डार्‌यो, बल मद अगुन हराम।।
जागत जंगम जागरती त्यज पाय मनोर्थ अकाम।
अनंत अधिपत असूर अलखित, अगम अनुभव अराम।।

[७]

कोई मनोका मारा मिटे, कोटिन मों येक जति योगी।।
बालपनो में रसाल गावै, भगवंत गुन गति अनुरागी।।
अनुताप मती जगहित कारज, जनत नहिं सुखधन भागी।।
जनन मरन को धोका लागे, सदगद बाढ़े संजोगी।।
बिखय अराजी साधन चतुष्ठय, भयउं है आगम जनमांगी।।
सतगुरु पगमो अनंत निष्ठा लगरहि निरमल सम रागी।।
येक भई भगती भाव संगती, येक जनार्दन निज भोगी।।

[८]

कोई बिरला बीर बलधोरी समर जगावे निरवानी।
लाख मों बाबा कोटिमो भाव जिनो का सम मानी।।
आदी व्याधी ताप अबादी अनुभव साछप कर जानी।
शांती सुशीला परा अवनी अमलान न की मृदु बानी।।
राजी सबके सगुन समाजी साजी कारज कर मानी।
ना जित हारी भगत मुरारी हारि तमा कृति अभिमानी।।
पड़री गुजरी जठरी पधरी बिघरी आशा भव मानी।
अनंत बिश्रम सतगुरु भजनी बिजनी हरि जे हयरानी।।

[९]

भज मन मोरा हरदम रामा, त्यज सब भाई दुरमद कामा।
काय कु मरते लोभ मोह् मों, सुख नहिं पल येक संसृति भर मों ।।
जैसी गगनीं बादल छाया तैसी संपत बिपत माया।
अनंत आँखन राम रमैय्या सतगुरु सामी किरपा कर दिया ।।

[१०]

कौन नहीं भीतर अपना, जग मतलब सपना।
अंतर बाहिर आतम येकी, काय कु भेदपना ।।
नर तनु पाया बहु भागन को, निसि दिनि हरि जपना।
अनंत सगता सतगुरु किरपा, मानत दीनपना ।।

[११]

चरनन की किरपा यदुराज, भयो मो पर हरि लाज।
नाम निशानी चित्त बिहारी, हरेउँ लौकिक काज ।।
भाव भगति सो पार उतार्यो, अनुभव बोध समाज।
अनंत साधन सहज बिनोदी गावत सतगुरु साज ।।

[१२]

भटकत कायकु फिरत देस, नहिं सतगुरु उपदेस।
अंगि न बाणे शांती कबु ही स्वातम साधन लेस ।।
भेद बढ़ावे लोभ कि मारे, कीन्हो ढोंग दरेस।
जाको मान मों ताप मिटाना, अनंत अनुभव वेस ।।

[१३]

निजबासर बोध तुमारो, भव पार उतारो।
गति माया रैन अंधियारी, मो नहिं आन अंधारी ।।
सतगुरु स्वामी अंतरजामी भाव किन्ही निरधारी।
किरपा तोरी अनंत आगर आगम ताप निवारो ।।

[१४]

पावन कीन्हीं पामर भावना, डर भेद अभाव ।
आदर हरिजी सादर पनसो, भादर मानव ठाव ।।
नाम प्रतापा पूरन कामा अनाम भई दिल भांव ।
अनंत घट घट खट हट भट ही आतम सतगुरु राव ।।

[१५]

कौन न मीता है मन जगमों ।
जोग जुगत से दिन काटो, भाव रखो गुरु पगमों ।।
रहा बिकट की रैन अंधियारी, जागरती रज लगमों ।
सपन सुसंपति तुर्या साछी, परमातम सुगमों ।।
सात्विक तामस राजस गुनकी लीला जगनगमों ।
आप पर भास भेद भरमना छोड़ो जी मनमों ।।
अनंत परभा निज बासर की अनुभव आगम मों ।
सतगुरु किरपा पायो तबसे निज गति को उगमों ।।

[१६]

इज्जत रखो अभय करो, मान सतगुरु हरो भान ।
भव भरमावे अनेक भावे, बिकट है घनी रान ।।
कोई नहीं तुम बिन मैं जानत, संग चले निरबान ।
अनंत तृषिता निरमल करिजो निजजल सीतल पान ।।

[१७]

पावन करियो दास सकाम भाव दिजो निज धाम ।
सतगुरु राजा घट घट तूही व्यापक आतम राम ।।
पतित उधारन दीन दयाल धन साधन सुगम नाम ।
अनंत सागर भव उतरायो भगती भाव अराम ।।

[१८]

मैं जनमकी हरिपग बासी, बनी हूँ सतगुरु बचनीं दासी ।
घट घट सांयी मो मन भाई, पुण्य पाप अबिनासी ।।

घड़ी पल भर नहिं हरिबिन रहूँ मैं, हरदम सो विलासी ।
अनंत भाती हकीम आतम, सहज भोग अबिनासी ।।

[१६]

साधो नहिं है घर घरमों, कोई बिरलाजी लाखनमों ।।
रहा जिनोकी सहजयनो की अभेद भावै मनमों ।।
जाके आंखन जागे जोती परकास मती तनमों ।।
गुन अँधियारी रैन हरायी आपी देखत जगमों ।।
अनंत भरमो हरास कीन्हो दीन्हों गुरुने सुगमों ।।

[२०]

करमगति है मन अनिवार, मन मन ऊपर सवार ।।
कहाँ करि ग्यान कहाँ करिध्यान कहाँ बहुत विकार ।।
देखे परकू नहिं अपनेकू, नहिं एकहि निरधार ।।
भेदपनो के सब ही घटमों बहुबिध के परकार ।।
अनंत आतम जानै सोही सतगुरु को अवतार ।।

[२१]

कौन करी भगती उपदेस जिय भरमत परदेस
मनके मारे घोर जगावत भूत दया नहिं लेस
अनेक मारग अभिमानी के तनके ऊपर भेस
भेद हरे नहिं जनन मरग को अंतवरी संदेस
अनन्त दिन गति सतगुरु पगमों पायो रज कन लेस

[२२]

कायकु जोगी धुन्द मनों में, जोग समाधी गम भरमो ।
जाग्रत भावो रज अभिमानी, भास बन्यो सब जग मों ।।
बहुविध साधन करकर मरना, जान कर रहो सुजन मों ।।
संत संगति लग रहिनारे अनुभव आवे बातन मों ।।

ग्यान सुरोजा म्यान कर राखो, भाखो निसि दिन घट घट मों ।
आतम व्यापक सबाह्य पूरन, अनाम अपार पूरन मों ।।
जैसो दरयाव भरो है जल सों, नास भास क्रम लहरिन को ।
अनन्त पनमों सब जग भावै, सुख है सतगुरु चरन मो ।।

[२३]

भगती से उतरे भव पार, जुग जुग वोहि अधार ।
भगतो नौका भव जल माही, सतगुरु बोध उतार ।।
लीन मति होके संत समागम, करले मन निरधार ।
अनन्त प्रेमा अखंड भावै गुनातीत सार ।।

[२४]

मेरी अरजी कौन सुनौयो, सतगुरु बिन व्हां जग माहीं ।
कबन बतावे पीतम प्यारा दिल रमजावे दिल मोंहीं ।।
मन मोहन बिन भव मोहन कू कौन छुड़ावेगो समझाई ।
सांयीं अनन्त निगम रमापत भावभगतिसो पार लगाई ।।

[२५]

मन मेरा जी गुरुपदि राजी । चढ़ रहि धुन्दी प्रेम समाजी ।।
चारी खानी आतम निशानी । देखन आवत गुन गति रजनी ।।
साधन जानत और न दूजा । हरि भजनीं में ही रह्यो गमजा ।।
अनन्त मानो संत समानी । शाश्वत भावो मों हर जानी ।।

[२६]

सब में मिल्के सब से न्यारो । सतगुरु सोहि हमारो ।।
निरमल अन्तर अंत न जाको । सबके लागे प्यारो ।।
जैसा तैसो देखन आवे । बहुबिध बहुमत वारो ।।
कीन्ह उजारो सबद पसारो । गुण अंधियारो ।।
अनन्त धरती मत धरणारी । बेद बिनोदक हरि हारी ।।

[२७]

सतगुरु ग्यान झड़ी बरखात, अजर लाग रही मैं भीजत बात गजर ।।
स्वानन्दी की भूमि रिजावे, ताप मिटावे देंहि काम सुभर ।।
बहुविध अनुभव बिरछ बने हैं व्हां मों मन्दिर मति राम अधर ।।
न दर अनन्ती कदर न भावै अमर गुरु के गावै राग सदर ।।

[२८]

बिन बीत भयो भोर हरी घोर नुन्यो भवरी ।।
रहा बतलाई समनय बारी, बुद्धि भयी अजरी ।।
तनकी प्यारी मन माहीं सो सोहत प्रेम जरी ।।
अनन्त सतगुरु घट घट माही बन रहियो निरधारी ।।

[२९]

सतगुरु के दरबार मों मैं हूँ अरजदार ।
तकसीर मोरी माफ कीजे, सब दुरबल हैं निराधार ।।
जानत नहि कछू मूढ़ मति, मैं तुम बिन और विचार ।
पतित पावन अनन्त बिरामा, हरवा दे भवकार ।।

[३०]

तखसीर करो मोरी माफ, मिटवा दे तन ताप ।
सतगुरु नाथ अनाथ मैं हूँ, पकड़ लीजो मम हात ।।
भवसागर सो पार लगावो, करि जो भाव सनाथ ।
अनन्त करुणाकर दीनबन्धु, न करी भवीं मति घात ।।

[३१]

सुख के कारन डरेस फकीरी, फिकीर दिल की हरवाई ।।
जिकीर जिनकी कहिमों नहि है, बलिहारी हूँ इह पायीं ।।
सहज पनोका लक्ष विवेका, पक्ष समाहै चतुराई ।।
स्वानन्दी को अमरत बानी, घरन अघोर की बरसाई ।।

देना लेना कछु नहीं माना, बाना निज हित सुखदायी ।।
सतगुरु महिमा कहलग बरनूं, सो बरन न जायी ।।
लीन पनोकी रहा बढ़ाई स्वातम अनुभव गायी ।।
अनन्त भव मों नव लागव को देखत पूरन समताई ।।

[३२]

निरगुन कौन भयो भव मो हरि, सुमरन बिन,
जोग जुगत सो नाहक हंस गयो ।
मत अभिमानी भेद बिवादी, स्थुल मति भाव जियो ।
अनन्त जानो सब मो राजी, सो गुरु सांच कियो ।

[३३]

मो मन धोई, भाई हराई सांयीं खातर तन की भराई ।
नहिं हयरानी भव दिल मानी मानत घट घट आतम समानी ।
रानि न राजा न सेट न रंका सतगुरु बचनें मिटउं संका ।
स्वातम भाती नीज प्रभाती गुन त्रैन की निकसी राती ।
अनन्त साखी बेद पुरानीं जग बाहत है मोह पुरानी ।

[३४]

सब घट माहीं व्यापक सांयीं, नित्य निरंजन अलख गुसांई ।।
बाहिर भीतर पूरन सोही, कहुँ कहुँ उनकी अन्य कमाई ।।
बोलत चालत देखत सूनत, एक अनेकी है चतुराई ।।
जागत सोवत भोगहि भोगत, काल गति की जिह न मनाई ।।
अनन्त स्वामी सतगुरु पगमों, समता पाई रजकण राई ।।

[३५ [

सुजन मति को निरमल वास । आतम गम परकास ।।
गुनरैन को मान हरायो । भयउ मति तम नास ।।
कारन कारज करम भरम नहिं । अक्षय ठोर निवास ।।
अनन्त न मिल्यो सतगुरु सांयी । लागी है मन आस ।।

[३६]

सुन्दर देह बनी माधव की।
निरजर होजा संतन संगे, तज ममता तनकी॥
दास दासी धरि सेज कामिनी, सबही संपत की।
कोन न आवे अंत काल मों, सिरीं गदा जम की॥
आतक ग्यान बिन शांती न आवै, साखी बेदन की।
गुरु बिन मारग कौन बतावे, भाव भगति समकी॥
अनन्त जम को भाव जानके, प्रीती सतगुरु की।
येक जनार्दन चरनीं लागे, चमक मिटी मद की॥

[३७]

तुम बिन न दुःख निवारन बारो, जगमों सांवरिया॥
तिर तापन सो बनचर घेर्‌यो मोह लोभ मद भरमाया॥
जनन मरन को भावै मनमो, दरद भूल्यो जिय जग ठाया॥
खेल तिहारो अपार बनो है गुन भूल सो भ्रम माया॥
त्रिपुटी बिहार नासिवन्त सो अन्त न इनको किन पाया॥
तरन पाय सद् गुरुराज बिना न चाहैं जानो जदुराया॥
निगम अगोचर आतम रामा मति दै अनंत गीत गाया॥

२—सन्त-महिमा

[३८]

सुन सुन संतों बैन तुमारा, धन धन जगमो मन होत हमारा।
बोध तुमारो अजरामर को भावत, मोको सुख कर नीको॥
भगती गावत प्रेम जगावत, मन समझावत आवत जावत।

[३६]

साती संतन अन्त हटो माया पथ कटो।
सगुन समाजी भयउं न राजी रागीं रंग लुटो।
सत सुमरन से काल गमावौ बाताभंग रटौ।
आतम सिद्धी अनन्त बुद्धी समताकार पटौ।

[४०]

सत सङ्गत से पार परो भव मद सबहिं झरी।
जग जीवन मो उगमो निगमो अभेद भाव भरो।।
निरमल गावो मुख से नामा अभिमति मान हरो।
सहजपनो मों समतानतों सद् चिद् प्रेम झरो।।

[४१]

साधु की संगत मिलवाई नरतन माहीं किन्हि करपाई।
रामधुनी लगी गुन अगुनी भव भरमो सब जायी।।
जाको भावै सब घट समता दुरममता हरवाई।
ताप मिटा जो हाट हटाजो अनन्त भाव कमाई।।

[४२]

संतो संतोष संग अभंग, अंतो अंत असंग।
अमूरत आतम अनुभव आगम रंगो रंग तरंग।।
मांगत मति को मान समारथ पंखउं गत नित तलंग।
अनन्त कलिंदन लीन दलीन मलि भास करहु भंग।।

[४३]

संतो दरसन दे निज सार कहउं नित निरधार।
जा भव माहीं अनेक मारग गुन रहा अनिवार।।
बोध तिहारो समपन वारो नित्यानित्य विचार।
अनन्त पायो प्रेम सुभावो भवगति को परिहार।।

[४४]

बिघर भयो घर सुगम गमोधर उजर परो अब अजर पनोका।
नजर विरागिन कदर अबादित अदर बनो नय सुभर मनोका।।
करम न जानत धरम अबादित चरम उपाधित भरम जनोका।
नाम भरोसा अनन्त पनका सुसंत संगम तारन नौका।।

[४५]

निसिवासर मो जिन परभात कर सोबत धर हात।
भरम उड़ादे जनन मरन को नहिं तेरो तन घात ।।
अजर अमर पद आतम भावे भावै मन भजनांत।
अनंत साछी संत समागम अचल पनों समरांत ।।

[४६]

जगत गति दुरमद झरनी।
मानव देहीं खोज करोजी अपनो सतगुरु चरनी ।।
दो दिन की है तन जिनगानी व्हांमो निज तरनी।
संतन संगै प्रापती पावै लीनपना धरनी ।।
अभेद होके खेद हरवायो मेल बड़ो करनी।
भाव भगति को ठौर बिराजे अनुभव आदरनी ।।
अपूर्व शांति है समता हीं सहजपनों से परनी।
अनन्त विद्या अविद्या नासक स्वातम कला अरनी ।।

[४७]

भाग्य बड़ो है मोरा। संत समागम जोरा।
जित उत देखूं रस निज चाखूं। बिसरूं बारा सोरा ।।
कहने कु मैं हूँ रूप नहिं रंगा। गंगा सागर सारा।
अनंत मीठा जल मति लीला। आतम निधि संग बिचारा ।।

[४८]

कायकु भेद किजो मनमो। नाना पथसो भरम बढ़ो।
गुन कला तनमों ।।
अंतर आतम व्यापक जगती। येकपनो सबमों।
नाम रूपातीत अलख निरंजन भावो उनमनमों ।।
माया जाल मति तम अंधियारी। मोह अभावनमों।
विषय बिकारो लोभ के कारन अनेकता इनमों ।।

पूरन कब नहिं भोग भोग के जम डर अंतनमों।
अनंत संतन संगे रहिजो मनमौजी अनमों॥

[४९]

सकल कमाई नर देहन की।
जनम मरन का खोज करोजी ओढ़ त्यजो मनकी॥
मोह लोभ मद चार खानिमों गति है मूढ़न की।
काल दरारा सबमों घेरो कर झटका जिनकी॥
आतम ग्यान न पायो प्रानी। अंतवरी प्रीत तनकी।
कारन ज्याको जानत नाहीं जाग्रति है रज की॥
संतन संगा हिल मिल रहियो वाता मतलब की।
अनंत मिलन भजन भरोसा साखी अनुभव की॥

[५०]

समचरनो की समताई, सज्जन किरपे हुँ पायी।
सद्‌चिद् माहीं अनुभव सोही, स्वातम है सुखदायी॥
बिरला जाने बात हमारी, भवमों जिनकी भर पायी।
अनंत कामीं बिहारी निज, निरमल नीत भई॥

[५१]

हाल मस्त के बाल शिरोपर काल गति कछु नहिं जाने।
जानत सबही माया भ्रमना, तन लोभी जिय लग मानें॥
महिमा नेणे आगम निगम, उगमो अपना अवसाने।
नाहक खोयो मानवपन को, चेरो अभिमति मस्ताने॥
बिभूत चढ़ाके जुगत जगायो, मुगती खातर मन माने।
कैसी पावै स्वातम सिद्धी, सत संगत बिन हयराने॥
साधू होके लीनता पायी, पूर्ण कमायी इह मै जाने।
अनंत गावै रसाल बानी अरामृत के अवसाने॥

[५२]

बात पछानी बिरला कोई, साधन संगत जिनने पायी।
रहा संतों की महा बनी है, जा घट माहीं समताई॥

नाम रूप बिन रंग संग बिन, संगत सज्जन सुखदाई।
सहज समाजी अखंड मुद्रा, संकल्प मति हरवाई ॥
सत घन बरसत नित्य निरंतर निरमोही मन निकराई।
सब घटवासी एक अनेकी, प्रगट भयउं हरि पतिलाई ॥
अंतर बाहिर जंतर माफक, हेर रह्यो चतुराई।
अनंत निरगुन सगुनोपन के, साची पूरन कमाई ॥

[५३]

परम पदी मति मान मनोका भरम नहीं गति भाव जगोका।
सब ही देखे राग सुहावे नीगम पनि नित व्हाँ नहि धोका ॥
घट घट माही सदचिद सोही करम जथी कम भोग गुनोका।
अनंत संती बसंत पंगती अमर कला घर आतम लोका ॥

[५४]

देख नजर से निज निरबान त्यजरे मत हयरान।
सब है माया बादल छाया शास्तर बेद पुरान ॥
संतन संपत तन जिनगानी गूनमता अवसान।
काम बुखारी सब परिहारी गावौ श्री भगवान ॥
अनंत शांती परम प्रभाती संत सुबोधित मान ॥

[५५]

जागत सोवत सो मैं जानत, सपन सुहावत सोही मानत।
तीनों पन सो है मैं न्यारो, आप आपनो माहीं प्यारो ॥
ग्यान ध्यान की मों नहिं आसा, मो मैं है सब जग परकासा।
अजरामर को मों नहिं जानत, अनंत मंगल अच्युत गावत ॥
लाग्यो मीठो नेय पिया को, फीको भावत भाव जिया को।
दियो सुबोध सतगुरु सोही, करत जगत सो गति निरमोही ॥
निज हितकारी जाकी बानी, सुन के आसा है त्यजि जानी।
अनंत वारी जाऊँ पग पर, संत सुभाव महा है सब पर ॥

[५६]

जाने हैं बहु दूर, मारग मिलै न सत संगति बिन।
लगी मति मो दूर दूर ।।
बिकट निपट की कठिन कमाई, जाको लच्छ चवूर।
अनंत, पराक्रम, हरउं, सकल ही, भाव गति भरपूर ।।

[५७]

नहि बैसो देह बनेगो नेह धरौ हरि को रे।
काम कु त्यज दे आतम चीन्हो समजाबो मन मन को रे ।।
मोहजाल मो नजर न आवै जगजीवन जिय को रे।
अनंत माने संत समागम पूरन सिंधु सम को रे ।।

३—कृष्णभक्ति

[५८]

गावत कान्हा कानन मो है, मो मन मोहै जन सब सोवै।
नाद मचावत तीन लोक मों, अवलोकन को आवत भव मों ।।
संतन मो सुद है निशि दिन मो, आदि अंत नहि जिनके दिल मों।
जनम सुधार्यो मानवपन को, अनंत सांवरो अजपा पन को ।।

[५९]

कोई देखे लाला नंद जी को बहुरंगी।
ब्रज पर बारे सान सकल शिशु लै चलहू सब संगी ।।
गोकुल गया नवनीत चोर कबहूँ को सब संगी ।।
बहु ठौर देख्यो श्रुत दृश्य सरिसी जग मों मैं जग संगी ।।
तबहु लग्यो नहि माग जो उनको, अब मति भयी भव संगी ।।
अनंत साधन कर कर खोयो जनम को परसंगी ।।
छूट्यो गुमान अभी मति भावो, अब है मन मनरंगी ।।

[६०]

भाव गवालन गात हरि गेवालन गात। हरि।
मति जमुना के तीर सात जाके चाखे प्रेम जरी ।।
जग जग बासी भयउं उदासी प्यासी राग भरी।
अनन्त शांती अभंग भाती राती काम हरी ।।

[६१]

देखो जी देखो आवत, गोरस माखन चोर ।।
हात न लागै चंचल कान्हा, स्वातम गति शिर जोर ।।
कर कर बाता जिय हरयाजी रैन गयी भयी भोर ।।
अनंत मति को ब्रजपुर प्रेमा, भगती भाव चकोर ।।

[६२]

मोर मुगुट धर घननील परमातम, परकासी गति अबिनासी ।।
भयी उजियारी प्रीतम प्यारी, अजित मुरारी ब्रजबासी ।।
मनका मनमों घाव बुजत है, सई जगावत निज अनुभव रासी ।।
अनन्त सांती मोहन बोधें गरक भयी मति अजर बिलासी ।।

[६३]

पानी भरन जमुना के तीर मैं, जात अकेली सासुर घर की ।।
बीचमों कान्हा करत छिछोरी, फिर दिन्हल शिर परकी मटकी ।।
नटकी बाता घर बिघरी सुद, आदर जाने सादरपनकी ।।
अनंत प्यारी मदन गुपाला, निज सुखदायक संग बनोकी ।।

[६४]

गोकुल के सब कीसन लोभी, गोप लुगाया मोहभरी।
छोरी छोरी मिलके गोरी जोरित जोरी प्रेम जरी ।।
बिन चोरी मति दीन रैन सति गावत लाला स्थीर चरी।
तदरूप मानस मानकर बस रस लै लाभत लाभ फरी ।।

गुजरी जमुना के तट कान्हा, उजरी उजरी बात बरी।
अनन्त संती शांती कांती प्रांती आतम खोज परी॥
परिहर हरिहर संसृति माहीं गायी सबविद गीत चरी॥

[६५]

मोहे प्यारे, नंदजी लाल, गुपाल संतन पाल।
श्याम सुंदरा मान हँसी पतितन के किरपाल॥
अभेद भगती शांती सोहे गर अपार बनमाल।
अनन्त अनुभव निज को प्रेमा छूटो भव विकराल॥

[६६]

हरि बिन सबही झूठी साज, गुन अभिमति को माज।
खबर न घड़ियन की दिल मोही, त्यज दिन हंसत न बाज॥
बादल छायावत घन माया, न भरोसा न घर लाज।
अनन्त गावत हरदम आतम, सहज मती को साज॥

[६७]

अब मन घेरो बंसीधरने, सनेह लगो है अजपा जपमों।
मुद बिसरी सब आगम पनकी, सब घट सूरत हरि को जगमों॥
दूजा न भावै अन्दर बाहिर, जनन मरन भय नाहीं दिलमों।
अनंत माया भान हरि जो, आपहि देखे व्यापकपनमों॥

[६८]

कहां गयो जी माधो मोहन बंसीवारो।
जमुना धूंड्यो, मधुबन धूंड्यो, धूंड्यो ब्रज परिवारो॥
अबहूं बावरी पिया बिना मति, बिकट थाँट संसारो।
घटघट भावै भास हरी को ध्यास रैन दिन जोयो॥
कठिन मोह मद मायाटवि मों गुननिसि को अंधियारो।
निज ध्यासन सो परकास कर्‍यो अखंड प्रेम उभार्‍यो॥
अनंत आतम सबाह्य घेर्‍यो समगति भई उजियारो॥

[६६]

मति गोरस बेचत मथुरापुर मों, येक अबरा।
हरि की बिरोधी अटकी मोहो, जिनमों बहु नकरा ।।
टंक जमावे गुन सौदा ले, नहिं जानत घसरा।
अनंत माहीं तम की भाती, प्राप्त भयी अजरा ।।

[७०]

सांवरिया ने कीन्हा बेजार। गोरस खायो सार ।।
घर को धंदा विधरा सबही। झूटो ब्रज से जार ।।
मथुरा को पथ दुरलभ मोरे। मोहन भाव अपार ।।
अनंत लीला निरगुन करनी। अभिमति सो नहि धार ।।

[७१]

कोई देखे मोरी राधा प्रीत की प्यारी ।।
मन की हारी, सुभमति वारी, वारिज लोचन नारी ।।
मोरे बिन नहिं घड़ी पल दिल मों, सब जग सोहै न्यारी ।।
ब्रजपुर माहीं ब्रखभान दुलारी, विद्या स्वरूपधारी ।।
चन्द्रावली है आली जी उनकी चंचलमत संचारी ।।
खोज सुनावो अनुभव दिल को संगम सगुन अपारी ।।
अनंत निधि को तरंग उमर्‍यो समतापन संमारी ।।

[७२]

नहिं बनि हमसे झगरी। संगत रे गिरिधारी ।।
सूद बिसारी भेद कपट की। निरमल मति भई बारी ।।
जहाँ देखहूँ वहाँ दरस है। घटघट छबि घन उजरी ।।
अनंत माहीं समता मानी। कहत हुं बाता अजरी ।।

[७३]

किसन मुरारी जगहितकारी। गावै मन तुम कुंजबिहारी ।।
जोगी मुनिवर जाको ध्यावै, तनमन हरके निज सुख पावै ।।

बाल्मिक नारद सुक सनकादिक, स्वातम ज्योति हो रहे मालिक ।।
अनंत भावै नित्य नवोनय, अनुभव प्रेमा हरेउं भव भय ।।

[७४]

सुरत मांवरी देख बावरी । मैं भई नारी निगम उजारी ।।
आगम बिमरी तन मन जोरी । जनन मरन से अब बिनधोरी ।।
कर कर चोरी गोरसहारी । चिन्त चिदातम हस मुरारी ।।
अनंत मति को खेल बिहारी । नंदननंद को धेनु खिलारी ।।

[७५]

किति बिनती कहउं गिरिधारीलाल । हरवुं भरम भव काल ।।
आस लगी पदि पतित पावना । करिजो भाव रसाल ।।
तिरबिध तापें बिपत किन्ही बहु । अंत दिखे विकराल ।।
अनंत मांगत माधव राधा । निज नय भाव मराल ।।

[७६]

गोविन्द कीन्हों मैं घर चार । मिठवुं भयो कर भार ।।
अब मन भावै अनुभव गावै । हरवावै अविचार ।।
पायो सांचो बिचार ताको । सोच मिट्यो जमकार ।।
अनेक भांती बनेउं ज्योती । मोती आतम सार ।।
अविद अभाव अनास अकाल । गावत संत अधार ।।
नाम रूप बिन काम कर्म बिन । पतितन के निरधार ।।
अनंत चिन्मय परिपूरन नय समता गावत तार ।।

[७७]

मोरे प्यारे नन्द जी लाल । तोरे आँख बिसाल ।।
चैतनघन सो सहज जगावै । जागे जोत अकाल ।।
आप आपको देखनहारो । पूरन भाव रसाल ।।
अनंत जगमो भगती तोरी । निर्मल बोध जलाल ।।

[७८]

गोविंद कीन्हो मैं जजमान ।
साच भावसो रास मचाये । नाच समान जमान ।।
हाटने कीन्हो नाटन साखी । भगती प्रेम तुफान ।
अनंत शांती येकात्म बोधें । लगी ज्योति महिमान ।।

[७६]

पावन माधोजी को नाम ।
सुर नर गावत प्रीत बढ़ावत । भाव भरोसे काम ।।
वेदन को गम अंत न पायो । कर रहियो अनुमान ।
अनंत गुन को भेद जान के । हरिजो अभिमति मान ।।

[८०]

जमुना तीर को बनवासी । बालम हरि अबिनाशी ।।
राधा पति को बोध घनो है । नित्य नवो घनरासी ।।
भाव भगतिन को प्यारो सांवरो । जानत सुख निजरासी ।।
अनंत आतम शाम रमावर । निजपद सद् विलासी ।।

[८१]

कौन गली मो खेलत लाल । धिक् लोचन धिग् भाल ।।
शाम सुन्दर है मोहन मूरति । सोहे गर बनमाल ।।
संग लियो है ब्रजपुर वासी । अरभक ग्वाल गुपाल ।।
अनंत लीला भगतन खातर । जनम लेत मराल ।।

[८२]

सांवरिया ने मन लूभाया । अब नहिं भावै का'यक माया ।
दस दिस एकहि निज बिलासी । भगती भावै गति अभिलासी ।।
जैसो सागर नीर तरंगा । देखत सबही अनेक रंगा ।।
अनंत आतम निगम निधिमों । गुन बिराजत अनेक पन मों ।।

[८३]

जगजीवन जदुराया रे।
मानव काया अजय पुरी मों, बिलसत माया रे।।
आतम सागर गुन लहरी सो सोहत नित्य भरे।
अनंत घटमों मोर मुगुटधर, महज बनी छबी रे।।

[८४]

तोरी नजर हरि जार जलाल, मोहन नन्दजी लाल।
कारी सांवरी मूरत बावरी मृगलोचन दिगमाल।।
बाता कर कर घाता कीन्हो, जिय बिसरी आगम ताल।
अनंत छन्दा धनि गोविन्दा, दासन कू प्रतिपाल।।

[८५]

तुम बिन करमत नहिं नन्दलाल, हे जी मदन गुपाल।।
तन से न्यारी मन गति मोरी, तुम खातर जगपाल।।
जाग्रति स्वपनी और न भावै, नहिं है सुसुपाल।।
अनंत गावत अखंड नामा, गुणातीत रंगलाल।।

[८६]

सदय धना हरि गोविन्दा, देवकी मानस कंदा।।
आनंद अति उभार मनमों, गावत निज छंदा।।
तुम बिन नाहीं जगमों कछु ही, काल गति गुन कंदा।
अनन्त चिन्तित चिन्मय आतम निसदिन मन धन्दा।।

[८७]

धुनक परत अब मुरली की कानी, फनकत मन मो रीत निरबानी।
माधो महिमा अगाध साजे, निरजर मोही नाद समाजे।।
पार न जिनको लागत वेदा, जागते सोही छेदत भेदा।
निज जन माही अनंत राजी, गात बिलासक भाव सदा जी।।

[८८]

कुंजबिहारी मों मन माहीं, निज सुखदायी मंगल गायी।
कुंजबिहारी मों मन माहीं, निसिदिन राही त्यज के धायी ।।
नित समुझायी दुबिधा जायी, निज सुखदायी मंगल गायी।
अलख कमायी विनय जगायी, साजन सायी नहिं बिसरायी ।।
अनंत पाया भाव सरीखो, हरि रस प्याला पीवत नीको ।।

[८६]

जगजीवन की धुन बनी बनसी सें हम मोहि मनीं ।।
सुख नहिं घर की मन की मारीं-हरिमो चित एक पनीं ।।
अभिमति तन की नहिं कछु बाकी दासी व्रिजनार धनीं ।।
लाल गुपाला नंदजी लाला, लागी नित्य धुनीं ।।

[९०]

माधोजी निरधन के प्रतिपालक, व्रीद अपना जी संभाल ।।
गरीब निमाजा निजहित काजा, गावत नाम गुपाल ।।
खबर लीजो जी अरज सुनायो, जानत तुम नंदलाल ।।
अनन्त महिमा बरनन जाई कानन को तुम काल ।।

[९१]

कर कर बाता हातीं न लागै, भागै माधौ गलि गलिमों ।।
दधि दुध घट घट घर घर पीजो, चोर बड़ो हरि अरिबलमों ।।
अबला जानै सबला नायक, जैसो सुभाव निरजलमों ।।
गावत नाचत साजत गाजत, लाज त्यजो जी सब लोकन मों ।।
ब्रजपुर धन्यो मोहन मोहें, अनंत गति को निज उगमों ।।

[९२]

माधव गुन मों सगुनी रमजिय अनुभव स्वातम निजहितमो ।
सब घट अन्तर वास विलासी मन मोहन हरि आगम मो ।।

स्वानन्द भयउ कारण अंतों कारज करमों गम निगमो ।
सतसंगतमो रमि रहियोजी मौजी आपहि आपुन मो ।।
निंदा स्तुति जग छांड़ चलो तुम सहजपनों में मारगमो ।
समता बागै तव बरि जानै जाग्रत जाग्रत कालनमो ।।
सदगुरु भाखौ अनंत नामीं अनाम धामीं बिसरामो ।।

[९३]

स्वातम भावो अर्थ जमावो अनर्थ भव सब गमवावौ ।
भोग त्यागमो घोर अंत को ठौर न पावै समभावौ ।।
ज्ञानाज्ञानी बहु हयरानी सहजपनो से हरि गावौ ।
कारज करमीं बहुविध धर्मी त्रिपुटी साखी मलवावौ ।।
सब में मिलके सबसे न्यारो होजा अनुभव नव लावौ ।
हम एक ग्यानी हम येक ध्यानी हमपन मतको जिरवावौ ।।
त्रिभुवन पति प्रभु अनंत माहीं भीछा काय कु मंगवावौ ।।

[९४]

जगमों मौजी रंग रंगेला खेलत माधव आपि अकेला ।
समता शांती गरबन माला स्वातम चन्दन चर्चित भाला ।।
सुगंध सुमनें तुलसिकु पाला सब सितलाई बनिहुं गुपाला ।
गोकुल माहीं अनंत बाबा मति जमुना के तीर प्रतिपाला ।।

[९५]

सम तनमों मन अब करवाव निरमल हरिहर गाव ।
भाव निरामय राज निजाश्रय अभाव सब हरवाव ।।
आगम नीगम माहीं देखो आपहि आत्म स्वभाव ।
अनंत घट घट खटपट त्यजके वीर गति परिहार ।।

[९६]

गरजत माधो निगम पुरानी, बाजत बेनू धुन कित जानी ।
कानो माही जब से आयी, रुचे न तब से नेह-सगायी ।।

लागि लगन तब मगन भयी मति, निज सुहागन अगनित गनती ।
मद न अनंती सुरति न भावे, पूरन-कामी गीत समजावे ।।

[६७]

प्रीत न तन की भावत मन मों, नित हरि की परगट जगमों ।
भव भरमा को कारज हरपे, अकाम-कामी बानी तलपे ।।
हयरानी नहि हिय लय लागी, दुबिधा सकलहि ममता भागी ।
अनंत अनन्य भाव भगति को, माधो अजात मन को भूको ।।

[६८]

संसार को सुख भावत फीको, गम हरि को नय लागत नीको ।
जिनको सज्जन गावत निसिदिन, तिन माहीमो मोहन तन मन ।।
अजरपनो को ठौर बतावै, अधोगति दीन्ही भोर सुभावै ।
अनंत जावत आवत नाहीं, सोवत जागत गावत साँयीं ।।

[६६]

सुन सुन सुन सखि समतावारो, मंगल गावत गीत सांवरो ।
मुरली माहीं नाद जगावै, अनुरागी की गम समजावै ।।
निज बोधा बिन परखनहारो, नहि नहि जग मों नेह सांवरो ।
होत बावरो जिय सुधारो, अनन्त प्यारो सबसे न्यारो ।।

[१००]

बकवा मत मोहे कर बाल तोरी नजर जलाल ।
कहुंनन जाई जानत परिमैं, ऐसी जादु कमाल ।।
मोहनि तेरी आंखन धुन्दी, सोहत भाल विशाल ।
अनंत देख्यौ अवतार लीला, वामों तूंही रसाल ।।

[१०१]

विसवास रति मोहि चित्त विरति, निसवासरसे प्यारी गीत निरति ।
कानि सुनि सुनि संत ध्वनी, वनितन मन विसरी ओही निज किरति ।।

तरणी आतम किरणी अनुभव, धरणी धाई कोई जीतन रति ।
अनन्त शांती अनुताप भान हरी जग घोर नीरंत रति ।।

[१०२]

सखि हरिनें मोहनी डारी, तन धन की सुद सब बिसारी ।।
रैन दिनमों सन्मुख ठाड़ो, बिसरत नहिं बिसारी ।
सब कछु देखत बोलत चालत, लेत देत संसारी ।।
कंसारी बिन और नहिं भावत, भव गति सब परिहारी ।।
अनन्त सगुना तमनाशा स्व अनुभव भूमि सुखकारी ।।

[१०३]

मोहे मनमों और नहीं । श्रीहरि बिन है मति लोक तिहीं ।।
सहज विरामी अतम रामीं । घन घन मन होत मही ।।
निज अनुभवसो जागत जोती । मोती बिंद बिन मोही ।।
अनंत रैन दिन अवस्था भयातीत । भोग बन्यो निज बोध तहीं ।।

[१०४]

मोहन के छवि सो मन धाय । तन धन भान लुभाय ।।
रैन निन मों सन्मुख ठाड़ो । नेह लगी जदुराय ।।
चहुँ दिस माही दूजा न कोही । बात मीठी सुनवाय ।।
अनंत रंग घनो जल गहिरो । स्वानन्द की भरपाय ।।

[१०५]

मतकर प्रानी ग्यान गुमान ।
मी येक ग्यानी ऐसो मानी । अग्यान गति अभिमान ।।
शामसुन्दर की भगती चूक्यो । जान हरी अबसान ।
अनंत आतम सब भूत बासी । जाने तो चि सुजान ।।

[१०६]

भयी मैं जोगनि पिय अनुरागी, लगन लागी तब से मति जागी ।
भव भरमो को त्यज के धायी, निज सुखदायी निशिदिन गायी ।।

मन समजायी मन के न्यायी, कुंवर कन्हायी की गत पायी।
आदि अंत भव खंति निवारे, सोऽहं तद् कु पन्थ सुधारे ।।
अनंत आपत काल सुभावे, गावत मंगल गीत प्रभावे ।।

[१०७]

पिय के खातर मति अनुरागी, सुरत सुहागनि चैतन जागी।
निज लय लागी भव-गति भागी, दुबिधा जग की सब ही त्यागी ।।
तन की सुध नहि इह संसारी, सब से न्यारी हरि की प्यारी।
अनंत बिगरी सोहि सुधारी हरि नामों की महिमा भारी ।।

[१०८]

नहिं हूँ भोगी नहिं हूँ त्यागी, सोवत नहि हूँ नहिं हूँ जागी।
नहिं भवरोगी बिरह-बियोगी, निज लय-लागी पिय संजोगी ।।
गति समजायी अजरपनो की, परहूँ मैं अब इह परलोकी।
अनंत गावत अपनो माहीं, दुबिधा त्यज के सब को सांही ।।

[१०९]

काय कु मोहन प्रीत लगायी, सकल बिगारी जगत कमायी।
तुम बिन अब मैं बिरह बियोगी, गावत निसिदिन नेय संजोगी ।।
भावत नाहिं जग माही दूजा, तुम बिन कौनहि सकल समूजा।
अनंत पिया होय न न्यारो, नेह हमारो तूं ही समारो ।।

[११०]

नहिं दुबिधा की भकती तन मों, मो मन मों समता गम उमगो।
कीन्हों माधो संग नीको, तब होत फीको भव निज वैभव अब ।।
प्रापत भयउ गति अबिनासी, प्राण पिया की प्रीत बिलासी।
अनंत घट मों परघट सांयीं, सब घट न्यारो निज सुखदायी ।।

[१११]

सुद भयी पिय की बुध माहीं, मो भव मों नहि रुचि प्रीत साहीं।
ग्यान ध्यान नहिं है मो माहीं, बिरह बिरागिन भाव सदा ही ।।

अबिनासी के प्रेम बिलासी, हूँ अभिलासी निशिदिन दासी।
होत न बासी प्रीतम नासो अनन्त प्रापति अनुलापासी ।।

[११२]

सोहे शाम किशोर भोरा, निज अङ्गन मो नाच नचावै।
रहा बतलावै अघोर ।।
मंजुल गावै तान सुनावै, निगम की किन्हीं भोर।
अनंत अनुभव स्वानन्द प्रेमा, आतम गति निज ठोर ।।

[११३]

मोहन माधवजी मनका, सनकादिक ने नेमित मनका।
बालमिक नारद आदर भावै लेत अनुभव जीवन का ।।
जाकी कीरत बेद बखानी, नाम सनातन आतम का।
अनन्त चरनी निज सुभागी, निस दिन जागत नीका ।।

[११४]

मो घर मो मोहन पावना, आया भाव संभावना।
अब मैं हरि बिन नही न्यारी हूँ, नहि दुबिधा तावना ।।
निज गित गाबत नीत पढ़ावत, जन ना मरण हरावना।
अनंत माहीं सांगी निरंजन, तन मन रंजन भावना ।।

[११५]

आगम षोडश पूरन निसिकर द्वादश नीगम भोर।
जाकी लीला बेद बखानी सो, व्रज मो शिरजोर।
अनंत गावै आतम भावै मोचक संसृति घोर ।।

[११६]

काहे कु थोरो गावत अपनो, माधो नहि तुम जग को सपनो।
कौन न पूछो तुज कू जगमो, सब जग मो तुम परिनहिं उगमो ।।
सज्जन जानत बिचार तेरो, सोही जगमो जगसो न्यारो।
अनंत गावत अभंग बानी अजर अमर गति लय निरबानी ।।

[११७]

सोही 'हरि के गावे नाम, जिनको भावे नहिं काम ।
अनुरागी नर सुर-बीर पूरा, पावत निज सुख-धाम ।।
सुभाव जाको दीन जनपालक, चालक आतमराम ।
अनंत लोक बिलोकन हारो, चेरो होत गुलाम ।।

[११८]

निशि दिन माही नेह लगावै, मंगल मंगल भाव जगावै ।
पतित सुधारे अपना माही, सब मो माधो अलख गुसांही ।।
घट घट सोही परघट होयी, देख देख जन लाज गमायी ।
अनंत गायी गीत प्रीत सो, विपरीत मन के भाव न्याव सो ।।

[११९]

अकथ कहानी साजन गावै, जग विपरित मन प्रेम लगावै ।
अन्दर बाहिर प्रीतम प्यारा, जागत सोवत होत न न्यारा ।
अनन्त लागी लय निज नैनी, नैन को नैन सुहावत बैनी ।।

[१२०]

जान पर्‌यो मन माही ग्यान को, निगम सांवरो नहि अग्यान को ।
आस लगी है अतीत करारी, पीय मिलन की आज तयारी ।।
न्यारी न होके न्यारी मैं हूँ, न्यारी न्यारी भव न्यारी हूँ ।
प्यारी दिलों की इह परलोकी, नयन बिलोकी नाहीं भू लोकी ::
भोली मैं हूँ अनंत भोली, अनन्य भगति मन मों डोली ।।

[१२१]

है मन मोहन मन सो न्यारो, भाव भगति को प्यारो ।
भावत है परि नजर न आवै, अजर अमर गम निरधारो ।।
गावत सज्जन अनन्यपन मों, सो ही अलख मतवारो ।
अनंत गावत तैसी पावत, जिनको जगत पसारो ।।

[१२२]

मोको कोहूँ नय हरि ऐसो, चकोर चांद को जैसो।
भाव तुमारो भगति हमारी, जैसो भावे तैसी भगती ।।
जहाँ मैं देखत तहां तहां तुम हो, तुम बिन मोको नहिं सुख देसो।
अनंत साजन बिरह बुलावत, दीन उधारत भवसागर सो ।।

[१२३]

जनम मरन डर कछु नहिं मन मो, नेह न मोरा इही जगत मो।
लागो प्यारो सबको न्यारो, अजित सांवरा भाव सुधारो ।।
अलख निरंजन दिन जनरंजन, भव दुख-भंजन बिचार-मंजन।
अपनेपन मों मो मिलवाया, अनन्त माया निसि बिलवाया ।।

[१२४]

मैं जोगिन बहु जनमो की।
पीतम खातर लिइ हुँ उदासी। दासी सतगुरु पावन की ।।
आस नहिं दूजी भव गति लूली। लाज गई मद भरमो की।
अनंत मंगल आतम रामा। गावत मति निज लोकी ।।

[१२५]

मत दीजो हमको गारी। मैं पर पुरुष की है हरिनारी।
कायकु पकरे बैंया हमारी। सब दिन तोरी बदुबल जोरी ।।
सास बुरी है घरमों मोरी। नेह न करो रे बलि जाएँ तोरी।
अनंत अबला पर भुवनो की। बाचा प्रनवो अली मनो की ।।

[१२६]

सुद बुद सबही हरि हार मोरी, तन धन जन की प्रीति तोरी।
व्यापक सांयीं सबमो सोही, सो मनमोहन मोमन मोही ।।
मोहन, मोहन को संसारी, सो हन नय सो लय कंसारी।
हँसि हँसि बाता रोवन आवत, ऐसो गावत धूंद मचावत ।।
अनंत पावत भावत तैसी, नाहीं तफावत जैसी तैसी ।।

[१२७]

हरि बिन भव कौन हरी भ्रम माया, कर ले सार्थक गुनिराया ।
निसिदिनि गावो मन समजावो हरवावो मत काया ।।
मोह लोभ में कालन धोका नहि व्हाँ में सुख छाया ।
अनंत जगावै निर्बानी सो भगती भाव सुपाया ।।

[१२८]

दिन निसि के बीते हरि गुन गाते बार बार मन समझाते ।
सब घट बासी अनास अनश्रुत स्वानुभवो निज रस पाते ।।
जनन मरन को धोका मिट्यो आतम अनुभव मिलवाते ।
अनंत सागर निरमल जल सो सोहत अपार परभाते ।।

[१२९]

चरणों की आस रही रही बिसारत नहीं सही ।
गुन गावै हरि हरि जग भावै हरि बिन कौन नही ।।
मति हरि आली आधि निगम हरी भास दिखाव मही ।
अनंत परमारथ अरथ बिना भेट भयी सुजन तहीं ।।

[१३०]

आली रिजे नहि सांवरो जिय मेरो अजि भयो बावरो ।
भयी मति बैरागी अनुपावें सदाचारी भेद नुर्यो संदकारो ।।
भव भोंवरी अभिमान धनी त्यजो भाव प्रेम संग कीजो ।
लोक लाज आँच नुर्यो नेह – नावसे ।।
अनंत मती नित्य मान एका जनार्दनीं ग्यान ।
स्वातम सुखारथ पान गुरु पियारो ।।

[१३१]

कोइ बिरला जाने जोगिया जागे जुगति सौ जिया ।
धन धन भाग जाके तन मन माहीं राखे ।।
खोज घनो निज चाखे परम भोगिया ।
अभिमान त्यज दिन्हों आप आप लागि बिन्हों ।।

संत शांत संग किन्हो नर तो बिया।
अनंत भाव येकायेकी जनार्दन अलखा की॥
आत्मन्वय नित वाखी आंकी आंकिम॥

[१३२]

करिजो किरपा सांवरिया, मो मन मोह लियो गोवलिया।
तुम बिन भवमो मोह नहीं है, जनन मरन रोग गया॥
अब परभाती निरधार मती, नेह, प्रेम जोग जिया।
अनंत स्वातम सागर लहरी, अनुभव भगती जिया॥

[१३३]

कौन नचावे नंदजी लाल, गावै छंद रसाल।
जनम जनम का भरम न जामो पावै रंग मराल॥
गुना गुनी समपन जिनको, जागै ढंग दलाल।
अनंत धुदी प्रेम फुलावै भावै संग अकाल॥

[१३४]

बनवारी ने नेह लगायो, आगम पनको छंद चढ़ायो।
निमगन मों मोह बिसर तै, जनन मरनको बंद हटायो॥
बोध निज को पायो प्यारे, जो दिन सतगुरु मंत्र घटायो।
अनंत सागर अनुभव प्रेमा नित नयो निज संग जड़ायो॥

[१३५]

घन बरसत घोर अंधियारी, पिया की मैं हूं प्यारी।
नजर न आवत अनेकपनसो, दश दिस है घुमारी॥
पीतम प्यारा नहिं है घर मो, बात रही बरजारी।
स्वातम बिन दिल न राखी, अनंत मनि व्यापारी॥

[१३६]

तोसो मोकूं काज नहीं रे, मन मों मोखी मनराजी।
बहु दिन देखी राह तुमारी, आंखन मों मूरत साजी॥

सदाकार मति भई निमगन में, बिसर गयी आवत न बाजी ।
संसार असार जानत ना हूँ अब तो गुनकाजी ।।
कारज कारन जानत नाहीं बखत बने ज्यों तो राजी ।
सब घट तूं ही सबाह्य व्यापक अनुभव पायो हंसाजी ।।
अनंत गावत गीत निरंतर निरभय जाकी महिमाजी ।।

[१३७]

पीतम प्यारा कहां गयो रे, साजनवा मोरा रे ।
भयी दिवानी सुद न तनकी, मनकी मारी नित विराग तोरा रे ।।
अनंत विमल आंखन जल सोचत, मोहि गत सारी परिहार नथोरा रे ।।

[१३८]

जानत नहिं सो सोहत भाई, जानीमो जानिये सरूप उपायीं ।
जानत सबही मानत बिरला, समता जामो पूर्ण कमाई ।।
सपनो में सब भ्रम भरमाई, देह लोभ की दुबिधा थाई ।
लीनता पायी सदपग माहीं, कारन काजी नहिं है वोही ।।
अनंत अनुभव शांति सगाई, हरिनामन मों रंग रंगाई ।।

[१३९]

बहुरूपी देख्यौ अजर गुपाल, भगतन के प्रतिपाल ।
स्थिर चर माहीं करम प्रवाही, गुन गति भाव भुकाल ।।
ख्याल खुसाली रंग बिहारी, कालन को हरि काल ।
अनंत महिमा महिधर बरनी, गावत नाम रसाल ।।

[१४०]

परिहार करो जिय अभिमान, बतलावौ निज मान ।
अजित रमापति नापत मोरी कवमो मति हयरान ।।
मोह लोभ मद संगत माहीं, निकल जात अवसान ।
अनंत प्रेमा नाम भरोसें कीन्ह अजरामृत पान ।।

[१४१]

तेरो नाम प्रताप गुपाल, गावत भाव भुकाल ।
नित नवो रस अनुभव प्रेमा, मानव देहिं सुकाल ।।

निजहित छन्दे मानव ठवि, विवेक बोध कृपाल ।
अनंत मेविनि शांती जीवनी ताप हरास ,कुकाल ॥

[१४२]

बखत न ऐसो फेर मिलेगी, भज भज आतम मनुआरे ॥
दुरलभ देही प्राप्त भई है, कालन फेरा मिटिजी रे ॥
जागो बाबा हरदम सांई, छिलमो अनुभव भर प्यारे ॥
संग न आवे कुटुम्ब कबीलो, मोह लोभ की खाई रे ॥
अति पछतावे भरमो भाई, सतसंगत सो रहिजो रे ॥
नेम न यक घड़ी पल को जगमो, खोजो तनमों निजहित रे ॥
अनंत रैन दिन नाम जपत है सूद बिसारित नित की रे ॥

[१४३]

पूरन ब्रह्मा विमला रामा, धामा भुजले निज नामा ॥
संपत बिपत संसृति माही, नहि सुख सपनो मों पथ धामा ॥
देखन आवत सो सब मिलि जो, जातहि कालन मुकामा ॥
जोग ग्यान तप जप मख साधन, कबुहि न पावे बिसरामा ॥
अनंत भावे नहि गुन तेरे, गाये मुख सो बेफामा ॥
हिन दिन मति सो अधार अपनो, पतितपावना घनशामा ॥
अनंत प्रेमा निज भगतिन को, सहज जगावे बहुनामा ॥

[१४४]

कौन उपाधी ठौर बिहारी, हमसों नहिं है भावत प्यारी ।
वारि जाउं मैं भैया के पगमों, साजन मोरा राम रहा मनमों ॥
जित उत देखे बाहिर भीतर, दरस बता दे आजर सीतर ।
अनंत घट घट सतगुरु लेखी, आपी आपन दिलसोकी ॥

[१४५]

जमुना के घाट पर भीर भयी, परभात घड़ी गोपिन की ।
गोपन में छवि शाम सुन्दर, आदर भगती भावन की ॥
बारा सोला मिलके कामिनि, बात चलाई मतलब की ।
स्वारथ परमारथ है जामों, सुद नहीं मति आगम की ॥

नंद बिरामा बिन नहिं कामा, जावत रामा व्रजपुर की ।
धन धन भाग जि अबला मति को, जानत बानी संतनि की ।।
अनंत माहीं अनेक लीला, सगुनपनों में निरगुन की ।
परमातम प्रभु अलख लिखा दे, नित्यं नयी नित सत् चित् की ।।

[१४६]

देखो आँखसि साजन खेल, तनमन कानन मेल ।
नाच नचावत येक ताल सो जा मों बहुपन मेल ।।
अलि लीलावी अलबेला महि कर रहि मै समसेल ।
अजपाजपमों अनंत सांही संसृति भाग अमेल ।।

[१४७]

अजब लीला बनी बंसीधर की गन की मारी मैं नारी ।
जमुना जी के तट पर कान्हा, देख हुँ मोकूं दे गारी ।।
नित नयी नित प्रेम पियारी, अंतरजामी केवारी ।
भाव बतावै कपट नाटकी, दिलमों भरि हाँसे भारी ।।
प्यारी प्रीतम नहिं छुटने की, भयी मैं बावरी संसारी ।
विषय बीख सम किसन बीन है, सब घट देखत कंसारी ।।
अनंत निधि नाम प्रतापी जल रूप भयो दिल व्यवहारी ।
सहज गुन की लहर उभारे अनुभव निज सों परिहारी ।।

[१४८]

हरि गुन मों जीय जियोजी ।
आनन भाख्यो आनन मोहे हरदम दृढ़ राजी ।।
अंतर खोजो आतम अपना आपहि मनमौजी ।
अंत तनू का लक्लग गायो अनंत गुन गाजी ।।

[१४९]

हरि बिन कौन नहीं रे साथ, भवमें अंत अनाथ ।
मत भूल मूरख भवमाया मों, धरले सतगुरु हाथ ।।
ऐसी फेर न आवे आवो, तरत नकी मिल बात ।
अनंत संगम अनुभव बोधी सतगुरु की बरकात ।।

[१५०]

मनमोहन बंसीवारो मो तनको हेरो।
मति जमुना के ठाढ़ो घाट पर, संग सखिन घेरो॥
बड़ि बड़ि आंखन पलख न टालत, दम देत सुसेरो।
अनंत मानी निरबानी पग, स्वातम नंद उजारो॥

[१५१]

देखो देखो सखी छबी मोहन की, महि गोधन की मन दोहन की।
आंखन हलि जो जीय न घेरो सुद बिसरी सब तन मन धनकी॥
जहां तहां के काम बिसारी, पूरन परि भयी नीत किसन की।
अनंत गुनातीत गुन लीला, नीत नयी जिन मति संतन की॥

[१५२]

बतला दे अली घनश्याम विबुध गमोद्भव धाम।
विज्ञानामृत बनसि बिहारी अच्युत पूरन काम॥
सद विद्या सति राधा प्यारी पगमों भई बिसराम।
अनाथ रच्छक अनंत साछी भावो विप्र सुदाम॥

[१५३]

वारि जाउँ मै बलिहारी, संत संत भई दिल प्यारी।
लाल गुपाल से ख्याल खुशाली, तन मन में गति न्यारी॥
मति जमुना के तट नटधारि, मनमोहन उजियारी।
अनंत भाती शांती कांती, निज भगती निरधारी॥

[१५४]

प्रेमघनो पगमो हरिके, अनुभव निज तरके।
औरन देखन आवत कोही आपि बिना परके॥
भेद भावना भरम हरगयो समता नय तरके।
अनंत भजनी अभिमति भवकी, रजगति सब उरके॥

[१५५]

पग लगि मोरे प्रीतम प्यारे, नन्दजी लाला गिरिधारी।
गोकुल हंसा हिसानन गत कंसांतक प्रभु संसारी॥

खार नहिं आवत बाट बिकट है, हाट रैन गुन रंगारी।
जानत नहिं कछु साधन धर्मा, भरमा बिबिधा तम हारी॥
मात नहिं मनमो भेद अभावे, भावे अनंत समधारी॥

[१५६]

मोहन की छबि सो मति धाय, तनकी सुद बिसराय।
जित हूँ देखत उतहुँ सन्मुख, नेह की बनिहुं सराय॥
बिथरी बावरी बात हमारी, साँच बनी अनुपाय।
अनंत भाती आतम तुर्या साछी सह कमाय॥

[१५७]

भावे हरिजग जीवन राग, मैं भयी काम विराग।
शामसुन्दर की बनसि बिहारी, बतलावे निज भाग॥
मति जमुना सो निकरी दुरमद, काम फनीधर नाग।
अनंत सागर संग जमुना मिल मिलावत माग॥

[१५८]

राधे देखो छबि प्यारी आवत है, तुम राज मुरारी।
ज्याको ध्यावत जोगि मुनिजन, सो नन्दन नन्द बिहारी॥
चैन तुम बिन सब ब्रज नाहीं, जादुपती तुम नारी।
अनंत विद्या आतम भाती भव डर को परिहारी॥

[१५९]

बतला दे अली गिरिराज।
मैं हूँ बावरी प्रीतकी भूकी, बिसरी कुल की लाज॥
बन बन ढूंडयो अजित मोहन तृषित भयी जल काज।
अनंत निदि ध्यास सुभावन मो सहज मनोरथ साज॥

[१६०]

किति कहुं बिन बनि घननील सदया भव उर हरना निजमारे।
बतला दे निज कारन शामा, अरज सुनो तुम सजना रे॥

ठौर तिहारो इह पर जो है अखंड सुषमो निरधारे।
स्वारथ परमारथ जिन्हां से, जागरती नय क्रम वारे।।
भेद अभेदादिक संकल्पी कलप मनोका नीवारे।
अनंत मति है सूरज कुवांरी मिल रहि गंगा बिच मो रे।।
स्वातम बोधनि पाद सरोजी सङ्गम सागर निरधारे।।

[१६१]

प्रीत की फांसी डारी मोहन सुद बिसारी घर की रे।
कैसी बनेगी अबसो हमसे जग की रीती जहर की रे।।
मेहेर करिजो हरि हमरे पर दासी कर तन पग की रे।
सरद अभिमति ममता म्हातारी, सास बुरी मै परकी रे।।
मिल रहि दिन निसि काम करजी जैसी गनेरी चरकी रे।
अनंत अबला गत अभिमानी सहज बिरामी तरकी रे।।
सतगुरु सांयीं अलख जगावे, गुन सगुन परि चटकी रे।।

[१६२]

कैसो बनेउं नेह तिहारो, सांवरिया हम पर घरकी।
रैन दिनमों दुरमद खल, जग माहीं नहि गति सत घरकी।।
अपने अपने मतलब खातर, लोभ मोह मद हरदम की।
अभिमान धनी, सास ममताई, बेजार भई पर लरकी।।
प्रणव प्रभातीं ब्रजपुर माहीं, अजात हरि सों नय तरकी।
जमुना को तीर रन रङ्ग धीर ठाड़ो रोखत प्रीत इनकी।।
अनंत पनकी रहा बतावै, जनन मरन डर हरवन की।।

[१६३]

जिय जगावो तुम निरबान, त्यजि जो तन अभिमान।
जा भव माहीं कौन तुमारी, काल गती धुलधान।।
तनसो न्यारो हो रहियो जी, निरजर निज किन पान।
अनंत अनुभव सज्जन सागर, हरि जो गुन अभिमान।।

[१६४]

बनबारी ने ब्रजवासी सती भुलवायो प्रेम के फांसी।
घरकाज नहि याद जि कवना दिल बैराग उदासी।।

अन्तर आमी मनकी छय्या ताप रहे मुरारी।
अनंत मूरत ' बावरी जगमो, सूरत हरि निरधारी।।

[१६५]

लोभ झूटोजी हरिजी को प्रीतम।
अक्रूर ले गयउ चोर माखन लग रयउं मना चटको।।
लाल बिहारी हंस मुरारी भी जिय ब्रज को अटको।
गिरिधर नागर अनंत शय्या सम सागर पनको।।

[१६६]

बतला दे अली मन बिसराम, मोहन आतम राम।
विरह बुखारी रैन दिन भर, भावै नहिं घर काम।।
गुन सेज पर नींद न आवै, तनसो निपजत धाम।
अनन्त प्यारी जसुमति तान्हा जगावै निसिदिनि नाम।।

[१६७]

सांवरिया मीठी मीठी कर बात भाखौ स्वातम मात।
उठ उठ कान्हा जसुमति तान्हा भोर भयी परभात।।
जा तन माहीं जानत नाही जगकी जात अजात।
अनंत संती विभूति शांति कांति राक सनाथ।।

[१६८]

कहां गयी सुन्दर शाम छबि, चमकत बिजली नभीं।
घोर पवन गरजत मदगज कहुं लग धूंड अबा।।
जमुना देख्यौ, कुंजहि देख्यौ, गली गली देखी सबी।
बेजार भयी अब अवसर बीता लीनतानंत तबी।।

[१६९]

गोवर्धन धारी प्रभु हरी ब्रज सङ्कट हारी।
हंस सदयसो कंसांतक नर वामन मुरारी।।
शामल कोमल कांति शांति, भक्ति सुविचारी।
अनंत समता येक जनार्दन भेद नहीं नर नारी।।

[१७०]

गोविन्द को गुनगावो, भव भरमो हरवावो ।
ऐसो फेर नहि आने की, मानुखपन भावो ।।
अवसर मत भूल हरदम पकरो सोहं लाग लगावो ।
अनंत सांती पूरन घटमों, नीर मती करवावो ।।

[१७१]

तुम बिन दीनानाथ मति अनाथ, जगवन• माहीं, माधव जी ।
नर तनु पाई सार कमाई किन्ह चतुराई आतम जी ।।
सगुन समाजी सहज बिराजी राजी सब मो राम सजी ।
चीन्ह लिन्हों सब घट की माया भेद गती को काम त्यजी ।।
अनेक येकों मिलाफ करके अनुभव बानी, लाग सजी ।
बाजी हारी काल क्रमाई गायी गिन अनुमोदन जी ।।
सो धन भागी अनंत उभार्‍यो ये आत्म प्रेम पाकर जी ।।

[१७२]

पतितोद्धारक नरहरि नाम हारक भवगति काम ।
दिन जग करुनाकर सगुना अगुन कला निजधाम ।।
अभेद भक्ती निज सुखदायी जा देहीं बिसराम ।
अनंत स्वातम सागर लहरी नित्य नयी मति चाम ।।

[१७३]

मुख से बोलो अमृत बानी ।
हरि को नामा निज अभिधानी ।।
कायकु डूबते मोह निधिमों ।
मानन गेही कारज सुगमो ।।
ग्यान गुमानी मत अभिमानी ।
चित सकती सो मत ह्यरानी ।।
जानत नाहीं सबमों सायीं ।
भेद बनोहू काम पराई ।।
अनंत अमला कमलापति को ।
भाव भरोसे सहज गति को ।।

[१७४]

परम भई मति निरगुन पुरखों, सगुन कलावति अभेद भगती।
सगुन कलावति अभेद भगती नित्य नयी तरकी ॥
स्थावर जंगम संयम माहीं, कोहि नहीं परकी।
एक अनेकीं आतम पूरन है अजरामर की ॥
भेद भाव सों भ्रम भव आंखन, कालगति चरकी।
मानव जनमी जाने कोई जामति नहिं नरकी ॥
सहज सुभावो अनन्त गावै नितरत नागर की।
संत संगती निरमल पानी लाग रही भर की ॥

[१७५]

बाबा साहेब कैसो राम कीसन देखो राम।
देखो रामा देखो शामा देखो भेखो राम ॥
घट घट के बिच चेतन सगती सो है देखो राम।
अनंत रंगे संतन संगे भंग भयो भव काम ॥

[१७६]

भजउं मना कंसांतक बीर मन समनारथ धीर।
नर तनु पाके सार्थक करले छोड़ो भव की फिकिर ॥
हरिनाम गायो सो नर दुर्लभ भाव भगति अब नीर।
समता पावै भ्रम हरवावै अनंत भाग समीर ॥

[१७७]

भजन भरोसो एक जदुनाथ, कोई नहीं आवत साथ।
मा बाप और कुटुम्ब मिलाफी, जब लग पैसा हाथ ॥
मोह लाम, मद, मोहिनी थारी, भव भरमोजिय घात।
अनंत मावै सों परमारथ, कर ले संतन सात ॥
अनंत भगती सहज अनादी, रचातम गति अविचार ॥

४—राम-भक्ति

[१७८]

तुम बिन रामा मै नहिं जानत, ग्यान ध्यान जप परिवारा।
करुनासागर सब घट तूं ही, अलख निरंजन ऊभारा॥
होत जात जग सागर लहरी, सहज नवाई गुन भारा।
अहंकारता रज अभिमानी, करम उतार्‍यो संसारा॥
ग्यान ध्यान बहु परकास किन्हो, खद्योत निसी परिवारा।
अपने अपने मत परकासी रैन, गुन मों जग जोरा॥
नाही पावे दिन मनी जब, परकास भयो व्यवहारा।
स्वातम भाती अनंत किरनी, धरनी घर बेजारा॥
बजार अनुभव नित्य नवो नय, भगति भरोसा शिरजोरा॥

[१७९]

भगति बिना चतुराई भ्रमाय नित अभिमान समाय।
मोरा मन तुम राम राम जप, नर तनु होय कमाय॥
राम भरोसा भाव बने तहं, गुन गति भेद न पाय।
अनंत जनमीं संत बखानी निज गति राम रमाय॥

[१८०]

काल बीतो तधि कौन जियो।
अभिमति रावन दशानन हार्‍यो। निसिचर कौन जियो॥
लिग, त्रिकूटाचलपुर, लंका बिबिखन ठौर जियो।
[illegible] जियो नहिं शीय जियो नहीं स्वातम कौन जियो॥
देव जियो नहिं, आवत जात नहिं ऐसो, बोध, जियो।
हूं न जियो तुम न जियो जिय जब धौत जियो॥
ऐसो स्वामी अनंत गोचर निज बर कंस जियो॥

[१८१]

राम कथा गावत है कोय, जिनकी समता होय।
जिनकुं माया बिखय बिखारी ताप बने से सोय न मनको॥
मनमों अनुभव उपजे स्वातम कारे तोय।
मोह लोभ मद मत्सर हृदगद, तनको कसमल धोय॥

सो एक साजन सुमत आतम बिचमो नींद को खोय।
दुरलभ ग्यानी हत अभिमानी पर नहिं भावै कोय ।।
अनंत सिंधू अनुभव पूरन कालातीत भयि सोय ।।

[१८२]

दिन दुखियारे सब निकसे, दरस भये तबसे।
नजर पसारी सबमो तू ही, मोहन छबि बिलसे ।।
सबाह्य पूरन अगम अगोचर, नैनन मोहि बसे।
अनंतनामा करके रामा नित नवी गमसे ।।

[१८३]

बहुरूपी मनका पीतम साज सगुन बना चिद्‌काज।
राजा बनके परजा पाली कहुँ निरभिर कहुँ लाज ।।
कहुँ है नंगा कहुँ है दुखिया कहुँ जोगी गुजराज।
अनंत लच्छन आतम रामो अनुभव भाव समाज ।।

[१८४]

तुम बिन आतम रामा। जानत नहिं जगमों निरधारा।
तनको न भरोसा काल शिरीं। है छिन छिन संसारा ।।
सांवरिया गिरिधारी रे। पतितन को उधारी रे।
कारज करता भाव न माने। अनंत समता दे धारा ।।
अतीत गुना सगुन बनो गहिना अनुभव मिलि जो ~~आरा~~ ।।

५—शिव-स्तुति

[१८५]

तात नमो गनराजन को।
नंदि बहाना नाग भूषण। ध्यास बड़ो बिन को ।।
देव न बाबा प्रेम कहावै। गुन रघुराजन को।
अनंत अंबिजा मोहन घेर्‌यो। भेद हरी जौंदिन को ।।

[१८६]

संकरजी तव लीला भगती, अजब बनी है जगमाहीं।
स्वातम बोधे सम सांब कहावै, भाव जड़ावें मनमाहीं।।
सो सुख पावै दिल भावै सो, कालन को गति डर नाहीं।
आदि अंत मों ध्यास मिलाओ, संग गनों का मन माहीं।।
शीश के ऊपर गंगा सोभे, निरमल बाहत निज गेहीं।
धौल प्रभातन गौर गौरि को। नाथ जनोका गु० सायीं।।
गोसाई है अलख जगावन। अनंत संतो सुखदायी।।

[१८७]

गिरिजा संगा नंदन जोगू लाल बिराजत अरधंगा।
कैलासाचल बास कोरी त्या भृंगी भृङ्गी गान संगा।।
डमरू भाला माला सोभे, नररुंडन की शिस गंगा।
ईसई सनको नंदीवारो, नाचनचे धांगड धिंगा।।
कपालपानी भीछापातर, घर घर जावे बहुरंगा।
भाव भगति सो देवन आवे, ताव मिटावे सब गंगा।।
जो कोई गावे निरमल भावे, भोला संकर अनुरागा।
अनंत साखी वेद पुरानी, सतगुरु चरनी गति मांगा।।

[१८८]

शंकरजी मैं दास निदान, लीला तोरी महिमान।
विधि हरि ध्यानी अंत न पावै, भावै कौन जबान।।
नाम अनंत आतम रामा, गुन गति सी अभिधान।।

[१८९]

शंभो शंकर बंब बजाव, शंख बिमुख न जाव।
भूतगनों का मेला साथी, अंतर देखे सभाव।।
मिटवा दे भ्रम नमि सतगुरु से, पूंछ [illegible] [illegible] ठाँव।
अनंत बानी मानी निजको, आतम भाव [illegible]।।

[१६०]

गिरजानाथ सत धामा भव मोचन घन बिसरामा।
काम दहन गंगाधर सिवहर नित्य जगावै नामा।।
सुरनर फनिपुर माही सतगुरु आगम अगोचर रामा।
अनंत सदया करऊँ अभया निज निज आतम रामा।।

६—गणेश-स्तुति

[१६१]

वंदूं पहले गुण गणनाथ, भाव भगति परभात।
मंगल दायक विघ्न नाशक, जाको सुरनर गात।।
निरगुन ठौर बिहार विरामा, अनुभव सगुण बरात।
अनंत भव मों तारि दयाघन ताप निवारत घात।।

[१६२]

गनपत के पग बंदिन मैं। नरतन काज समै।
विघ्न विनासन नाम जिन्हों के। निर्जर भात्र रमै।।
परकास भयो प्रणवो कारण। आतम प्यास जमै।
अनंत भगती देहपनों की, समता साज गमै।।

[१६३]

मोरया के गुन गाऊंया। जनम मरन खत फारूं या।
आतम निरगुन गुन बिराजे। जाकी पारबती माया।।
बिघ्न बिनासा दिनजन आसा। करिजो पुनीत नर काया।
अनंत सिंधु अपार मति का। सम बीसम भ्रम पाया।।

[१६४]

गम राथा है गुन नाथा, निज सुख परमारथ वेदांता।
बिघ्न बिमोचक, बुद्धि प्रबोधित, निज भावेगुन गाता।।

निरगुन, सगुनानन, सतप्रणवा, आतमनय एकांता ।
अनंत भगती सहजपनो की, अगवायी सिद्धान्ता ।।

[१९५]

गनपत के मन मों निज ध्यान सबके आगे मान ।
बिघन बिनासक बुद्धि प्रकासक गति जाकी निरबान ।।
सुख सागर को ठौर बनो है निरमल भाव सुजाण ।
अनंत आतमा अगुना सगुना कृति मो हरि अभिमान ।।

[१९६]

एक दंत गुनवंत संत संग जाको ।
सदयमति उदितकाल भयउ भोर अजित काल ।।
ठौर हन्यो मोह जाल नय रसाल बाको ।
जनम सुफल काज कीन्हो अमर भाव छोड़ दीन्हो ।।
जीव शिव खोज लीन्हो लाभ घनो ताको ।
अंतरंग ढंग बीन संग भयउ भंग हीन ।।
अनंत क्रम सहज लीन लिखत गुन लाखो ।।

७—कालिका-स्तुति

[१९७]

नमो कालिका बंगाली दीन पालन वाली भ्रमनासी ।
विक्रालानन काल उभारी गुन रूपसी सबि बासी ।।
असुर बिदारी दासन ब्यासी, निजपद बासी सुखरासी ।
मोह महिषासुर बध कीजो, अभेद भगती निज कूं सी ।।
संग अखंडित भाविक पायो, गुनातीत है गुन बासी ।
अनंत महिमा कहन न आवै, भजनों में रमि ब्रिजवासी ।।
सांवरि सूरत तनमों घेरी, सुद बिसरी मति मनमासी ।।

८—दत्तात्रेय-स्तुति

[१९८]

मनसब छोर चलो - भवरंग, पकारौ सज्जन संग।
तुम नहिं किसी का, कोई नहिं तेरा, सब घटि तेरो ढंग॥
दो दिन की है तन जिनगानी, जामों देख अभंग।
अनंत अद्भुत अवधूत दत्तात्रेय पदी निःसंग॥

[१९९]

सतगुरु स्वामी दत्त दिगंबर, गरजे अंबर मम बानी।
आदि अंत बिन रंग रूप बिन, गतगुन तीन निरबानी॥
घटघट नांदे आवि बिलासी, निज निज वासी अभिदानी।
ब्रह्म विष्णु हर जासो आनन, अनुभव साधन अवसानीं॥
जगजीवन सो प्रगट भयो है, भगती भावें जगमानी।
अनंत भजनी निसिदिन रहियो, प्रेम सुभावें नित्य मनी॥
भेदातीत गम ग्राम बनो है बसती जां नहिं हयरानी॥

९—अलख निरंजन-स्तुति

[२००]

जोगिन भयि मैं पीतम खातर, गात ध्यात निज निरबानी।
तिलक स्वगंधी सोहंकपाला माला अनुभव मुलमानी॥
विचार शैली सिंगी सतकी, प्रबोध टोपी सुलतानी।
गोचर स्वामी अंतरजामी परकास करी निजध्यानी॥
अनंत मानी जनन मरन बिन अलख निरंजन जिनगानी॥

[२०१]

पायो है सो ठौर जगायो, गायो गोविन्द गुन सुभायो।
गुन गति सों गुन बढ़ायो, गुनी निरगुन भाव सजायो॥
जाग्रत सपनो सुषुपति मों, अलख निरंजन राम मिलायो।
अनंत सागर प्रेमापूरन अनुभव लहर सहज बढ़ायो॥

[२०२]

अलख निरंजन गुरु गोसाँयीं मो मन भावै सबं घट माहीं।
अभिमति माया खेल गुनों का, संगम आतम चालक जो का ।।
अस्ती भाती प्रिय रूप ग्यानी येक अनेकी नाम निशानी।
अनंत मति भयी निरमल पानी, स्वानंद निधि को सहज तुफानी ।।

१०—भजन

[२०३]

मोपर किरपा कर दिन नाथ।
भवगति माहीं तुम सुखदायी, तुम दिन सबही जात ।।
अभिमानो से सुख दुख भावै, जबान अखारथ जात।
अनंत शांति नीत तिहारी, निजगति के परभात ।।

[२०४]

प्रभुजी पावन तेरो नाम।
भाव भगति सो जो कोई ध्यावत वाको पूरन काम ।।
दीन हीन जन पतित उधारे कुटिल जार हराम।
अनंत माहीं दिन मति राख्यो, हर लीजो अभिमान ।।

[२०५]

करुना कीजो पतितोद्धार, नहिं मनका निरधार।
पापी अजामिल गनिका तार्‍यो, लीला तोरी अपार ।।
निरधन मैं हूँ दास तिहारो, नरतन सो ऊभार।
अनंत आतम रामा मोही, नीत नबो सुविचार ।।

[२०६]

परेसा हे जगदीसा, मन मों आसा अविनासा।
अगनित धामा गुनगति शामा रामा नित्य प्रकासा ।।

गावै भावै निगम निरामय, सब घट जिनको बासा ।
अनंत सहजी भजन प्रतापे, दुर्मद पावत नासा ।।

[२०७]

चरन को हरि मै हूँ दास, नाम जपे बिसवास ।
निज धामन की रहा ध्यात है, और नहीं धन आस ।।
तुम बिन सांयीं देह अभिघानी, भव भगति मों जग नास ।
अनंत दिन निसि नाम जगावत, आतम प्रेम बिलास ।।

[२०८]

आसमनीं लाग रही दीन दयाघन देवा ।
और नहीं ठौर गमें, घोर मती माहि सेवा ।।
तुंही रूपी, तुहि गुनी, तूंहि सर्व साच्छी रामा ।
पतित मी दास तेरो, राह निज लागि धामा ।।
मोह लोभ दंभ हारि नरहरि, अनंत मति राफ कीजो ।
नित नवी भक्ति भाव भेद बिना अंगि रिजो ।।

[२०९]

साजनवा मोहे जिय लाल, प्रीत की राह समाल ।
पतित मति मोरी करम कारजी कारन भाव कराल ।।
जानत नहि कछु तुज बिन, और मी तूं ही मनोर्थ मराल ।
अनंत मानित सब मों तूं ही, साछी भाव-दलाल ।।

[२१०]

शाम न जगावो जगमो भाई । और काम सब भरम बढ़ाई ।।
और न कीजो दिल मों आसा । होजा आतम भाव प्रकासा ।।
निंदा स्तुति जन बकवादी । दिल नहि रखना भेद न बादीं ।।
अनंत नामी आतम एकी । नित्य निरामय बुद्धि पदांकीं ।।

[२११]

मत करि मगरूरी मानव गेहीं अभिमति सो जन भरमाई ।।
कोई कहे तपी, कोइ कहे जपी, सकलहि धुन की जन धाई ।।

जोग भोग सब रोग हरी बिन, मुगती देह न मिलाई ॥
अंतीं मुगती मानत प्रानी, भ्रमना येहीं लगवाई ॥
आंखन अंधा काल गति सो, लौकिक बंदा जड़माहीं ॥
अभिमान बिन बात न देखूं, घात तनूका करवाई ॥
अनंत आतम सब मों जाने, सो नर दुर्लभ रे भाई ॥

[२१२]

विनय पनोका परकास भयो, तब घट 'घट मों भेद न गायो ॥
एक पनो में सबको देखत, सबमों येकीं आप बिराजत ॥
खेल गुनों का जानत नीका, खेलन हारो नाम अनेका ॥
अनंत पनमों एक जनार्दन, अनुभव बाता अभिमति मर्दन ॥

[२१३]

तुम बिन छूटै नहिं अभिमान। भव मों मान गुमान।
पुरुषोत्तम प्रभु परम भागवत। हरिजो मोह तुफान ॥
भव सागर सो पार उतारो। भाव उभार समान।
अनंत किरती जगवावै मति। है जब लग औसान ॥

[२१४]

प्रभुजी कीन्हो भव परिहार। दीन्हो भगति बिहार ॥
जप तप साधन मैं नहिं कीन्हों। सारासार बिचार ॥
नाम भरोसे श्याम तुमारे। भयउं निज निरधार ॥
अनंत शांती नित्य निरामय। गुन गति परिवार ॥

[२१५]

किरपा तोरी भई दिन नाथ। मगन तिहारे साथ ॥
भव सागर सो पार उतार्‌यो। पावन ' कीन्ह अनाथ ॥
अब दिल भावै भाव भरोसा। घट घट माहिं सनाथ ॥
अनंत स्वामी अंतरजामी निज सुनावत बात ॥

[२१६]

तुम हम पद हैं एकि अधारे। अनेक चाली पग बिसारे ॥
तुम हम बाता अभिमानो की। कारज करमीं भाव अनेकी ॥

ग्यान ध्यान सब भेद पसारा । करि कथवा को [illegible] [illegible] ।
अनंत लीला बुद्धि कमावै । आपहि सागर आस झुलावै ॥

[२१७]

इतनी बिनती मेरी सुनो नाथ । बनी बने की बात ॥
रैन दिन मों सन्मुख रहिजो । घरमो बुरी है बात ॥
सबाह्य तूं ही ध्यान अमर सो । प्रेम सुभाव सुगात ॥
अनंत आतम रामास्वामी अमल पनो अनाथ ॥

[२१८]

किरपा करिजो हे भगवान । तुम बिन दिल हयरान ॥
तन जागरती रति सुख दीजो । भगती भाव निधान ॥
भवसागर सो पार उतारो । लागो है निज ध्यान ॥
अनंत चातक घन आनंदी । भावत है तिरबान ॥

[२१९]

हित कर लीजो नरतनु पाके । राम नाम बिन सबही धोके ॥
कायकु डुबिजो मोह निधि मों । पार न लागे धरिजी सुगमो ॥
चिंता मगना भज हर भजना । जाको गाती बेद पुराना ॥
अनंत जगमो येक जनार्दन । भाव भरोसे अभिमति मरदन ॥

[२२०]

खबर लीजो दीन की रामा, काम हरी सब भव भ्रम को ।
माँगत नहिं कछु संतत संगत, भाव पिया सो दरसन को ॥
जानसि सब तुम अंतरजामी, प्रेम पिलावो निज पन को ।
काम क्रोध तम मद मत्सर सब, बेढङ्गी अरि अभिमति को ॥
मोह लोभ मो हर दम दुखिया, भवसागर है विपरीत को ।
साधन नेमा जानत नहिं जो, जानत पावन पतितन को ॥
अनंत नामी अराम पावै, अनाम सहजीं साजन को ॥

[२२१]

दीन के दयाल पतित उधार तेरो नाम अधार ।
सब जग भावे जीय दसे पर गुन भूत काल बजार ॥

देह पनों से अभिमान मति ये कहि नहि निरधार।
अनंत दिन गति दास तिहारी, चिंतित भावें उभार ॥

[२२२]

मांगत नहि कछु तोरे पास, भवमों भावत नास।
देह भावसो काल जगावे, निसिदिनि निजपग भास ॥
पतित दुखारी दिन निरबानी, नाम जपे अबिनास।
अनंत घटमो तूं हि रमापति भेदनुं को गुन भास ॥

[२२३]

बहु जनम गये भजन बिना, भरमत भरमत सीना।
जिय परदेसी सुमरन कामी, जनन मरन जीना ॥
पशुपंछी बहुविध जनम गमाये, अब नरपुर दीना।
अनंत भागी नाम निरामय, अजरामृत पीना ॥

[२२४]

कौन सुखी भव भरमो माहीं। हरि भजना बिन जानत नाहीं ॥
जोगी दुखिया परमारथ के, खातर भोगी बहुबिध धोके ॥
जपी तपी दुखी है ग्यानी बिबेकी, जाग्रत मन मों भेद अनेकी ॥
अनंत अभिमति छूटी जिनकी। धन्य कमाई भगती उनकी ॥

[२२५]

उमर गयी जा खल कामन मों।
मानव देहीं हीत गमायो, जप अजपा मन मों ॥
राम भरोसा निसिदिन रह्यो, त्यज ममता गममों।
तात मात सुत नार सनेही, सपना प्रेम मनसो ॥
काम बढ़ावै मोह तो भू को भाव घट्यो धनसो।
अंतकाल मो बढ़त जातना प्रीत रहे तनसो ॥
आतम व्यापक जानत नाहीं यो नर जनि पशुसो।
सदा धन की गुंगी आंखन, मान सती सुत सो ॥
अनंत मानी हरि भजना बिन, घात भयो जमसों।
भाव भक्तिन कु काल रिजावे, जा नरमति समसों ॥

[२२६]

भजन भरोसो जो जुगमों।
जोग जुगत मी देहन डारो। बिचार करो मनमों।।
नाना पंथमो भ्रमना सारी। अभिमति भर जगमों।
अनंत पन मो येक जनार्दन। शांती, नाश तमों।।

[२२७]

क्या भूल रह्यो प्रानी मनमो, भूको सब दिन भावत ध्यानी।।
मायापुरमों काम बढ़ावे, धाम त्यजो निज मानी।।
मोह उभार्यो जड़ तन परको, करत धंदा हयरानी।।
धन को खातर कष्ट बढ़ावे, नष्ट भयो अबसानी।।
दंभ लोभ ने ग्रास कियो है, नाहक जा रहि जानी।।
जनन मरन को धोको मन मो, प्यासो प्रेमन पानी।।
अनंत भजनों में रंग भरो संतन की निज बानी।।

[२२८]

जगमों रहिजो हरि भजनीं।।
मनवा दिन दिन जात रहयो है। काम लोभ पठनीं।।
जनन मरन का धोका मनमों। जागत ना कदनीं।।
अन्त आदि बिन अनंत सार्यीं। खोज करो सदनीं।।

[२२९]

प्रभुजी पावन तेरा नाम, निज सुख दायक धाम।
दीन दयाल तुम करुनासागर, सद्चिद् आतम राम।।
भाव भगति से पार उतारे पावे गति बिसराम।।
अनंत निसिदिन नाम जगावे और नहीं कछु काम।।

[२३०]

जगजीवन को दिल अनुराग, जहाँ बनी निज राग।
साज सुजोगी अनुभव भोगी, निरमल स्वातम भाग।।
समता जागी एक अनेकी, मानव मान विभाग।
अनंत शांती संत संगती, हरि के भजनीं लाग।।

[२३१]

भजन बिना धिग ग्यान ध्यान, सब अभिमान गती जगमांहीं ।
अपार माया पार न इनको, ग्यान ध्यान सब भरमाहीं ।।
काल दरारा कबहुँ न मोटो, अंतकाल मों डाम हो ही ।
बिना भगति से मुगति न पावे, जुगती मतिकी नितगेहीं ।।
जोही सोही गुलजार पनो में, कुटुम्ब कबीलो असनेही ।
आंखन देखो साहेब यारो, सुख, घनेरो तब माहीं ।।
अनंत जनमों नरतन जोड़ी, बहु भागन की सुखदायी ।।

[२३२]

दिन जात रहै नेह लोभ भरन पर खोजन है भव लोक मरन ।
देह गति को ठौर सुपाया, उपाय बिन नहिं मेल भोग चरन ।।
अजर अमर पद मों नेह नहिं, काल बीत गयो भर पोट भरन ।
करम धरमसों भेद बढ़ायो, बहुविध शास्तर मेल बोध पठन ।।
अनंत आतम भाव गमायो, भाव भगति बिन खेद रोग धरन ।।

[२३३]

बात बनी बनवाई मनकी, अजर मनोकी चतुराई ।
जीन्हो कीन्हो है उपदेशा, भव अंदेसा हरवाई ।।
भाव भगति को सायीं को जामे, बचनी मधुराई ।
दरस भयो तब हरिख न मायो, मन भाव जियो अमराई ।।
तन धन की सुद बिसर बिसारी, निज निज चारी गति धायी ।
भेद ले गयो खेद सहित मम, अभिमानाधम अनुपायी ।।
भगती दीन्ही मुगती त्यज के अनंत लरके करमायी ।।

[२३४]

किसने तिलक लगायोजी भालीं मम मौजी ।
अहंकार चन्दन की लकरी, सोहं भाव उगालो जी ।।
अनुभव परिमल स्वानंद पायो, अनंत भगती राजी ।।

[२३५]

कई किरपा तोरी राम जिदर नहिं है तिनकी जोरी भाव बिचर ।
समर जगावै विवेक मति सो, बनी है सुरता ठोरी सांग अजर ।।

असुर न आवै उनके जग्गे लगि है प्रभुता घोरी राग अघर ।
अनंत गरजे निगम नगारा प्रभु है भगती मोही रास सुभर ।।

[२३६]

पर परमारथ को बोध संतवादन । जगभारत को खोज अंत करन ।
निरधार गति निगम प्रभातीं । निज स्वारथ सो प्रेम संग भरन ।।
देह बिसराई गुन नवाई । बिसरे मन अभिमान भंग मरन ।
अनंत गुसांयीं भगती प्रवाहीं । भवसागर सो जोग पंथ तरन ।।

[२३७]

सबको है गम ग्यानन को आतम येकी बतावने को ।
आतम येकी कवन कहत है सो नहि गम मिलने को ।।
दूजेपन वित बात नहीं बनि, भाव सबी सपने को ।
अनंत नरतन भजन सुखातम तमहारी भरम चुको ।।

[२३८]

तुम बिन रामा भेद न जाय ।
सबही माया मत अभिमानी, भरमपनें जगधाय ।।
संतत संपत सबही झूठी, ममता मोह कमाय ।
अनेक मारग घट घट आतम भजन कला भरमाय ।।

[२३९]

परम पदीं रम अजित गती, सम अपरमीत गम जिय मोरे ।
जनन मरन दर सकल भरम हर, अजर अमर मति बिन घोरे ।।
गारे प्रानी मन बिसरामा, कामा त्यज भाव निछल होरे ।
कायकु डुबते मोह निधिमों, नाहक भ्रांती रज जोरे ।।
खेल बिधि को बेद पुरानी, खेदन हारे मयलो रे ।
अनंत स्वातम सागर जिवनी, जीव लहरी पन घोरे ।।
राहे मरियादा सदोदित शांती प्रेमा शशिको रे ।।

११—भक्ति

[२४०]

कायकू लेते भरम बुखारी, त्रिविध माही है बेजारी।
मोहकी फाँसी बंदी डारी, अभिमति जामों अनहितकारी ।।
हरि भज मनुवा विबुध विचारी, आपहि होजा निज निरधारी।
जोग भोग सब काल के हारी, अबिनाशी है भक्ति प्यारी ।।
अनंत नामी साही चारी गावन मुक्ती नाच नचारी ।।

[२४१]

जगवावो जगजीवन नाम, छोड रहो सब काम।
इह साधन में रम रहिजो रे, प्रापति स्वातम धाम ।।
बिन नहिं कछु ही साधन माही अभिमति जाग्रत चाम।
अंतकालमो सबही धोका, जब नहिं मति बिसराम ।।
आठौ पहर मों हरि रस चाख्यो, वद वद रामहि राम।
सबसे न्यारो सबमें मिलके, पूरन जिनको काम ।।
अनंत गावत नित्य निरंजन कर्मा कर्मी अकाम ।।

[२४२]

बरसत अमृत निजबानी, भगती भाव समानी।
स्वातम विलासी परम प्रकासी सद्‌चिद् नाम निशाणी ।।
देहभाव को ठौर हरावै, दुबिधा मति खानी।
अनंत गावै निज हित भावै, आपी आप सिरानी ।।

[२४३]

करुनाघन की बरखात बनी, बरसे अमृत निरबानी।
त्रिविध ताप की भूमि शांतवो, समता अपनी महिमानी ।।
मानित साधो साधन हारे, सावध होवे जगध्यानी।
निज हित बासी निरजर जमुना, मति मांही गहिरा पानी ।।
सद् गंगा में संगम अन्दर, स्वानंद निधि पहुँचानी।
अनंत भरमो करम धरम सब, त्यजके भक्ति मैदानी ।।
भाव भरोसे नित्य बनो है, अब गई दिलकी अनुमानी ।।

[२४४]

तेरो छन्दु बिहारी मनमों, लग रहियोजी हरदममों।
नैणत और कछु साधन नामी, निरधार बन्यो जगमों ॥
दास की आसा पूरन करिजो, हरिजो भवको भरमो।
अनन्त माहीं नित्य नवाई भगती भाव गमो ॥

[२४५]

करुना के सागर प्रभुजी तुम, पावो दिन के खातर जी।
पतित पावन अरिमद हनना, दे दरसन हरि सुन अरजी ॥
तुम बिन कोई जानत नाहीं, सब ही मतलब के गरजी।
तेरो पग का नित्य भरोसा, राखहुँ दिलमो निरमल जी ॥
अनंत नामी अनाम तूंही मुद्रित सब स्थिर चर जी ॥

[२४६]

कायकु मानव देहि धरे प्रभुजी को बिसरे।
रे हत भागी नहिं अनुरागी, तनही अंति जिरे ॥
चेतत नहिं मन भव भ्रम कारन, डूलत मोह भरे।
काल गति मों जोग जुगति सब, गुनके पासि परे ॥
अनंत भगती निज सुखदायी निरमल निज झरे ॥

[२४७]

भगती बिन है कबहुँ, गति भव भ्रम की जुगती :
कोई भावे त्याग मनोका, कहुँ गावत मुगती।
कितेक ग्यानी सोहं ब्रह्मी अभिमति के निरती ;
समाधि आसन मुद्रा माहीं, कितेक जग धरती ॥
अनंत घटमों भगती जागे, गावे निज कीरती ॥

[२४८]

पावन भगती के परकास शाम रमै अबिनास।
करम प्रभावो अवगम त्यजियो आगम भाव बिलास ॥
जा भव माहीं, जाग्रत मति नहिं बिखय रहा अबिनास।
धन कछु नहि जानत निजपग मों लगि आस ॥

[२४९]

नहिं जन मन मों मन मोहन मो काम न मोहन है जिह• तन मो।
त्यजि मैं आसा मो पन की सब, किसन की छबि देख परी तब ।।
अब नहि न्यारी होत पिया से, अनन्य दरस सुभाव दियासे।
प्रिय की मैं हूँ पीया प्यारी, अनंत भक्ति भाव अधारी ।।

[२५०]

परम पदीं जीय रमैसम कामजी उनको राम रटे।
अंदर रामा बाहेर रामा रामहि रामा भाव नटे ।।
भ्रांति नुरेमन शांत भये जिय आत्म प्रचीती हौर घटे।
भगती मुगती बात नहिं माने भगती प्यारी नाम भटे ।।
निसिदिनि गावै नेह लगावै स्वारथ पावै अंत मिटे ।।

[२५१]

तुमरे दरसन बिन जिय घोर। गुन रैन तम जोर।
प्रबोध तमारी निगम किरन रवि। करिजो स्वातम भोर ।।
अंदेशा मिट सकल पातम। भाव करिउं अघोर।
अनंत भगती निज सुख शान्ती। स्वातम गति सिर जोर ।।

[२५२]

परम पुरुख निरबान हरी मुदित भयउं समरी।
सद्चित् ,माहीं अनुभव सहजीं समता भाव भरी ।।
सब घट माहीं काल गती मो सोहो काल हरी।
अकाल भजनी अकाल दिन ही अनंत बोध परी ।।

[२५३]

सब घट माहीं येक हरी जानै नर अजरी।
आप पर नहिं है, हिरदेमों जैसा तैसी परी ।।
ज्ञानाज्ञानीं आपि अकेली संसृति भ्रांति हरी।
अनंत निरमल गंगा जमुना भक्ति बोध सरी ।।

[२५४]

अमित नीर चरन ठोर मरन घोर वारी।
भजन भाव अजर ठाव सुधन मती बढ़त सांव ।।
जड़त प्रेम सुभ सुभाव निज नीर धारी।
रैन गुन सपन दसा मोह लोभकार निसा ।।
जोग भोग भ्रांति दिसा दिलकी परिहारी।
ध्यान ध्याय ध्यातपना येक तूंहि निजधना ।।
अनंत मती बोध धना सदय जगाधारी ।।

[२५५]

घड़ी पल दिन सब जात रहे हरि भजना बिन खोये।
चेत्यौ अंधा भज गोविन्दा भवगति नासक है ।।
भेद हरावो निजसुख पावो, पावन भाव दये।
अनंत आतम तात पिंड दिन्ह प्रबोध गंग गये ।।

[२५६]

जागोजी निज जुगतीसो। घोरत नर तमसो।
खोजो भाई अपनी सोई। छुटजा जम कर सो ।।
कोई नाहीं भीतर भाई। न्यारो हो जगसो।
अनंत प्रबोध दिनकर निकसो। खोलो पट रजसो ।।

१२—प्रेम

[२५७]

पायो प्रीती पीतम प्यारी। बैरागन मैं भोली बिचारी।
करुनानिधि है पतित उधारी। भवगति भरमो सब परिहारी ।।
नहिं कीन्हो मैं जोग जज्ञ तप। नाम जगावत दिन मति सो जप।
अनंत भूमिको बोध भरोसा। रचा तम चिन्मय प्रेम परोसा ।।

[२५८]

कीरति कानीं परि सुनि भाव । मांगत पग रजि० ठाव ।
रज जागरती मोह दंभ मद । मायामय पछताव ।।
दुरलभ दीन्हीं नरतनु माहीं । स्वातम सुख बतलाव ।
अंत न भावे ऐसो प्रेमा । अनंत मति लगवाव ।।

[२५९]

कौन उपायी बनि आवे । निज प्रेम सुभावे ।
माया मोह नदी सो तारे । अजरपन सुनावे ।।
दिल का ये हेरम दिल मो भावे । ऐसो जमा जावे ।
अनंत अनुभव शांती खातिर । अभिमान गमावे ।।

[२६०]

सजना प्रीत लगी तोरी अब मैं मनकी अभय अघोरी ।
जनम जनम के भाव भगति की लाभ लिये तिजोरी ।।
बिराम अनुभव भोग निजको परासर सांब बिहारी ।
दरश द्रष्टा दर्शन बिन है अनंत मति भव पारी ।।

[२६१]

अनामी कीन्हों गिरधारी साजन गेहीं हंस मुरारी ।
रमता रमा है जा पग माहीं वो तनमो खंड विहारी ।।
अखंड पनं सो हिरदे हमरे सोवत घटघट कारी ।
अनंत संती भुक्ती शांती सो भागन घर बारी ।।

[२६२]

मति राजी प्रीतम संगीं भई हैं अब मैं निगमन रंगी ।
बालोपन मों नेह मनोका कब मिलिगो बहु रंगी ।।
मारग चालत निदिध्यास घनो अनुराग गती अभंगी ।
अनंत शांती साछी आतम अनुभव देह प्रसंगी ।।

[२६३]

दीन हीन तुम बिन, घननील ! भावत मन माहीं ।
जागरति जपित ध्यान, मथित मति सुगति मान ।।
सपनो अनुमान जान सुसुपति नाहीं ।
कारज नहीं करम गति, जानत नहिं ग्यान नीति ।।
जनन मरन रहित भीति, नरतन की धाई ।
सहज लगी भजन प्रीति, आपहि दिन्हीं निगम नीति ।।
मन भावे न हिताहित, अनंत कमाई ।।

[२६४]

दरसन बिन हुं अनुरागीं । जगमो सजना मति बैरागी ।
जब लग तेरो बास सेज पर । तब लग प्रेम सभागी ।।
सनमुख रैन दिन सोवत जागे । रति लोभ सिरहि जागी ।
अनंत भगती किरत बखानी । निज भातीं लय लागी ।।

[२६५]

समज मना भेद बड़ो कलिमों ।
कोन न अपना मीतर भाई, मोह जड्यो तनमों ।।
नार सनेही सुत अधिकारी, हीं मत बड़ी जगमों ।
निकर जायगा येक दिन हंसा, मट्टी जंगल में ।।
धन दौलत की बनी हवेली, सुरत रही इनमों ।
मोहे पीछे भूत बनेगो, धाक दिजो जगमों ।।
राम नाम बिन मुगति न जाने, संत सुभावन मों ।
अनंत प्रेमा पायो अपनो येक पना पनमों ।।

[२६६]

समझावो दिल, दिल मों दिल सों ।
भरमावो मन मत या भव सों ।।
जो घट माहीं व्यापक सोही घट घट मों, अगसो ।
दूजा नहिं कोइ समजे भाई नाम जपो हरदम सो ।।
ताप मिटावो जाग्रत भव को, अनंत गीत निज बखो ।।

[२६७]

प्रीत बनी मति माहीं प्रीतम नीत नयी अब निर्गुब नीगम ।
स्वातम तुर्या भाती उन्मन मोहे मोही जाग्रत ऊगम ।।
तन सुद सबहीं बुध गम हरि हैं साजन भावो निर्मल सूगम ।
रैन दिन मो एक अनेकी अनंत शांती मोचक विक्रम ।।

[२६८]

जगमो काल अकाल भयो जिस मन भावै समता उदयो ।
जगसो न्यारो निज निरधारो भ्रम को नास कियो ।।
आस नहीं है मन मों तनकी बिधि को भाव गयो ।
अती काल गति निजपग माहीं अजरामृत प्रेम पियो ।।

[२६९]

मैं हूँ दासी अविनासी सदपग माहीं निजपग बासी ।
अर्थ अनर्था जानत नाहीं अब मति नहि तन फांसी ।।
झूठ खरो जगभान अमानी भावै भव उदासी ।
शत्रु मित्र नहि पात्र प्रियार्थी आर्त प्रभु विलासी ।।
अनंत सहजीं शांती भूतीं दुबिधापना क्रमनासी ।।

[२७०]

नहि देने को नहि लेने कू, सौदो मन को अनन्य पन को ।
जग जीवन को नेह अजर को, कोई बिरला जानत परखो ।।
जिनको तिनकू अनंत जगमो, परखन हारो चेतन तन मो ।।

[२७१]

सुख बरनन न जाय कमाय सम, गमाय आगम धाय ।
नाम परताप काम हर माप आप आपमों धाय ।।
सो अनुभव प्रेमारथ हरि भवभाव सुबोध उपाय ।
जनम जनम के सुगम उगम के नीगम भाव कमाय ।।
जागत जोगी निज सुख भोगी त्रिविध ताप बिसराय ।
जमकी बाजी जिता जियो जी जीय जगावत न्याय ।।
अनंत आतम अलख बिरामा भगती बोध कमाय ।।

[२७२]

जय जय जी जय बलिहारी, निरगुन रूपधारी ।
अब मैं नमाऊँ शीस पगों पर भरम भयो बारी ॥
अजब बनी है पीतम तोरी, माया गुनकारी ।
अनंत संगति चित्त मिलाओ समता संसारी ॥

[२७३]

सुखदायक प्रभु के गुन गाय, रैन दीन कर धाय ।
जा भव माहीं आन उपायीं सबहि अकारथ जाय ॥
काम खलादिक काल हयरानी जानी नाहक जाय ।
अनंत संगम मानव गेहीं साधन भाव उपाय ॥

[२७४]

करुणा के सागर को मन तुम, भज भज मंगल गीत गावो ।
छोड़ो अभिमान बिनती सुन मोरी जो रित पानी समजावो ॥
मान तनो का मन से जीतो भवगति सबहि हरवावो ।
धीरज राखो निढल पनो सें घट घट येकी जगवावो ॥
रज कर दम से पार परो रे निज सुख अपना मिलवावो ।
फेर न ऐसो डाव बनेगो मानव तनु को परभावो ॥
अनंत शांती संत संग धनीं बनि बनवाई समजावो ॥

[२७५]

खोज किन्हो आगमार्थ सोहि साँच परमार्थ ।
गून भाव भगति आर्त जगहितार्थ बानी ॥
संत, दयावन्त, धनी, बोध निजें दानी ।
स्वकिज धरम धारनार्थ उदित भयउ मति समर्थ ॥
निगम प्रभाव तारनार्थ सार्थ देह मानी ।
क्रम अनंत नित्य नयो भ्रम महंत भास जियो ॥
सबहि न्यास छोड़ दियो भयो अभय दानी ।

[२७६]

साहेब के घर को सरदार स्वसुख रहा परदार ।
अगम अगोचर गून लोक पर भाव बन्यो निरधार ॥

ध्यान अभाव है बिबेक संगा स्वातम, मोसुलदार।
अनंत स्थिर चर माही मानव काया नासुकदार॥

[२७७]

सो बेक ग्यानी चतुर सुजान टार्‌यो है अभिमान।
मानत भवमो आतम सुगमो उगमो निज निधान।
घट घट माहीं अलख गुसांई कबिहुं नहिं हयरान॥
मान गुमानी नहीं मनमानी मानी गुनगति रान।
सहज मुद्रा जोग समुद्रा, कोटक ब्रह्म समान॥
भेद भावना जिनकु सपना, माही नहि तिल जान।
अनंत बंदी उनके फंदी, बलिहारी अवसान॥

[२७८]

बनी किरपा जिन पर तोरी, सोही सोहत मान अघोरी।
पतित उधारा अमित उदारा, सूद रहो मति मोरी॥
भव डर हारी अभिमति कारी, मोह बुखारी थोरी।
अनंत आगम बसंत संगम, जंगम बुद्धि चकोरी॥

[२७९]

घट घट मोही अघट निहारो, बिकट उतारो भवपारो।
निकट कीजो जन सुजन जगमों, जागरती रति अंधियारो।
समागम सुख संत सुबोधे, आतम रवि को उजियारो॥
संत संग बिन अंत न हारे, काल दरारो भ्रमना रे।
आतमान्वई खेद हरावें, लग जा हरि को भजना रे॥
हरि गुन गावे एकोपन में, अनेकपन मो मिल जा रे।
अनंत अखंड अपार लीला, आपी आपहि देखो रे॥

[२८०]

तुम बिन सबही विफल उपाय नाहक मान बिकाय।
सबही माया नाना रंगी अंतीं भारि अपाय॥
करम धरम सब बिधि अंदाजें द्वैत सकामिक न्याय।
अनंत जाने नाम प्रतापा ततही निगम जगाय॥

[२८१]

जग सो जग' मौजी जंग [१४]चार, अनेक गति अविचार।
गून रैनमो जाग्रत सपनो, निज को नहिं हुँ बिचार।।
ग्यान ध्यान सब अभिमान, बनो है बिषय बिलासक जार।
जनन मरन मो तलफल प्रानी, अनंत घनो घन चार।।

[२८२]

नाथ बिना जानत' नाहीं जग सोभत वोही।
अलख पलख में रम रहियो जी, निगमागम सांयीं।।
ग्यान ध्यान सब जाके खातर, ममदिल समजाई।
योग, याग जप अनेक मारग, धुंडत जग माही।।
अनंत सब दिन सन्मुख ठाड़ो, किनि जनम भर पाई।।

[२८३]

जागो जोगी निज कारन मो कारज कामिक नच •हेरो।
जुगत जुगति सो जीय जियायी, मोह गेहको जगघेरो।
जनम मरन को धोको मनमों, बाजत गुनगति अंधियारो।।
प्रानी जानत नाही कछुही, चेतन तनको उभारो।
अंत न माया पूर भर्यो है, नाना गति सो संसारो।।
अनंत आतम अलख सबों मो व्यापक होके निरधारो।
मन बुद्धि सो संगम सागर, अभेद भजनि उजियारो।।

[२८४]

देखो जोगी रमता अवनी, घर घर फिरता नउखंडी।
दसवे खंडी अचल बसत है, गुनातीत यति बेदंडी।।
कारज कारन सबही देखे, लेखत पूरन क्रमचंडी।
काल कालिका उजाल अपनो, जैसी अगनी लोखंडी।।
हाल मस्त करि ख्याल खुशाली, काल अकाली पगतंडी।
घरबारी है अलबेला मन प्यारी जिनकी परचंडी।।
अनंत तुर्या भाव झुलत है सहजिक लेखत तनखंडी।
नाम प्रतापा बरनित बानी लहरी सागर ओसंडी।।

[२८५]

जाको नहिं कहिं ठौर ठिकाना, तांको नय लय. संत मकाना।
नाम रूप नहिं रंगत हांको, खोज सुहावत संत सदा को।।
ऐसो बांको भाव बिलासी, जग सो न्यारो जग अभिलासी।
अनंत प्यारो बिचार लागे, जनम मरन को डर सब भागे।।

[२८६]

अघोर निजमों सोह रही, मोह बिसारी, आगम चारी।
कामकु भाव नहीं निज गति आतम नाथ जनार्दन एक सही।।
अनंत बानी निरमल पानी शांती ठौर मही।।

[२८७]

काया मानव की धन भागी जिन खोज घनो गुन रागी।
गुनातीत मो लय लागी, समता भावै मन अनुरागी।
अनुभव प्रेमा आतम अंगी, आप आपिके सोहत संगी।।
लख लखाट जोत बिरागी शांत दया भयउं अजि तंगी।
उदय प्रबोधी मति सत भागी अनंत हरदम भाव परागी।।

[२८८]

मुद सजनन की मोकु आज भयी, तन मन धन की छोरी लाज दयी।
बहु दिन मारग निहारत ठाड़ी, जनन मरन की मोही भान गयी।।
आतम रामा मन बिसरामा, निज निरमल की बोध बात नयी।
अनंत अनुभव निज निरधारी, ध्यात ध्याय तोरि नाथ सई।।

[२८९]

निरधार भयो आवे धाम नजर अनुहत बेनू बाजे झांज झलर।
तिनो अवस्था अखंड भावै, आँखि लाग रहि रागे सांग सदर।।
पद रह राहै राह बतावै, सो अनुभवि निज भावै राम अजर।
आनंत गोचर गोरस आतम, निरजर प्रेमा पावे शांति सदर।।

[२६०]

जाकी महिमा ठौर अपार, कहँ लग बरनूं पार।
थकित भयी गत वेद पुरानी, पावै नहिं निरधार॥
जोगि मुनिजन सज्जन साधू, करतहुं नित्य विचार।
सो प्रभु सत्तम भगती वत्सल अनंत भाव प्रकार॥

[२६१]

जिय नहिं पिय नहिं शिव नहिं सगती।
इह नहिं तिह नहिं इह गति जगती॥
जगती गति इह शिव की सगती।
पिया ताही जिय ताही ज्याहि तगती॥
भाव भगति को परभाव भयो, सुभाव संतन को प्रेम दयो।
अबिनाशी को नाम पसारो, अनंत गावत सारा सारो॥

[२६२]

भूल परी परमारथ रतकी। कीरत कीरन रज जागरती।
बहुविध बकवा बरसत बानी। साधन मारग लौकिक धरती॥
अंत न मीलै अंत तोंवरी। काल बढ़ावै मरन की भीती।
अनंत जानी मो मत पानी। रानी राजा जो समानी॥

[२६३]

माया मोह निधि मों जिय मोजी।
दुरलभ काया बनि मानव जी। मीनवत तलपै भव काजीं॥
पाप पुन्य मो जनम हर्योजी।
जंजाल जाल सो मत पाजी। भेद भरम गम मोराजी॥
काल डरोकी लय सय बाजी।
अनंत भगती भाव धरोजी। आप आपनी खोज करोजी॥

[२६४]

चलबल हो रही मन मनसो, देखो अब मैं सभाव जगसो।
येकहि पानी बहु बूंद बरसे, झिमझिम घन अवनी सो॥

नाद ब्रह्म है प्रकाश पनके, स्वातम नय घट घटसों।
अनंत मायामय जग माहीं, भवसागर नाम बसो॥

[२९५]

जाने तेरा खेल गुनों का सब ही माया जग साजे।
आपि निहारी आपि खेलगड़ी आपि आपनी भव गाजे॥
बहु विध लीला होत जात है काल गति के भरकातजे।
अभिमानपने हयरान गये सुख दुख मनमों भर माजे॥
जैसो भावै तैसो पावै मतलब गावै नय बाजे।
कोई बिरला देखै समता जामो अनुभव बहु बाजे॥
अनंत शांती सतगुरु बचनीं चिन्मय स्वरूपीं मन घोरे।
एकपनो से जनी जनार्दन अखंड समयो गम जोरे॥

[२९६]

जनम जगीं सुफल कीन्हो, कीन्हे राम गयो।
भरम भाव बिखय घांव। स्थूल मती अभिप्राव॥
जागरती गुन हांव। वासना हरायो।
सकल काल गीत गुपाल। गात ध्यात अजित पाल॥
सदा मगन रंग लाल। लगन लगायो।
जीव शिव ऐक्य जोर। मथित राग भयउं भोर॥
अनंत प्रेम पुर अघोर। सुगम उपायो॥

[२९७]

भरम मिटादे जियजी दिल को।
सबसे न्यारो आतम तूंही, खोज करो भवको॥
माया गुनन काया माही, मोह जड़ो तनको।
गोत दूत सब इष्ट भीतर, व्याप बड़ो धनको॥
माया मद मों मत रहियोजी, खोज करो निजको।
दिलसे न्यारो होजा बाबा, न भरोसो तनको॥
परम पदो का पवनो शीतल, अनंत बोधन को।
सहज बिराजे आदि अंत बिन भगती भावन को॥

[२९८]

भूंदी घेरी सूद बिसारी, संसारी मद मोहरसी।
जलके अंदर मीन जड़ो है जैसी गल मों गत बड़िसी।।
सूरज किरनी नीर बिराजे, मृगजल भासे भ्रमनेसी।
धूंडत जंगल तृषा न वारे, वैसी माया मनवासी।।
हैरान गती काम मती सो, राम न गायो सुखरासी।
भाग न पावे रागनि जाको, संत संग बिन जन प्यासी।।
अनंत घटमों येक जानके, भजनी रहियो समतेसी।
निज हित कारज नीत बिराजे आतम आगत महिमेसी।।

[२९९]

मीन तलपे नित पानी मों, तैसो जग है मन जानी मों।
मच्छन प्यासा नर नहि रूखा चड़े रहे सब गल मों।।
मोह लोभ के मारे मरते, अभिमति के बेसन मों।
अनंत देखे नित्त तमासा, संतन के संगत मों।।

[३००]

अहंपन सो चंदन लकरी। सोहंपन सो गंध उधारी।
आतम कीसन भालि चढ़ायो। हम तुम बाता नाद मिटी जो।।
जीय न सीवा भाव निवारा। सबमों येकी दीपन हारो।
अनंत गिरि की निरखित बिनया। जनी जनार्दन रूप न छाया।।

[३०१]

जब है साहेब अन्दर घटमों। सबाहय आवत बात न नटमों।
कायकु भूल्यो प्रानी मानव। भाव अनेकी ना समता तब।।
सब मों सांचो व्यापक सांईं। परि बिरलो में बसत गुसांईं।
परमानंद न सद् चिद् घनू। आपि घनानंत घट घट जानूं।।

[३०२]

काल गति को भाग भोग तुम, राग द्वेष मति अभिमानी।
भवसागर को लहरी बिषया, मद घन की तूफानी।।

कर्म धर्म सब उलट बन्यो, है रैन अंधियारी हयरानी।
जनन मरन को भाव बतावे, जिय मूढ़ मति• तन मानी ।।
नर देही मों खोज आपनो, आपीं आपहि सममानी।
नित्यानित्य बिचार पाके, अनुभव परमारथ पछानी ।।
देह बासना दुबिधा त्यागी, अंति कालगति अवसानी।
अनंत शांति निजसुखदायी, निरमल सद्नाम निसानी ।।

[३०३]

मान बनो उपराठो खोटो। जगमों मोसम जग मोजी।
समजत नहि है कौन देहीं। काल की लीला परखोजी।
अभिमान मति जागरती मो, चलबल हो, रही दिल भोजी ।।
बिखय बिहारी आप पराई, मतलब हारी गुनकाजी।
सुख दुख गम दिलमो भेदी, रज मत बादो नर बाजी ।।
खोज नहीं है पायो प्रानी। अपनो मानव भरमोजी।
अनंत राजी सबभो सहजीं परि नहि जाने महिमा जी ।।

[३०४]

करम गती दुरधर प्रानी, खबर नहि विधि हरि शंकर को।
ऐसी माया नार ठगनी, खोज करो मन अन्तर को ।।
रंग पतंगा दीप दिपावे, रजनी माही भरमन को।
दीप पातरमो गिर पड़त है, नेहि डुबत है सो परखो ।।
जनम देत रछ समेत करित अन्तर खेल भवो साजन को।
रंग मिलाके रंग रिजावे, जैसी लाटा सागर को ।।
अनंत बालक चालक नर तनु, वानि बिरागन पर भूमि को।
संतो जाने और न माने, अनुभव राखे जाग्रत को ।।

[३०५]

जीय जियोजी निजमाहीं भज भज आतम प्रवाही।
मत भुलना रे तब अभिमानी भवमो कछु सुख नाहीं ।।
जोग जुगति सब गुन चतुरायी, मोहमती भरमायी।
अनंत संगति संतन पायी, नरतन साँच कमायी ।।

[३०६]

मन है लोभी तनके अंदर, बिखय विलासा भव मानी ।
जानत सबही तन जाने की, और करे जिय जिनगानी ।।
धन दौरतमों रत है लोभी, मोह तुफानी भर जानी ।
रैन दिन मों भरम बढ़ावे, मानत नहिं मूढ निरवानी ।।
नाना रंगी मिलके भूल्यो, अपनी नहिं है लयजानी ।
अंतकाल मों बहुत बुराई, नाहक लग रहि हैरानी ।।
अनंत हरिगुन गावै बिरला, घटघट भाख्यौ मृदुबानी ।
जा जुगमाहीं सो नर दुर्लभ, जैसो गंगा के पानी ।।

[३०७]

सब घट मों पूरन अविनास । देखो साजन वास ।
माया मोह मों मत भूल जीयो । धरिजो निजपदि आस ।।
दुर्लभ नरतनु प्रापति पायो । वामों निज परकास ।
अनंत शांती अनुभव जोरी । लग रहियो निज ध्यास ।।

[३०८]

काया मानव की गुनकारी, इनमो है येक पराई नारी ।
जिनकी घड़ामोड़ भवपारी, भेद भरें अभिमान बिकारी ।
तीनो जगा जोत बिहारी, आपनी आपहि करिउत प्यारी ।।
बहुविध तरंग निर निरधारी, अनंत सुदीन घर बारी ।
हारी जीत परिहारी हंस, राखा गुपताकारी ।।

[३०९]

काया नगरी निज रखवारी जोरि बनी मन मानव की ।
खोज करो जलदी अपनो जी, जाय दसा हर भावन की ।
गावनि की नित पुरुषोत्तम प्रभु, पतित अनाश्रित पालन की ।।
जोग जुगतिसो मुगति बखानी, ग्यानी ध्यानी मानन की ।
जानन की जब रहा लगी तब, प्रीत न छोड़ी या तन की ।।
अनंत माया मृगजलवत सो, भरम बलावत भासन की ।
रास रमापत परमातमसम, गम मिलवायो या जनकी ।।

१३—मन

[३१०]

मन तुम जानी भूलमत भवमो दुर्लभ काया मानव की।
मात तात सुत नार सनेही, सब जग जगमो मतलब की।
जब लग संपत तब लग प्यारी, बात लगावै लालन की।।
काल न जाने कैसी आवै, आम न छूटे इह तन की।
धनकी लालस मत रखना तुम, हरिभज आतम हरदम की।।
दीनपनो से दिन कट दीजो, धीरज मति इह मेलमकी।
अनंत आतम आदर अनुभव, बात न आवत तेरमकी।।

[३११]

मनवा हरिबिन भव धोका भरम भर मनोका।
जो मन माने भाव दृश्य मो, नासक संतोखा।।
विखय विलासी निजहित नासी, तृषित भाव जगोका।
अनंत शांत। अनुभव जोगें भगती भाव बिलोका।।

[३१२]

रहिजो मन संतन के साथ, भव उभार सनाथ।
या भवमाहीं सार्थक वोही भजले जानकीनाथ।।
छोड़ गुमानी मत अभिमानी, दे संपत पर लात।
अनंत नामें आननि गावो, अंतवरी दिनरात।।

[३१३]

मनवा नाम न गायो हरिको, नाहक खोयो नर देहन को।
पायो न अपना हित सुआतम, भरमो में जिय माँही धनको।।
देखो देखो खोजो अपना, अंतर भाई समजन लेखो।
अनंत ना पर नच सुखमानी, मानी आपहि रूप अनेको।।

[३१४]

मन खरचत नहिं कछु गठरी, भज भज हरि जठरी।
हरी नाम बिना काम न पूरन, कायकु दीठि न ठरी।।

मोह लोभसे आतम सूधो भेदपने बिसरी।
अनंत भरोसा जा जुग माहीं, सुख बहु है अजरी।।

[३१५]

बात मनो की विषजन घेरी घेरो भ्रमना घोर घनेरी।
रैन दिन मों मोह लोभ मद धन, सुत मंदिर मों प्रीत घेरी।।
जात रहे दिन हयरानी मों, हय गज धेनू मति निज हेरी।
हेरी कौनहि बिरला बिरली अनंत अनुभव बात उजारी।।

[३१६]

भज मन जानकी जीवन् राम।
जाके ध्यानी नहिं हयरानी, सबही पूरन काम।।
शुक सनकादिक कीरति गाती, अखंड निरमल नाम।
अनंत साछी बेद पुरानी, भाव भगति बिसराम।।

[३१७]

मनबा बस करि राखो, संत समागम चाखो।
करम धरम सब भ्रम के मारे, घर येक न देखो।।
खोया सबही नाहक जानी, जानत नहिं तांको।
अनंत नामा गुन बिसरामा निसिदिनि मन भावों।।

[३१८]

समजमनो में करिजो अपना।
ज्गा भव माहीं नहीं भरोसो काल गति सपना।।
घड़ियल जावै फिर नहिं आवै निसि दिन मों हरि जपना।
भेद भाव में संकल्प गति देह भरोसें तपना।।
सुंदर देही अजयपनों की मानवी चतुरपना।
अंति न आवै कछु ही संगति दुरमद मों खपना।।
स्वातम प्राप्ती साधु संगती भरपाई बग ना।
अनंत भवती माहि बिराजे लौकिक सो लपना।।

[३१९]

मनवा कपट की लकटी लपेट भइ मति तापर भैंट।
गून रैन मो समपन शांती कबि हो, नहि भइ, भेट ॥
कूद परो रे निरमल डोही जामो अनुभव रेट।
अनंत संती गहिरि जमुना जसुमति बालक भेट ॥

[३२०]

समज मना मतलब अपना।
राम भजन कर सार मिलावो नाहक जग सपना ॥
काल गति को गम नहिं यारो छोरो घोरपना।
मोह लोभ मद अभिमान मति अबिचारे तपना ॥
कौन न तोरो तुम नहि किनको सब घट येकपना।
ब्रह्मा पिपली स्थावर जंगम माही हरि जपना ॥
मानव काया आतम छाया पाया भाग घना।
अनंत शांती अनुभव प्रेमा कारन मन अमना ॥

[३२१]

मेरा मन तुम बिन सुख नहीं भावै, पूरन काम परम धाम।
आतम सब माहि सम जगत अमित एक नाम निसिदिन गावै ॥
भवति भास सब हुरास भेद मति भयउ नास निरंजनी नित्य बास।
नास भास जावै धन्य भाग अनुराग जामो नहि बेद भाग ॥
सो अनंत सहज राग निज लाग लगावै ॥

[३२२]

हरि हरि भज मन त्यज कुमत को सुमतमों है निज निरबानी।
दो दिन खातर भवके पासी जग भ्रमनामो है हयरानी ॥
मानव मानी समता बानी सो नर दुर्लभ जिसबिध पानी।
साधन धरमा त्यज सब करमा चरमा मोहे स्वातम हानी ॥

[३२३]

जोगी खूप बना। खोज कीजो अपना।
बिभूत चढ़ाई तनमों। सुरत लगी है मन की धन मों ॥

जटा बढ़ा जो भारी। धूंडत घर घर परकी नारी॥
गंगा तीर का बंगला। देखन मों आवत बहु उजला।
अनंत मानी हरिखा। जा मन लोभ नहीं तन धन का ।।

[३२४]

कायकु लीजो जी संन्यास।
भगवे कपरे शीर मुंडावे। करि तीरथ परवास ।।
अंतरजामीं मोह बढ़ावे। संचित पर बहु ध्यास।
चिंता मगना अनंत ध्यानी। अंतकाल मो प्यास ।।

[३२५]

सुमरन भयऊं निज अनुराग नित्य जगावै लाग।
सद्चिद् पगमो आनंद घनो, स्वातम भाव पराग ।।
चारी धरमो धूम मचाई, रजतम को नहिं भाग।
अनंत नरतनु दुर्लभ पाया, भेदातीत सत भाग ।।

१४—अजपाजप

[३२६]

घड़ी पल चल रहि जानी, जनी सो नहिं जाने नर निरधारी।
घटित प्राक्तनीं काल भ ग बल, अद्भुत गति है गुनकारी ।।
होत जात रहि लीला प्रभवें, भाव अनेकों श्रुत सारी।
अभिमाना बिन नजर न आवै करता कारन संसारी ।।
व्यापक माया आतम धारें जानत बिरला सुविचारी।
अपनी लीला आपि भरमावै अैसी अजपहि बलकारी ।।
अनंत अभेद संत भरोसे, नाम जबानी ललकारी ।।

१५—सहज

[३२७]

समजे मनमों भाई अपना, हिसाब नरतन स्वारथ को।
सबहि पसारा दृश्य तमासा, गुन भूत मर कालन को।
त्रिपुटी माया रंग बिरंगी, भोजन में बड़ो मानव को।।
बुद्धि बल है जा तन मौजी, खोज रखो मन गमको।
कौन नचावै कौन नचत है, दोही एकौ मतलब को।।
अनंत साहीं सतगुरु लिख दिन्ह बाता आगम नीगम को।
सहज वन्यो अब भाव निमग्न है जनन मरन डर नहि जम को।।

[३२८]

भेक अनेक मों हरि एक, नेह बनो निज लेख।
कोहि नहि दूजो अंतर खोजो आगम रूप अलेख।।
निरगुन नहि है सगुन नहीं है एक अनेक।
सहजपनो का खेल अनंती आतम भाव सभेक।।

[३२९]

कीजो किरपा दीन के प्रतिपाल जय जय देव गुपाल।
अखंड हिरदे में मौरजी बैठ रहो किरपाल।।
जन के मारे मन नहि व्यापो व्यापो आतम भूपाल।
अनंत सहजी को है भावे को मत त्यजि जो पाल।।

[३३०]

वद वद रसने दिन निसि माँही, रामहि रामा बिन मछु नाहीं।
जाग्रति जाग्रत नाम प्रवाही, मिलके मिलना सद्पगि भाई।।
पकरो निज सुख दस दिस तूंही, तुम बिन दूजा भरम भरमाई।
अनंत घटमो आतम समाधी, सहजपने की अखंड पाई।।

[३३१]*

करिजो अपनो सुफल बिचार त्यज भव रजत बिकार।
घट घट सांहीं अलख गुसाईं भाखौ निज हित सार ।।
सहज प्रभावै समता भावै छांड़ चलो अविचार।
ज्ञानाज्ञान की गठरी बांधी व्हांमो नहिं निरधार ।।
संगम सज्जन कर हरि गावो उतरो रे भवपार।
अनंत शयनीं स्वात्म निधिजा पग मिलणी अबिकार ।।

[३३२]

भवती मोनहिं कछुधार समज मन।
जंजार भयो निज कारन नेगत दुर्गम अपनो पार।
कोहि जोग में कोहि भोग में गुन रजनी अंधियार ।।
ना बुगमाही नाम प्रवाही लाभै निज सुख सार।
अभिमति जिनकी दुबिधा मन की नेथ नही निरधार ।।
सद्‌चित् सुख धन बरसत बानी सज्जन भाव विचार।
अनंत सहजीं सत संगत मों रम रहियो अबिकार ।।

१६— उन्मन

[३३३]

स्वामी रमापति पतित पावना, नाम जगावत निरधारे।
स्वातम रामा स्वार मनोपर सहजपनोसें जगकारें ।।
रास मनो में स्वारथ गोपी, भान लुभायो ममता रे।
उनमन अनंत इह पर देख्यो, ऐसी लीला अजरारे ।।

[३३४]

कौन कौन हरि गुन आठ वू अंतरि अब मैं समता उनकी।
कीसना कान्हा मिस बालके, काल काल के प्रभुता निजकी ।।

---

* चाल: —'या बलमा के दरस करोजी (मानपुरी कृत पद संख्या ३२६)
हिन्दुस्थानी भाषा।

भजन भरोसे नाम जगावै नामाकार भयी प्रीत मनोकी ।
अनंत उन्मन भाव बनो है आतम जोड़ी नय अनुभव की ।।

[३३५]

किरपा तोरी मोपर होना, वैसी सतगुरु शाम सलोना ।
अबिद्या करदमीं मति डूबी है, बिद्या जलसो धूना ।।
भेद हराना प्रेम चढ़ाना, माफ करो सब गुन्हा ।
अनंत भगती भाव बसीला उन्मन मैंति कर दीना ।।

१७—तुरीय

[३३६]

मन रँगावो भव परिहारो । कारो काया नाम जगावौ ।
गावो गोकुल गोप बिहारी । पार उतारो घोर बिकारी ।।
नीर प्रीत की मोह बिरवारी । भेद लोभ मद काम बुखारी ।
अनंत तीरथ तुर्या न्हावे । सो अनुभव मो राकि जगावौ ।।

[३३७]

आतम रामी लगी मन प्रीत । बिसर परी जग नीत ।
गावत रैन दिन अलख गोसांयी । नाम सदा परिमीत ।।
नाँहि है गोड़ी बिखय बुखारी । तन धन की प्रीत ।
अनंत तुर्या भाती पूरन । सहज उभारत हीत ।।

[३३८]

सोही ब्रह्म सनाथ जगाय, सब घट माही समाय ।
समभावन की बड़ी चतुराई जनम जनम को उभाय ।।
आतम ज्योति तुर्या भाती, गून निसी हरवाय ।
अनंत संतन सतभावों से निज गति प्रेम नवाय ।।

[३३६]

भावे ऐसी संगत भाई मिलना प्यारे मन में लायी।
नित्य नयो नय आतम अन्वय निज सुख को बतलाई।
गुनातीत गति भगती प्रेमा स्वानंद हाक मलाई।।
चिन्मय करमीं धरम, समत, है संतन अदलाई।
तिरता पहको ठौर हरायो बिचार कैसी तलाई।।
सोही सतगुरु मोही चेला, सोही, तोहत लाई।
अनंत साथी अनंत माहीं अनंत संत मिलाई।।

[३४०]

तीरत तुर्या को असनान करि जो सो मसतान।
भव जंजाल भयो परिहारो कबहूं नहीं हयरान।।
गुनातीत हे गुन को साखी भाको बेद पुरान।
सतगुरु स्वामी अंतरजामी अनंत भाव समान।।

[३४१]

तिरबेनी को असनान करो, भव तनमल सबहिं निकरो।
सतगुरु किरपा निज भोगावति स्वातम पद बोध झर्‌यो।।
शांति जमुना निरमल गहिरि, जामी हरिकूद पर्‌यो।
प्रखव प्रभाती आतम तुर्या सरसती को संग लीन्हों।।
अनंत नाही संगम अवनी सदचित समभाव भरो।।

१८—अनुभूति

[३४२]

दिल की दिल में रहि गयी बात, अबि है बनी परभात।
गून रैन की रहा छुपाई, साजन की मिलकात।।
काम क्रोध मद दंभ लोभमद निसिचर सब छुप जात।
अनंत आतम अनुभव नीती नीगम भाव अज्ञात।।

[३४३]

जागो रे जोगिया जगमाही मनको मनसे समझाई।
मत भूल जड़सो बढ़त भरम मति मोह लोभ मदधायी ॥
कठिन पराई निहावन भाई अंतकु दुःख मिलाई।
अंत आदि बिन आतम घट घट नाम रूप बिनसांही ॥
अनंत सिंधु अनुभव लहरी सहजपने झुलवाई ॥

[३४४]

धन भागी नर भव माहीं। जीने अपनी निजगति बाही।
आगम निगम को गम मनमों। तन ममता गमवाई ॥
वागत सहज सों सोहुत निरभर। दुरममता भरमाई।
अनंत शांती पूरन मन की। अनुभव रहा जगवाई ॥

[३४५]

बात बनी निज निरधारी। मोरी मुजकु पियारी।
जे पन सो कौन नहीं है। आपी आप बिचारी ॥
गुन भूत माया काया कालकी। बहुविध अविचारी।
अनंत वसिला समपग माहीं। अनुभव सुखकारी ॥

[३४६]

बहुविध मारग भवमों चालै। एकहि आतम घट घट हालै।
भेदपनो का गुन अति धोका। रज अभिमानी प्राक्तन रोका ॥
पंचभूत की काया माया। जैसी बादल ढंग की।
अनंत निरमल नित्य बिराजे। सो अनुरागी अनुभव साजे ॥

[३४७]

जाने तेरा नाम रमेशा, राम रमैय्या अनुभव देशा।
सबहि जानें परि नहि भाने, कौन भरकावे अजपान्वयानें ॥
सब घट तूं ही भूत गुनो में, जोग जुगती बिधि ने मानें।
अनंत शांती अजरपनो की, बात झुलावे धांब मनो की ॥

[३४८]

कौन कौन को नेह रखूं मैं, अनेकपनसो आतम रामा।
तूंहि सब घट अन्तर बाहिर, गुपत जाहिर निजधामा।।
सगुन निर्गुन गुनपनों से, जब बनो है मन विश्रामा।
द्वैत बिना नहिं ऐक्य सुभावें, भावत सबही आश्रित चामा।।
अनंत अंत पर अंजन आंखन अंतर बाहिर पूरन कामा।।

[३०६]

सदयानन घनश्याम काम पूरन। उदयाचल ब्रजवास आस किरन।
ध्यास जड़ों है बिसवारयने। भयनास भयो राह लागि चरन।।
तुम बिन दूजा नहिं मैं जानत। ग्यानध्यानबहु भाँति राग करण।
अनंत जगमों निज नित गावै। सहजपनों में सार भाग बिजन।।

[३५०]*

सगुन सुहागनि सखि समुझाय।
मधुर मधुर माधो वेनु बजाय।। ध्रु०।।
जमुना के नीर तीर मंगल धाम।
गय्या चरावत, पूरन काम।। सगुन०।।
भव भ्रमनाशक जाके बैन।
सब घट माहिं तो नैन को नैन।। सगुन०।।
अनंत मति का प्रेम बिलास।
सुनत सुनत भयउ अभिमति नास।। सगुन०।।

[३५१]

काया मों मत कर अभिमान।
गुमान मन मों काय कु प्रानी, भज ले गति निरबान।।
मर मर जाते लोग देखते, कैसो भाव तुफान।
अनंत सनाथ सतगुरु भजनीं, नीरद लीला अनुमान।।

---

* चाल : 'लाज मेरे सतगुरु आये मिजवान
तन मन धन जियरा करूं कुरबान।'
—धरमदास भजन

[३५२]

खोज करो जी जिय अपना, धन दौलत, सपना।
अबाद रहना निरधार मों, राम नामु जपना।।
नाहक भरमो में मत डुबियो, सम पन सों रहना।
अनंत भरोसा निज भगती का, बरनित महिमाना।।

[३५३]

माया कौन हरे अभिमाने।
येक वीर रंगी सम धीरपनें, मन खोजत है मन के माने।।
जगि जागे पन भोग सुखाने।
रन शूर बने जोग जुगत ने ठाड़ो विवेक मारी बाने।।
काय क गढ़ सर कीनो, जाने देखे सब ही घट घट म्यानें।
अनंतपन मों एक हि बाने।।

सन्त कृष्णदास

जीवन-परिचय

दास कृष्ण दास

सन्त कृष्णदास

जीवन-परिचय

कदाचित् औरंगजेब के समय ही एक कान्यकुब्ज जाति का भारद्वाज-गोत्री सम्भ्रान्त परिवार अुतर प्रदेश से आकर औरंगाबाद नगर में बसा। इसी परिवार में सन्त कृष्णदास का जन्म हुआ। इनका असली नाम छन्नूप्रसाद था। 'कृष्णदास' इनका कविता का अुपनाम था। इनके पिता का नाम हन्नूप्रसाद था और माता का नाम भगियाबाई था। इनके पितामह का नाम सुकलाल तथा पितामही का नाम अनूपाबाई था। खोज करते-करते यह भी पता चला कि इनके प्रपितामह का नाम ग्यानदेव था और प्रपितामही का रूपाबाई था। कवि कृष्णदास का नाम तो छन्नूप्रसाद था पर ये 'पांड्याजी' के नाम से प्रसिद्ध थे। इनका जन्म लगभग सन् १८७३ ई० में औरंगाबाद में हुआ था। अपने प्रारम्भिक जीवन में ये बहुत गरीब थे। बाल्यकाल से ही इनकी रुचि कला, कौशल, काव्य और संगीत की ओर थी। आपने ड्राइंग की कई परीक्षाएँ पास कीं और तदनन्तर स्थानीय सरकारी आर्ट्स स्कूल में ६०) हाली मासिक वेतन पर कलाशिक्षण के हेतु शिक्षक हो गये। कहा जाता है कि औरंगपुरे का नूतम माध्यमिक शाला का द्वार, जहाँ कभी 'मराठवाड़ा विश्वविद्यालय' का अस्थायी कार्यालय था, इनका ही बनाया हुआ है। लगभग २० वर्ष की आयु में पिता हन्नूप्रसाद शुक्ल ने औरंगाबाद निवासी सजातीय कश्यप गोत्री नन्दलाल दीक्षित की कन्या जमनाबाई से अपने पुत्र छन्नूप्रसाद का विवाह कर दिया। इनका जीवन बड़े सुख से बीता परन्तु कष्ट भी अुन्हें सताते रहे। सत्संग, भजन, पूजन, अर्चन में इनका समय अधिक जाता था।

अेक समय बंगाल के अेक महात्मा औरंगाबाद आये और खड़केश्वर मन्दिर में ठहरे। कृष्णदास जी इनके सम्पर्क में आये और इनसे बड़े प्रभावित हुए और कृष्णदास ने इनसे ही गुरुमंत्र माँगा परन्तु इन बंगाली महात्मा ने कृष्णदास को गुरुमंत्र तो नहीं दिया परन्तु इतना जरूर कहा कि मैं जो

तुम्हें मंत्र देता हूँ, अुस मंत्र का ६० दिन तुम एलोरा की वेलगंगा नदी के किनारे औदुम्बर वृक्ष के नीचे जप करना। वहाँ से लौटते समय उन्हें देवगिरि के समीप मानपुरी महाराज के दर्शन हुए और अुन्हीं से कृष्णदास ने गुरुमंत्र लिया। अुनके ये वचन इसके प्रमाण हैं :—

"गुरु मानपुरी प्रसादे, कृष्णदास छुमाई"
"मुरशद मेरा है मानपुरी, कृष्णदास खाक पाऊँ"

श्रीमद्भागवत्, भगवद्गीता तथा रामायण का पाठ ये सदैव करते थे। इन्होंने घर में ही अपने हाथों से पाँच फुट का सुन्दर विष्णु का वह चित्र बनाया जिसमें ध्रुव ध्यानमग्न तपस्या कर रहे हैं और विष्णु दर्शन दे रहे हैं। इस चित्र के सामने ये भजन गाते रहते थे। साथ में इनके मित्र धरणीधर बाबू रहते जो पुलिस विभाग में एकाउण्टेण्ट थे। कृष्णदास भक्तिभाव से ओतप्रोत भजन गाते और साथ में धरणीधर बाबू साहब अेकतारा लेकर बैठते तो काव्य और संगीत का आनन्द आ जाता। इनके अन्य मित्रों में मुरलीधरराव महासिब, गंगाधरराव तथा टेलिफोन आफिस के किशनराव थे। इनका मकान अब भी चौराहा मुहल्ले के अेक कोने में टूटे-फूटे रूप में विद्यमान है।

अपनी ५५ वर्ष की अवस्था में ये महारोग (कुष्टरोग) से पीड़ित हुए। सरकारी नौकरी से इन्होने छुट्टी ले ली और भजन-पूजन में अपना शेष सारा जीवन बिताया। अपने घर में ही इन्होंने बहुचरा देवी की स्थापना की और पूजा की। आज भी वहाँ दशहरे के दिन बड़ी भक्ति से पूजा होती है।

कृष्णदास ने कतिपय मराठी के भी पद लिखे हैं। कहा जाता है कि 'जपत ची वेला पिंजर्यातून योपट नेला' वही गीत है जिसे विष्णु और ध्रुव के चित्र के सामने गाते-गाते अुनके प्राण निकले। इनकी मृत्यु ५५ वर्ष की आयु में सन् १९२८ में हुई।

१—सतगुरु

[१]

सतगुरु निरंकार निरबानी, चार मुक्ति भरे जहाँ पानी ।। ध्रु० ।।
रिद्धि सिद्धि करत मजूरी, भूत भविष्य वर्तमानी ।
धीरज खंब बन्यो मेरु सम, दुःख द्वंद्व न जानी ।। १ ।।
आगम निगम सब कहत पुकारी, परब्रह्म की खानी ।
अठरा पुराण छः शास्त्र श्रुति सब नेति ही नेति बखानी ।। २ ।।
तैंतीस कोटि देवी देवता, तीन देव अगवानी ।
गुरु को अंत कोई नहीं पायो, कही रहे अकथ कहानी ।। ३ ।।
आदि मध्य अंत नहीं जाको, निर्गुण नाम निशानी ।
कृष्णदास सतगुरु की महिमा, सतगुरु आप ही जानी ।। ४ ।।

[२]

जा दिन सतगुरु अलख लखायो,
सौदा भाव पलक बन आयो ।। ध्रु० ।।
आयो द्वैत भरम में टोटा, पैसा पाँच चले नहीं खोटा ।। १ ।।
एक भाव सो सौदा कीनो, भक्ति नाम अमोलक लीनो ।। २ ।।
अजपा जाप कियो बेपारा, चित चैतन्य भयो निर्धारा ।। ३ ।।
आतम ज्ञान चौहट्टे आयो, प्रेम को देन लेन ठेरायो ।। ४ ।।
अनुभव हीरा जवाहर मोती, नित आनंद है आतम ज्योती ।। ५ ।।
कृष्णदास कीन्हें बेपारा, कृष्ण ही कृष्ण भयो संसारा ।। ६ ।।

[३]

श्री गुरु कृपा को दिवालो
भव को पकड़ ले आई रसना गुण रस भाके ।। १ ।।
अपने आप को देखन लागे, बिसरत अजपा जापे ।
त्रिगुण को तंतु टूट जाये, तहां तुर्या साक्षणी राखे ।। २ ।।
सोहं हंस सुरत जब लागी, जीव सीव कर राखे ।
कृष्णदास सतगुरु परसादे, अनुभव चुन चुन टाके ।। ३ ।।

[४]

गुरु कृपा करी गुरु कृपा करी ।
पामर घट मो बसत हरी ।। टेक ।।
नित उठ स्फुरण उठत हरि गुण को ।
गावत प्रेम आनंद भरी ।। १ ।।
सुन सुन कानन जन मन हरखे ।
दुर्जन जन मन जात जरी ।। २ ।।
आतम ग्यान पुत्र· भयो तरणो ।
ममता महतारी घात करी ।। ३ ।।
कृष्णदास गुरु समरथ पायो ।

[५]

मेरा गुरु घट घट अलख लखाया ।
सारासार शब्द का प्याला,
प्रेम प्रीति खो पिलाया ।। ध्रु० ।।
माया ब्रह्म का सकल पसारा, मिथ्या अभिमत काया ।
माया ब्रह्म समान ही लेखे, आनंद घर बतलाया ।। १ ।।
आनंद घर अमृत झर लागे, त्रिवेणी स्नान कराया ।
त्रिकुटी आसन सहज सिंगासन, अनुहत नाद सुनाया ।। २ ।।
अनुहत बाजा बाजे गगन में, सोहं सुरत लगाया ।
ओंकार आसन जा बैठे, तहाँ सुधबुध बिसराया ।। ३ ।।
या अनुभव कछु कहत न आवै, आनत आतम राया ।
कृष्णदास बल-बल गुरु स्वामी, रोम रोम सुख छाया ।। ४ ।।

[६]

शब्द बान मारे मोहे सतगुरु ने ।।टेक।।
चंचल मन मेरो, मारो सबल से ।
घायल कर डारे ।। १ ।।
घायल की गत घायल जाने ।
मन मारा ही पुकारे ।। २ ।।

मन मारे मंदर बीच खोजे।
झूले गगन हिंडोरे ॥ ३ ॥
कृष्णदास सतगुरु परसादे।
सारासार बिचारे ॥ ४ ॥

[७]

चित चादर रंग में भींज रही ॥ टेक ॥
जलम जुगन की मैली चादर।
नर तन पाय पतीज रही ॥ १ ॥
गद गद प्रेम हरि गुण गावत।
रोम रोम सुख सींच रही ॥ २ ॥
संतन संग रंग अति नीको।
ग्यान अगिन परसीज रही ॥ ३ ॥
कृष्णदास सतगुरु परसादे।
प्रेम मगन होय रीझ रही ॥ ४ ॥

[८]

बिन गुरु रहे जगत में जो जन सो जन पशु समान।
ऐसो वर्णत वेद पुराण ॥ टेक ॥
रामकृष्ण इनही गुरु कीना, बिन गुरु पांव भूमि नहीं दीना।
ऋषि मुनि इनहु गुरु चीन्हा, तेहतीस कोटि देव न मन भावे ॥
गुरु-सेवा सबके चित आवे, साधुसंत सतगुरु गुण गावे।
गुरु को बड़ो है मान ॥ १ ॥
गुरु गंगा तीरथ है भारी, सोही जाने जो होय अधिकारी।
भेद न कछु नर और नारी जी, गुरु को आप मानुख न मानो ॥
साक्षात् ईश्वर पैछानो, यही भाव चित मन में ठानो।
जिन दीनो आतम ग्यान ॥ २ ॥
जिन कीनी सतगुरु की सेवा, उनकी आज्ञा माने सब देवा।
निर्भय रहे कछु नही भेंवा जी, भाव-भक्ति सदगुरु दरसावे ॥
आप आप में लगन लगावे, मुक्ति चारी दासी बन जावे।
रहे सब घट सदा समान ॥ ३ ॥

कृष्णदास सतगुरु गुण गावे, बार बार येही मन भावे।
गुण गोविंद हिरदे नित आवेजी, गुरु है आप निरंजन स्वामी ।।
घट घट बस ही अंतर जामी, गुरु गुण गावे चारों ही धामी।
गुरु है कृपा-निधान ।। ४ ।।

[९]

गुरु मोहे कवने विधि करोगे भव पार ।। टेक ।।
पर्वत समान पाप सिर ऊपर।
कैसे उतारोगे भार ।। १ ।।
कागज की तो नाव बनाई।
छोड़ दीनी बीच धार ।। २ ।।
अपने बल हम कैसे तरिये।
गुरु बल जीव अधार ।। ३ ।।
कृष्णदास करुणा स्वर भाके।
लीज्यो बेगि उबार ।। ४ ।।

[१०]

सुनो हो सन्त निर्बाण लगन या गुरु चरनन से पाइहो।
शुभ दिन शुभ घड़ी वैराग को उपटन मलमल अंग लगाइहो।
भाव भक्ति फूलन की माला सुद्धि सुगंध लगाइहो ।। १ ।।
प्रेम प्रीत की गांठ जो बांधी शांति को आसन पाइहो।
सुरता बेद जपे अजपाजप अंतर पट खुल जाइहो ।। २ ।।
निश्चय खंब धीरज को मंडवा दयाधर्म सोहाग चढ़ाइहो।
आतम ग्यान की बनी है रसोइया, सतसंग बराती जिमाइहो ।। ३ ।।
पूरन ब्रह्म परात्पर स्वामी घट घट रहा है समाइहो।
कृष्णदास कछु रूप न रेखा ताहि संग लगन लगाइहो ।। ४ ।।

[११]

अब क्या करना बे करना बे। ध्यान गुरु का धरना ।। टेक ।।
मात पिता को आग जलाये चाचा भाई सारे।
रोय रोय कर बने दुखियारे तो भी न आँख उघारे ।। १ ।।

बहेन मरी बहेनोई मर गये, कागद उनके बांचे।
नहाय रोय सूतक भी पाले, फिर भी न मन में आंचे ।। २ ।।
बमन ने जो लगन लगाया, वो भी मरा बिचारा।
सावधान कर सावधान कर, मंडवे बीच पुकारा ।। ३ ।।
कन्या पुत्र को खोद के गाड़े, अपने हाथों भाई।
तो भी कहता मेरा मेरा, फिर भी लाज न आई ।। ४ ।।
सब को खाया बड़ा अघोरी, तृष्णा अधिक बढ़ाया।
छिन बैराग साधु की संगत, कृष्णदास नहीं पाया ।। ५ ।।

[१२]

श्री गुरु कृपा सिर छाती है,
तब ममता दूर हट जाती है ।। टेक ।।
जब बैराग घट गहराती है,
तब और कथा नहीं भाती है ।। १ ।।
हरि नाम भजे दिन राती है,
तब त्रिविध आग बुझ जाती है ।। २ ।।
अभिमान की टूटत ताटी है,
तब लोक लाज छुट जाती है ।। ३ ।।
घट बीच भंग छुट जाती है,
तब सुख दुःख की माटी है ।। ४ ।।
वृत्ति प्रेम सरोवर न्हाती,
निर्बन्ध द्वन्द्व छुट जाती है।
कृष्ण दासी गुरु पद ध्याती है,
नित हा हरख सुख पाती है ।। ५ ।।

[१३]

वाह वा तेरी साहेबी हाजरा हजूर ।। टेक ।।
कहुँ कहुँ तो जल बरसाया, कहुँ उडाया धूल।
शामत, सबके उतरे नूर ।। १ ।।
कभी कभी पैसा ले धावे, अन्न न मिले जरूर।
ज्वारी गहूँ चना और चाँवल, पानी मिलत बड़ी दूर ।। २ ।।

कभी कभी ठंड और तप है, कभी पैन भरपूर।
कभी दस्त उलटी और पुलटी, उठ रहे कर्कश सूर ।। ३ ।।

दुख में हम सुख कारण ध्यावे, सुख में नहीं जरूर।
सुख में विषय सुख ही सेवे, अभिमान भरपूर ।। ४ ।।

हम अधम तुम को कहा जाने, जाने संत जरूर।
जिन के रोम राम ही व्यापे, अभिमान भयो दूर ।। ५ ।।

सपने के सुख दुख ये सारे, सतगुरु कहे गये सूर।
कृष्णदास सपने में ही, हो गये, गुरु चरनन की धूर ।। ६ ।।

[१४]

अब तूं नुगरा से मुख मोड़ गुरु का बालक तोड़े खोड़।
पांच पचीस की बाजी, नुगरा खेले हंस हंस राजी ।।
गुरु मुख सोया चादर ओढ़ ।। १ ।।

गुरु तो सब जग ही कर आवे।
सतगुरु बिरला ही नर पावे।
जाँची पूरब जनम की जोड़ ।। २ ।।

जा दिन सतगुरु अलख लखाया।
वा दिन निर्मल निर्गुण गाया।
आतम ज्ञान करे घड़ मोड़ ।। ३ ।।

त्रिभुवन भया एक ही बिन्दु।
सतगुरु पार करे भव सिन्धु।
कहे कृष्णदास कर जोड़ ।। ४ ।।

[१५]

मन तूं सतगुरु चरनन लोल।
आँखी अपनी आप ही खोल ।। ध्रु० ।।

मन तूं पांच तत्त्व को धोये
श्वासोच्छ्वास सुगंधी होये।
प्रेम से हरिहर बोली बोल ।। १ ।।

मन तेरे द्वैत भरम न आवे ।
तेरे तूं क्यों न समझावे ।
अंतर घट तूं अपने तोल ।। २ ।।
प्रेम से तूं ही तेरा रीझे ।
जब आनंद चादर भीजे ।
मस्त होय अपने आप कलोल ।। ३ ।।
सुख पावे तेरो बंदा ।
तूं नित कर ले ये ही धंदा ।
कहे कृष्णदास कर जोड़ ।। ४ ।।

[१६]

नित उठ गगन घुमड़ घुमड़ आवै ।
रिम झिम भीजै आतम सुख पावै ।।ध्रु०।।
नित बादल अनुराग को धावै ।
जग संसार उदास दिखावै ।। १ ।।
चैतन घटा चहुँ दिस घुमड़ आवै ।
सद्गुरु शब्द मेह बरसावै ।। २ ।।
सोहं शब्द आकाश कड़कड़ावै ।
चिन्मय बिजली जगत जगमगावै ।। ३ ।।
प्रेम को पूर गंगा भर आई ।
नौखंड पृथिवी हरी हरी हो जाई ।। ४ ।।
शुद्ध भूमि को पीक सवाई ।
जानत संत किसानी भाई ।। ५ ।।
या अनुभव नित प्रेम प्रकासा ।
कृष्णदास दासन को दासा ।। ६ ।।

[१७]

आरजू यही है दिल में राम रस पीने की अब ।
बिनती मेरी संतन से है भर के पिला दो लबोलब ।।टेक।।
पामर तो हूँ पर दास हूँ, आया शरण रिच्छा करो ।
डूबा चला भव धार में, सतगुरु करोगे पार कब ।। १ ।।

पुण्य प्राणी तर रहे इसमें, तो कुछ अचरज नहीं।
पापी जीव को तारने, सतगुरु करो नहीं बेर अब ।। २ ।।
अवतार है सतगुरु तुम्हारा, जीव जड़ उद्धार को।
बेद और पुराण शास्त्र, ये ही मिल कहते हैं सब ।। ३ ।।
करुणा सुनी गुरुदेव ने, काट दीने बंद सब।
नाम अमृत जब मिला, कृष्णदास हो गये हैं अब ।। ४ ।।

[१८]

सुख सागर मिल गये हरिजन आज ।। टेक ।।
संतत संपत माया की बेड़ी, सहज ही काट दीने महाराज ।।१।।
कृपा दृष्टि दीन तन निरखे, सहज ही दीनो त्रिभुवन को राज ।।२।।
भवसागर सुखसागर हो गये, हरिजन जुड़ गये संत समाज ।।३।।
गदगद प्रेम पुलकन ही बानी, अमृत बरसे जहाँ प्रेम बिलास ।।४।।
कृष्णदास सतगुरु परसादे, हरिजन हमरे भये सिरताज ।।५।।

[१९]

फिर फिर हरिजन जग आते हैं।
फिर फिर हरिगुण ही गाते हैं ।।टेक।।
जैसो देश काल और भाखा।
तैसी कथनी कथ जाते हैं ।। १ ।।
नीच ऊँच कुल भीतर उपजे।
सत रहनी रह जाते हैं ।। २ ।।
संपत बिपत आपत मांही।
हरि सुमरन कर जाते है ।। ३ ।।
जब आवे तब भक्ति खरीदे।
कुछ संग लिये घर जाते हैं ।। ४ ।।
कृष्णदास सतगुरु परसादे।
फिर हरिजन दरसन पाते है ।। ५ ।।

[२०]

काल दुष्काल नहीं कछु, नहीं दुख न द्वंद कलेस।
और देश की खबर मिलत है, तहाँ को कोई न संदेश ।। १ ।।

पाप पुण्य तहाँ पर कछु नाहीं, जन्म न मृत्यु प्रवेश ।
दानव दैत्य न मानव जाये, देव न रंक नरेश ।। २ ।।
तीन गुण तहां पर कछु नाहीं, रंग न रूप न रेस ।
पांच तत्व तहां पर कछु नाही, सोहं हंस प्रदेश ।। ३ ।।
आद मध्य अंत कछु नाही, गुरू दया दरवेश ।
कृष्णदास सतगुरु परसादे, वा देस को करत आदेश ।। ४ ।।

[२१]

सहज सब संसार है, प्रभु को रिझाना है कठिन ।। टेक ।।
सुख मिला संपत मिली, संतत मिली विद्या घनी ।
मान कीरत ऊंच कुल, सब ही तो गठ आई गठन ।। १ ।।
सहज सब सुख ये मिले, सतगुरु मिले नहीं भाग बिन ।
सतगुरु मिले कृपा करे ये तो बहुत ही है कठिन ।। २ ।।

[२२]

क्या करें अमल मन ममता से न छूटे ।
ये पांचों चोर मारग से हरदम लूटे ।।टेक।।

जो राह चले तो पलट न देखे पीछे ।
जो पलटे वा को पांचों चोर मिल खींचे ।
पांचों के बस मन गया बंधा मोह खूंटे ।। १ ।।

ये पांचों अपनी अपनी तरफ ले जावे ।
मन चंचल यों ही भटक भटक दुःख पावे ।
वह पावे दुःख फिर उन पांचों से रूठे ।। २ ।।

रूठा उनसे छिन भर भयो उदासी ।
भूल गयो दुख और पड़ो मोह फांसी ।
ऐसो मन मूरख, हिरदो वाको फूटे ।। ३ ।।

आत्मज्ञान बिन क्यों कर प्राणी जागे ।
सतगुरु पूरा मिल जाये तो मन ना भागे ।
कहे कृष्णदास ये आनंद हर दम लूटे ।। ४ ।।

[२३]

परखोरे निरखो, वस्तु समरस भाई ।।टेक।।
जंवरी बन बन निरखे, दृष्टि निर्मल नाहीं।
नीच ऊंच कमनि, गुरु अंजन न पाई ।। १ ।।
पांच पोशाक करे हो, राखो निर्मल ताही।
द्वैत को डाग न लागे, देखो दर्पन मांही ।। २ ।।
जो पांचो ही निर्मल राखे, निरखे आप ही मांही।
आप ही वस्तु अमोलक, आप जँवरी बन जाई ।। ३ ।।
निर्मल दृष्टि होवे, वस्तु निर्गुण पाई।
गुरु मानपुरी परसादे, कृष्णदास छुपाई ।। ४ ।।

[२४]

आरती मानपुरी महाराजा की
आरती स्वामी राजा, मानपुरी महाराजा
भक्तिभाव, प्रेमदान, राखो दीनन की लाजा
अमृत बोधबानी श्री गुरुवृष्टि दीन काहे मगन कीन ।। आरती ।।
हम जीवन सुधि दीजो क्षमा कीजो दीनानाथा
तुम राखो लाज हमारी कौन राखे जीवन गोपाल ।। आरती ।।
प्रभु मन लीजे प्रेमार्पित माला
कृष्णदास को दीजे उपजाइ
भावभक्ति गुरु पूजा ले लीजे।

२—कृष्णभक्ति

[२५]

गोपाल गोपाल भज मन त्रिकाल काल।
तज सकल ही जंजाल, लाल मुरलीधर ध्याइये ।।ध्रु०।।
मुकुट सिर विशाल भाल, माथे केसर तिलक लाल।
गले शोभे वैजंती माल, वाको पकर लाइये ।। १ ।।

नंद जसोदा कहत लाल, इष्ट मित्र गोपी ग्वाल ।
काल कहे मेरो काल, कोई न पार पाइये ॥ २ ॥

[२६]

मेरे सदन में मोहन आयो री ॥टेक॥
ग्वाल बाल ठाड़े बीच अंगना ।
आप भुवन सरसायो री ॥ १ ॥
मैं ठाड़ी ठाड़ी छबि निरखत ।
वाहे बिमल बिमल दधि खायो री ॥ २ ॥
मैं पकरी बाहेर कर वाको ।
वाहे घट बीच दरस दिखायो री ॥ ३ ॥
बाहेर भीतर कुंवर कन्हैया ।
कृष्णदास न मन भायो री ॥ ४ ॥

[२७]

कन्हैया नित निराले ढंग,
बनाना किन से सीखे हो ॥टेक॥
बनाकर बाँस की बंशी,
बजाई जाके कुंजन में ।
धुन सुन धाई ब्रज नारी,
बजाना किन से सीखे हो ॥ १ ॥
नई नई तान बंसी में,
बजाते प्यारे मन मोहन ।
नया नित प्रेम पर भावे,
तनाना किससे सीखे हो ॥ २ ॥
अजब छबि सांवली सूरत,
मेरे नैनन अटकती है ।
कहे कृष्णदास छबि न्यारी,
बनाना किनसे सीखे हो ॥ ३ ॥

[२८]

मन मोहन मुरली प्यारी फिर न बजावना रे ।। टेक ।।

मुरली सुनत मोहे नर नारी, चमक उठे संसार बिसारी ।
ऐसी मुरली प्यारी मन भावना रे ।। १ ।।

मुरली सुनत सुरनर मुनि थाके,
उनमन हो आनंद रस चाखे ।
ऐसी निरगुण मुरली सरगुण गावना रे ।। २ ।।

मुरली सुनत मोहे चतुरानन, शिव शंकर गंधर्वादि गण ।
धुन सुन गावत तननन, तान सुनावना रे ।। ३ ।।

मुरली सुनत मोहे कृष्णदासा,
हरि गुण गावन की नित आसा ।
वो ही मुरली सतगुरु शब्द सुनावना रे ।। ४ ।।

[२९]

रंग खेलु सजनी मोहन संगनि संग ।। टेक ।।
लोक लाज कुल की मरजादा, त्यज दीनो संग कुसंग ।। १ ।।
मधुसूदन मोहन माधव रटी, रंग भरिये संतन संग ।। २ ।।
गदगद प्रेम कुसुम रंग बानी, भीजत प्रेम उमंग ।। ३ ।।
कृष्णदास रंग माधव संग खेलु, गुरू ने पिलाय दीनी भंग ।।४।।

[३०]

मोहन के गुण वर्णत हो सखि, ये तो कपट की खानि है ।
नेति नेति कर वेद पुकारत, शेष सहस्र फुन बखानी है ।। टेक ।।
परशुराम भये माता मारी, पिता आग्या परमानी है ।
छत्रिन के सिर छत्र गिरायो, तनिक दया नहीं आनी है ।। १ ।।
राम वहे बन वास सिधारे, माता आग्या परमानी है ।
राम राम कर प्राण तजत पिता, लवट दियो नहीं पानी है ।। २ ।।
कृष्ण बहे गोकुल में पहुँचे, मातपिता बंदीखानी है ।
बालकपन क्रीडा बहु कीनी, गोकुल सब हरखानी है ।। ३ ।।

अक्रूर संग गये मथुरा को, गोपी सब ही पछतानी है।
मथुरा जाय मामा बध कीनो, पाप पुण्य नहीं जानी है ॥ ४ ॥
जितने गुण है मोहन के, तितने ही अवगुण जानी है।
कृष्णदास सतगुरु परसादे, सगुण ब्रह्म निर्बाणी है ॥ ५ ॥

[३१]

हे करुणा कर मोहन माधव, अबला भगिनी तुम्हारी।
पांडव जुवा हार गये हैं, कैसी गत होवे हमारी ॥ १ ॥
भरी सभा मो मोहे ले जावत, किन से कहुं दुख भारी ॥ २ ॥
दुष्ट दुशासन चीर ही खैंचत, कष्ट होत बहु भारी ॥ ३ ॥
नगन करत घट प्रान न राखु, प्रभु तुम जानो मैं हारी ॥ ४ ॥
करुना सुनत हरि प्रगट भये हैं, सुदर्शन कर धारी ॥ ५ ॥
द्रौपदी को चीर बढ़ाय दियो है, लज्जा राखे मुरारी ॥ ६ ॥
भक्त काज अवतार धरे प्रभु, कृष्णदास बलिहारी ॥ ७ ॥

[३२]

भक्तन काज मुरारी। सुदर्शन आठ पहर कर धारी ॥ टेक ॥
प्रहेलाद काज सांज को ही धावे, सब ही खंब गरगरारी।
दुष्ट को मार भक्त को तारे, ऐसो बीद बनवारी ॥ १ ॥
गज और ग्राह लड़े जल भीतर, मध्यान काल बिचारी।
गरुड छांड हरि शीघ्र उठ धाये, छिन में लेत उबारी ॥ २ ॥
द्रौपदी को चीर दुःशासन खेंचे, भरी सभा बहु भारी।
करुना सुनत हरि तुरत प्रगट गये, कृष्णदास बलिहारी ॥ ३ ॥

[३३]

चक्रवीहू रचो दुर्योधन, द्रोणहि करी चतुराई।
ऐसी खबर पांडव सुन पाई ॥ टेक ॥
सुनत खबर धर्मराज मन घबराय।
अर्जुन बिन कोउ बिहू भेद जाने नाहीं ॥
महाभारत अब कैसे करि जीत पाये जी।
कृष्ण के आधार सब कीने है संग्राम ॥

कृष्ण और अर्जुन निकल गये दूर धाम।
और छत्री कोउ नहीं जाने बीहू संग्राम ॥
कैसे रण मां जाई ॥ १ ॥
पांडवन के दल मांहि, मच रही खलबल।
अभिमन्यु आयकर, ठोक कहे भुजबल ॥
विहु-चक्र भेद हम जाने, तुम देखो बलजी।
गर्भ मांहि पिता मोहे माता पे सुनायो बात ॥
हम सारो ग्यान तहँ करी लीनो अपने हात।
एक द्वार जाने नहीं जानो तुम सांची बात ॥
चलो अब रण मा जाई ॥ २ ॥
कहे धर्मराज भीम प्रेम ही से मुसकाय।
बालक को काम नहीं बीर बड़े जोधे आये ॥
करण द्रोण दुःशासन रक्षक है सेन लायजी।
कहत है बाल तुम देख लीजो तत्काल ॥
महाबीर जोधन पै डालूं अब महाजाल।
विहु चक्र भेद के जय पाऊं तत्काल ॥
श्री कृष्ण होय सहाई ॥ ३ ॥
रण माही जाय कर ऐसी कही ललकार।
विहु चक्र भेदे बिन जाऊं नहीं निर्धार ॥
अचरज करे महा जोधा सब सरदार जी।
अर्जुन को पुत्र अभिमन्यु रण आय गयो ॥
सुनत कौरव दल खल बल छाय गयो।
बालक कहा जाने भेद ऐसी सब पुकारं कह्यो ॥
कृष्ण दास जय पाई ॥ ४ ॥

[३४]

हरिजन के हरि सहकारी है ॥ टेक ॥
हरिजन के हरि संग ही डोले।
हरिजन हिरदे हरि निर्धारी है ॥ १ ॥
हरिजन की हरि लाज ही राखे।
निर्लज्ज हरिजन हरिगुण गारी है ॥ २ ॥

हरिजन के हरि अंतर रीझै।
हरख हरिजन हरि ललकारी है ॥ ३ ॥
कृष्णदास हरि के गुण गावत।
श्री गुरु कृपा की बलिहारी है ॥ ४ ॥

[३५]

हरि जन मंडल हरि गुण गाये ॥ टेक ॥
हरिजन मंडल परपंच नहीं है।
एक पदारथ सब मिल खाये ॥ १ ॥
हरिजन मंडल गंगा जल पानी।
त्रिविध ताप को देत बुझाये ॥ २ ॥
हरिजन मंडल द्वैत नहीं है।
जगत जनार्दन एक कर ध्याये ॥ ३ ॥
हरिजन मंडल चिंता न व्यापे।
करम लिखे सो ही भर पाये ॥ ४ ॥
हरिजन मंडल बंध मुकत नहीं।
निराश रहे निर्भय पद पाये ॥ ५ ॥
कृष्णदास सतगुरु परसादे।
हरिजन मंडल दरसन पाये ॥ ६ ॥

[३६]

को गावब हरि गीता, संतो कौन करत है कविता ॥ टेक ॥
फुरना कौन करे या घट में, को अनुभव को पीता।
किनके आगे खड़ी सरस्वती, यही करो परतीता ॥ १ ॥
कहे सतगुरु सो ही कथे सार, जा हम रीता को रीता।
कार्य कारण करत चाकरी, ग्यान कछु नहीं छीता ॥ २ ॥
तीन गुन को हम नहीं चीने, ना पांच पचीसो जीता।
डोरी सूत्र हाथ सतगुरु के, कलि काल हमें नहीं छीता ॥ ३ ॥
मस्त रहे नित चरण को चिंतन, सतगुरु ही कीनी प्रीता।
कृष्णदास कहे गुरु को, बालक प्रेम प्याला पीता ॥ ४ ॥

[३७]

कौन मुख बरर्नूं हरि गुन कौन मुख बरनूं ।
हिरदे प्रेम ही न छाय ।। टेक ।।
कविता प्रबंध रचन बहु भांति ।
मन नहीं रीझै मेरो, जगत रिझाय ।। १ ।।
श्याम सुंदर मूरति या गोपाल की ।
पल नहीं मन मेरो तहाँ ठेराय ।। २ ।।
वाह वाह कहत जन फूल्यी ही फिरत मन ।
अभिमान दिन दिन दूनो होत जाय ।। ३ ।।
अंतर की जानो हरि काहे न कृपा करी ।
कृष्णदास घड़ी घड़ी पग छुवे धाय ।। ४ ।।

[३८]

प्रभु तुम भुको जलम जुगन को ।
भाव भक्ति सो कुछ देवे, खाय खाय अति हरखो ।। टेक ।।
दुर्योधन के मेवा त्यागे, साक विदुर के घर को ।
चोखा के संग छोड़ी द्वादशी, जात पांत नहीं परखो ।। १ ।।
झूठे बेर शबरी के खावे, मीरा को बिख नहीं निरखो ।
सुदामा के तांदुल छीन लिये हैं, मिलन आये जो घर को ।। २ ।।
पेंधा वाकळ्या छाक ले धावत, मुंद कर अपने मुख को ।
मीठी मीठी कर वाहि फुसलावत, लेवत मुख में थूको ।। ३ ।।
तीन लोक के नाथ प्रभु तुम, भक्तन घर अति भूको ।
कृष्णदास कहे भाव भक्ति बिन, ब्रह्म ग्यान अति फीकों ।। ४ ।।

३—रामभक्ति

[३९]

हमें अपने राम रिझाने दो ।
गुण गोविंद के गाने दो ।। ध्रु० ।।
मेरा सुर ताल बिगड़ा है, पड़ा तू मैं का झगड़ा है ।
मुझे एक तार मिलाने दो, स्वानंद ताल बजाने दो ।। १ ।।

अजब है ये तनका तुमडा, हड्डी और मांस ऊपर चमडा।
त्रिगुण के तार मिलाने दो, पांच तत्वों से बजाने दो ॥ २ ॥

त्रिगुण तारे का तू स्वामी, बसे घट घट अंतर जामी।
शरण आवे को आने दो, चरन पर सीस नवाने दो ॥ ३ ॥

पतित पावन करते हो, छिन छिन में अवतार धरते हो।
मुझे कृष्ण दास बन जाने दो, नित आनंद ताल बजाने दो ॥ ४ ॥

[४०]

कभी न राम रिझाया, अवसर ना पाया ना पाया ॥ टेक ॥

लोक लाज नहीं छूटे मन से, अभिमान घर खाया।
अन्तर शुद्धि अनुपात बिना नहीं, क्या होय त्रिकाल न्हाया ॥ १ ॥

अन्तर शुद्धि बिन राम न रीझे, क्या तों न तनाना गाया।
अनुताप नहीं त्रिविध ताप बिन, या पुरब का पाया ॥ २ ॥

आप रीझे और लोक रिझावे, नेह काम गुण गाया।
कृष्णदास सतगुरु चरनन पर, फिर फिर सीस नवाया ॥ ३ ॥

[४१]

राम नाम के निकट है यारो, दूर करो सब चतुराई।
नाम घाट है बिकट बिकट जो तीखट धार तलवार की।
जिसे लगा है जखम सो जाने बेचैनी उस खार की ॥ १ ॥

कमाल अपने सर को कटाया इसी नाम के रंग में।
कबीर ने काटा है सर को इसी नशा के भंग में ॥ २ ॥

राम नाम दो अच्छर लिखकर सागर पर पत्थर तारे।
राम जपे भोला शंकर ने बिख को अमृत कर डारे ॥ ३ ॥

चढ़ा शिखर न डरा किसी से प्रह्लाद नाम को ललकारे।
खंब फोड नरसिंग रूप धर हिरणाकश्यप को मारे ॥ ४ ॥

जिसने ये नर तन पाया राम नाम गुन गाने को।
कृष्णदास विश्वास नाम को, सूधे बैकुंठ जाने को ॥ ५ ॥

[४२]

सोच समझै पिया बात, सियाजी को राम से मिला दो ।। टेक ।।
तीन लोक को नाथ, रामसंग बैर न कीजै ।
शरण जाय रघुनाथ, सिया उनकी दे दीजै ।।
चन्द्र सूर्य जब लग रहे, तब लग निर्भय राज ।
करि भजन जस लीजिये हो, करियो इतनो काज ।। १ ।।
कहे दस कंध सुन, मंडोदर बुध की हीनी ।
जेहि कारण सीता हर लीनी, तुम नहीं चीन्ही ।।
जिहि कारण सीता हरी, वो कारज है और ।
स्त्री अंग दुर्गंध हीन मति, ग्यान सिखावे अघोर ।। २ ।।
अंगद बली प्रचंड, आय कीनो सिष्ठाई ।
कहे गगो वचन कठोर, कर गयो मान घटाई ।।
मारे लात सिर छत्र गिरायो, येही सिया के काज ।
या कारण तुम शरणे जैयो, छोड़ो कुल की लाज ।। ३ ।।
धर मानुख अवतार, रामजी नाम धराये ।
ले बंदरन की फौज, लंका ऊपर चढ़ि आये ।।
वह कहा जाने बावरे, रण संग्राम निर्वाण ।
जेहि संग्राम करे जो हमसे, तुरत पठाउ निज धाम ।। ४ ।।

[४३]

बंदर नहीं है वीर, प्रचंड जोधा बल गाढ़े ।
कितने ही मरे असुर, कितनन की भुजा उखाड़े ।।
नल नील अंगद और सुग्रीव, महाबीर हनुमान ।
नाहक रार न कीजै, स्वामी वचन हमरो मान ।। ५ ।।
जब लग घट में प्राण, सिया जाने नहीं पावे ।
जितने मरे असुर, सबहि मुक्ति हो जावे ।।
हमहुं मुक्ति कारणे, सीता को हर लीन ।
तीन लोक को नाथ प्रभु, घर बैठे दरसन दीन ।। ६ ।।
सुन के वचन कठोर, मंडोदरी मन घबराई ।
भूमि गिरी अचेत, बहुत मन में मुरझाई ।।

मेघनाथ बेटा मरो, कंथ ही मरणो चाह्या ।
फिरी दशा करमन की भारी, फिर फिर मूर्च्छा खाकर ।। ७ ।।
मची लंका में धूम, असुर बहु लंगुरन मारे ।
फेर फेर असुरन को, हनुमत भुइं पछारे ।।
चले बान लछमनजी के, उड़ गये सीस अनंत ।
कृष्णदास जय जय रघुनंदन, गावत सुर नर संत ।। ८ ।।

[४४]

हमें राम नाम गुण गाना है ।
कहो क्या जग को भुंदराना है ।। ध्रु० ।।
मेरे कर्म लिखे भर पाना है ।
न किस पर हमारा तनाना है ।। १ ।।
प्रभु को ज्यों ज्यों नाच नचाना है ।
हमें उसके ही हाथ बिकाना है ।। २ ।।
हमें पाप पुण्य नहीं जाना है ।
सुख दुख भी सरब समाना है ।। ३ ।।
हमें प्रेम प्याला पाना है ।
कहे कृष्णदास मैखाना है ।। ४ ।।

[४५]

रीझो क्यों न राम हमारे उर आय के ।। टेक ।।
शबरी के प्रभुजी कैसे रीझे,
झूठे फल खायो प्रभुजी, अति रुचि लाय के ।। १ ।।
सुदामाजी के प्रभुजी कैसे रीझे,
हेम नगर दीनो मुट्ठी पोहे खाय के ।। २ ।।
मीरा बाई के प्रभुजी कैसे रीझे,
बिख को प्याला दीनी है पिलाय के ।। ३ ।।
कृष्णदास के प्रभुजी क्यों नहिं रीझो,
मगन रहूँ तुमरे गुन गाय के ।। ४ ।।

[४६]

गरिणका सुवा पढ़ावे, हरिगुण नित गावे, नित गावे ।। ध्रु० ।।
वह तो पाप पुण्य न जानी, एक राम नाम रस छानी।
शबरी झूठे बेर खिलावे ।। १ ।।
प्रभु तुम जानत हो सब घट की, कुब्जा तारी कंस की बटकी।
वालमीक मारा मारा ध्यावे ।। २ ।।
पिया चाहे सुहागिन सांची, वेश्या जनम जनम भवनाची।
हरि तुम चाहै नेह लगावे ।। ३ ।।
तुलसीदास बड़े संसारी, तिरिया शब्द से आंख उघारी।
ध्रुव प्रह्लाद परम पद पावे ।। ४ ।।
कृष्णदास चरण रज तेरो, शरण आयो दीन तन हेरो।
मोहे नित गोविंद गोविंद भावे ।। ५ ।।

[४७]

कहो किसका लिया कि हमने,
जो अपने राम रिझाते हैं ।। टेक ।।
हम अपने घर भीतर बैठे,
रटना राम सिजाते हैं।
ग्यान अगिन पर गुरू कृपा से,
गरम पाक कर खाते हैं ।। १ ।।
नहीं किसे उपदेश करें हम,
नहीं किसे भुंदराते हैं ।।
भव सागर की बीच धार में,
नय्या अपनी तिराते हैं ।। २ ।।
मिले संत कहीं शब्द पारखी,
इस कारण भर माते हैं।
अनुभव हीरा हरिजन परखे,
हरख निरख सुख पाते हैं ।। ३ ।।
जिन के हाथ सुदर्शन चक्र है,
वह सुदर्शन हम पाते हैं।

कृष्णदास प्रेम रंग में,
आदर चित्त मिलाते हैं ।। ४ ।।

४—ज्ञान

[४८]

ब्रह्म ही ब्रह्म नजर आवे, ब्रह्म रस रोम रोम छावे ।। ध्रु० ।।

स्वर्ग मृत्यु पाताल भरा है, घट घट ब्रह्म अधारा ।
चराचर आप ही आप कलोले, तीन लोक सो न्यारा ।। १ ।।

वार पार जल भरा समंदर, जाके रूप न रेखा ।
पवन झकोले जगत सब डोले, गगन महल चढ़ देखा ।। २ ।।

गगन में मूल पाताल में शेंडा, डार पात नौ खंडा ।
फल में वृच्छ वृच्छ में फल है, दसवें खंड में झंडा ।। ३ ।।

सब संतन मिल ब्रह्म रस बोले, सतगुरु दीन पिलाई ।
कृष्णदास पीले सोई जाने, आनंद फुंवारी आई ।। ४ ।।

[४९]

ब्रह्म ज्ञान पाये पर रीझे नहीं है ।
भक्ति बिन पथरे सीझे नहीं है ।। टेक ।।

घोड़ा मिला पर न सीखी सवारी ।
गिरते हैं हरदम पर खीजे नहीं है ।। १ ।।

अहंकार पत्थर न छोड़ा मन लोभी ।
दरिया में होकर भी भीजे नहीं है ।। २ ।।

घसते हैं सर को विषय को न त्यागे ।
उमर सब बीती पर भीजे नहीं है ।। ३ ।।

बिना भक्ति ब्रह्म ज्ञान बकते हैं जो नर ।
कहे कृष्णदास प्रभु पतीजे नहीं हैं ।। ४ ।।

[५०]

अंतर बीच स्वामी आते हैं।
अपने गुण आप ही गाते हैं ॥ टेक ॥
सतगुरु बचन अमृत से मीठो।
दया दिष्टि बरसाते हैं ॥ १ ॥
ध्यान गली नित आवे जावे।
सुरन शिखर चढ़ जाते हैं ॥ २ ॥
आप ही रीझे आप रिझावे।
कृष्णदास गुण गाते हैं ॥ ३ ॥

५—प्रेम

[५१]

मोहे प्रेम प्याला भर दीजो।
मेरो सीस चरण पर धर लीजो ॥ध्रु०॥
मेरो द्वैत भरम सब हर लीजो।
आठ पहर सुमिरन दीजो ॥ १ ॥
मेरो तन अभिमान खंडत कीजो।
जनम जनम सत संगत दीजो ॥ २ ॥
प्रभु बिनती करत हूँ सुन लीजो।
निज कानन अक्षर गिन लीजो ॥ ३ ॥
श्री कृष्ण चरण रज कर लीजो।
कृष्णदास दास अपनो कीजो ॥ ४ ॥

[५२]

प्रीत बिना रस-प्रेम कहाँ सो पाइये।
अनुभव बिन आनंद कहाँ सो लाइये ॥ध्रु०॥
हरि रस मीठो मीठो, सब ही मिल खाइये।
भूख लगे पदारथ नवनीत बनाइये ॥ १ ॥

नित नवा पकवान रसोई चढ़ाइये।
आत्मानात्म विचार परिपाक कढ़ाइये ।।२।।
द्वैत भरम को मैला सत्संगे धो आइये।
निश्चय तिलक लगाय हंस पद पाइये ।।३।।
हंसा पद जब होय, रंक बन जाइये।
फिर हंसन संग अहार हरख हरखाइये ।।४।।
सत्गुरु के परसाद परम पद पाइये।
कृष्णदास विश्वास लौट ना आइये ।।५।।

[५३]

आनंद के घर जाय तो प्रेम बहार है।
शांति को फल खाय तो मगन आहार है ।।टेक।।
गुरु शब्द को घोड़ा बनाय, तो मन असवार है।
निश्चय पकड़ो लगाम, पांचों ताबेदार है ।। १ ।।
पांचों चाकर कर राखे, तो मन साहूकार है।
कृष्ण नाम निज ध्यान, यही बेपार है ।। २ ।।
भक्ति को नगद खरीदो, एक भाव बाजार है।
दया छिमा गादी बैठ, करो बेपार है ।। ३ ।।
पूंजी है अलख खजीना, सो ब्रह्म बिचार है।
सब घट ब्रह्म ही ब्रह्म, न नगद उधार है ।। ४ ।।
बनत बनत बन जाय, तो सौदा अनिवार है।
कहे कृष्णदास सब कृष्ण ही कृष्ण पुकार है ।। ५ ।।

[५४]

प्रेम करे पति घड़ लावे अलंकार।
देख पड़ोसन भई है अंगार ।। टेक ।।
द्वैत मति ठानी। सब काहू से बखानी।
ये तो नार करत व्यभिचार ।। १ ।।
नित नवे भूषण पहन इतरावत।
देख देख मोहे आवत झार ।। २ ।।

पति प्रेम सों ही सोहागिन नार।
औ रति-जल बूड़ो संसार ।। ३ ।।
कहुं कहुं पाई सोहागिन नार।
जो अपने पति संग करत विहार ।। ४ ।।
चाहे रोवे पड़ोसिन रोवे घर बार।
कृष्णदासी मगन भई नाम अधार ।। ५ ।।

६—मन

[५५]

अखंड मन जाको उदासी है,
सो ही पूरण संन्यासी है ।। टेक ।।
न जपे माला न पढ़े पोथी,
न कोई तीरथ प्रवासी है ।। १ ।।
बहु तीरथ व्रत कीने,
बहु धन धर्म नासी है।
जों लों द्वैत मन से ना छूटे,
तो लौं सब भरम फांसी है ।। २ ।।
द्वैत छूटे तो आनंद लूटे,
सब ही जग ब्रह्म प्रकासी है।
कहे कृष्णदास जो आतम जागे,
फिर सोना तो हांसी है ।। ३ ।।

[५६]

चलो रे मन जहाँ संतन को संग ।। टेक ।।
हरिजन मिले हरख गुण गावे,
छुटे ग्यान की भंग।
मोह ममता के बंधन टूटे,
छिन भर होवे सत संग ।। १ ।।

छिन छिन गावे छिन छिन ध्यावे,
छिन छिन निर्मल अंग।
निर्मल बानी प्रेम प्रीत की,
गद गद होत उमंग ॥ २ ॥
भू वैकुंठ तहाँ है साधु,
जहाँ होत सतसंग।
कृष्णदास सतगुरू परसादे,
दिन दिन मिलत सत संग ॥ ३ ॥

[५७]

मन शुद्ध नहीं अब क्या करना।
हरि चरनन ऊपर क्या धरना ॥ध्रु०॥
जब देखूं तब द्वैत भरम में, विधिना लेख लिखी क्या करम में।
विविध ताप कबलौं जरना ॥ १ ॥
बार बार समझाय रहे हैं, मानत नाहीं मनाय रहे हैं।
दुखिया दुख कब लौं भरना ॥ २ ॥
चंचल मन को आन धरो, प्रभु तुम ही बेग सहाय करो।
भवसागर जल किस विधि तरना ॥३॥
अपने विरद की होड़ नहीं, क्या प्रभुताई प्रभु छोड़ गई।
कृष्णदास है तुम्हारी शरना ॥ ४ ॥

[५८]

चेत मन विकट घाट आया, हाट बीच ठगनी है माया ॥टेक॥
आशा तृष्णा फिरे हाट बीच, बहु सौदागर लूटे।
जिनको सतगुरु मिला है पूरा, वही हाथ से छूटे ॥ १ ॥
मूर्तिमंत स्त्री है माया, माल मता को खावे।
मोह के पास पुत्र और कन्या, धनमद में भरमें भरमावे ॥२॥
अहंकार तो करे खराबी, भाव बनन नहीं देवे।
काम क्रोध मद मच्छर, यारों पूंजी सब हर लेवे ॥ ३ ॥

कृष्णदास कहे चेतरे मनवा, बार-बार नहीं आना ।
एक भाव सों सौदा करके, भव सागर तर जाना ।। ४ ।।

[५६]

हरख-हरख मन हरि गुण गायले ।। टेक ।।
सुनत-सुनत नित हरि गुण सुनिये ।
भिनत-भिनत कानन हो भिनायले ।। १ ।।
निरख-निरख नित हरि रूप निरखो ।
निरख पर नैनन हू निहारले ।। २ ।।
फिरत-फिरत चौरासी फिर आयो ।
उलट-पलट अब पय्यां फिरायले ।। ३ ।।
रीझत-रीझत रोम-रोम ही रीझे ।
भिजत-भिजत प्रेम रंग में भिजायले ।। ४ ।।
कृष्णदास सतगुरु परसादे ।
गावत ध्यावत ही परम पद पायले ।। ५ ।।

[६०]

मेरा तेरा मनवा एक हो जायेगा ।।ध्रु०।।
मैं तूं मेट ग्यान-गंगा में ।
गुरु गम से धो आयेगा ।। १ ।।
द्वैत भरम की बांध गठरिया ।
समंदर बीच डुबायेगा ।। २ ।।
ग्यान गरब और आस बैकुंठ की ।
छिन-छिन मार भगायेगा ।। ३ ।।
कृष्णदास शान्ति को आसन ।
सहजा-सहज चढ़ जायेगा ।। ४ ।।

[६१]

छल कपट छांड दे मनवा, दो दिन वा दुनिया है ।। टेक ।।
कपट करे दुर्योधन पांडव को छलिया है ।
प्राण गये पर कपट न छांडे ऐसो कु बलिया है ।। १ ।।

कपट करे हरणाकश्यप, प्रह्लाद को छलिया है।
प्राण गये छल-कपट न छांडे ऐसो कुबलिया है ॥ २ ॥

कपट करे लंकापति रावण श्रीराम को छलिया है।
प्राण गये पर छल-कपट न छांडे ऐसो कुबलिया है ॥ ३ ॥

कपट करे तल पट ही होये, हरी नैनो बीच सलिया है।
कृष्णदास प्रभु की माया को अंत न मिलिया है ॥ ४ ॥

७—विनय पद

[६२]

गुन हर के हर दम गाना है,
हमारा यही बाना है ॥ टेक ॥
अंतर में रंग बनता है,
प्रेम ऊपर तरंगता है।
चित-चादर रंगना है,
डेरे प्रीतम के जाना है ॥ १ ॥

चमन में चेतन के जाना है,
फूल अनुभव के चुन लाना है।
नई-नई सेज बिछाना है,
साजन को अपने मनाना है ॥ २ ॥

साजन अपने को मना दीजो,
कोई ऐसी राह बना दीजो।
तन-मन-धन जोबन लुटाना है,
जग से नाता तुड़ाना है ॥ ३ ॥

सतगुरु मेरा मस्ताना है,
हमें उसके हाथ बिकाना है।
नई-नई तान सुनाना है,
कहे कृष्णदास मयखाना है ॥ ४ ॥

[६३]

हरि चरचा जहाँ होत है कुटिल पुरुष तहाँ आये।
कटु बचन बोले बिना वासो रहा न जाय ।। १ ।।
एक कुंभार दो ही घट घड़े, भूंजत आवां एक।
एक मा अमृत भर दियो, एक नरक भर फेंक ।। २ ।।
अमृत घट हरि नाम को, निंदा नरक है जान।
सज्जन जग छानिये, के मूरख जन अभिमान ।। ३ ।।
× × ×
× × × ।। ४ ।।
× × ×
× × × ।। ५ ।।
हरि दीनी को भोजन करे, और चबावे पान।
वैष्णव बन जागर करे, कहो कौन सो ग्यान ।। ६ ।।
आदर कर बुलवात है, मध्य सभा के बीच।
औरन को चितवाय के, अपमान करावे नीच ।। ७ ।।
मत करो अपमान हो, हमरो कछु नहीं जात।
जा दिन गुरु कृपा करी, हरि भजन करत दिन रात ।। ८ ।।
× × ×
× × × ।। ९ ।।
कुटिलन को कछु कुछ नहीं, ×
× × आपी करत उत्पात ।।१०।।
चंदन तजे सुगंध को, चाहे काष्ट बहु मिल जाय।
तैसे दुर्जन संग ते, संतन जात बहाय ।।११।।

[६४]

तुमरो करुणा सागर नाम ।।टेक।।
पापी जीव उबारन कारण।
अवतार धरे घनश्याम ।। १ ।।
मैं पापी को पाप बहुत है।
या कारण गये निज धाम ।। २ ।।

करुणा सागर सूक गयो है।
हरि कहाँ करत विश्राम॥ ३ ॥
कृष्णदास की सुध बिसराई।
कहा करिये ये छुपाय ॥ ४ ॥

[६५]

हे करुणाकर, जगत उजागर, भव बूड़त मोहे तारो ॥टेक॥
तीरथ बरत नहीं दान पुण्य कियो।
अधम जीव भू भारो ॥ १ ॥
तन अभिमान बीच धार डुबावत।
दीन तन काहे न निहारो ॥ २ ॥
संतत संपत कछु नहीं दीज्यो।
दीज्यः दर्श तिहारो ॥ ३ ॥
कृष्णदास करुणा बिनती करी।
तुम बिन कोई न हमारो ॥ ४ ॥

[६६]

मैं पापी मैं पापी मैं पापी भारी।
गुरु तुमरे शरण आयो रिच्छा कीजो म्हारी ॥टेक॥
पर-निंदा पर-धन लीनो निरखी पर-नारी।
पाप-गठड़ी बांध लायो शरण में तुम्हारी ॥ १ ॥
मात-पिता की सेवा छूटी विषय सुख विकारी।
द्वैत करत उमर बीती भय लागे भारी ॥ २ ॥
तनु क्षीण महा मलीन मति मंद म्हारी।
पाप ताप समेट लायो शरण में तिहारी ॥ ३ ॥
दया-सिंधु दीन-बंधु नाम सब हा कारी।
कृष्णदास हाक देत सुन लीजिये मुरारी ॥ ४ ॥

[६७]

जो सुख मिला घट भीतर हमको,
दीन दयाल रिझाने में ॥टेक॥

वह ही सुख गंगाजी न्हाये,
वही रामेश्वर जाने में।
वही सुख चारो धाम छायो,
नेह काम राम रिझाने में ।। १ ।।

दान धरम में वही तो सुख है,
वह सुख जग लुटाने में।
वही तो सुख संतन उर छायो,
प्रेम सहित गुन गाने में ।। २ ।।

जिन चरनन से निकसी गंगा,
लछमीजी चरण चुराने में।
सब सुख ही प्रभु चरनन लोटे,
हिरदे मांहि बसाने में ।। ३ ।।

सब सुख जहाँ विश्राम करत है,
गुरू दया दरसाने में।
बलिहारी सतगुरु चरनन की,
'कृष्णदास' बन जाने में ।। ४ ।।

[६८]

भाव का मथन बनाया वे।
जगत को ठग-ठग खाया वे ।।ध्रु०।।
ऊपर-ऊपर भाव बतावे, मतलब का है गरजीं।
स्वारथ करत कभी न चूके, पर कारज अल गरजी ।। १ ।।
फैलावे धंदा जगत है अंधा, कहते संत है दाना।
अंतर कतरणी नजर न आवे, वह तो पूजे बाना ।। २ ।।
बाने को वंदन देह को बंधन, एक दिन आवेगा।
अंत काल कोई न आवे, आप ही पछतावेगा ।। ३ ।।
बाने का बल काम न आवे, करनी का बन सांचा।
कृष्णदास कहे बिख को त्याग, अमृत पीले सांचा ।। ४ ।।

[६६]

जे बिरिया होनी होय सो होय ।।टेक।।
इन्द्र को भग भये, गुरु पत्नी भोग से,
चन्द्र को हो गयो क्षय ।। १ ।।
महादेव भीलनी के पाछे,
टाली विसर्जन होय ।। २ ।।
विश्वामित्र अप्सरा देख भूले,
दीनी तपस्या खोय ।। ३ ।।
विवेक विचार बैराग गयो कहाँ,
बुद्धि गई कहाँ सोय ।। ४ ।।
माया ब्रह्म को सकल पसारा,
कोई अंत नहीं जोय ।। ५ ।।
खदबद खदँबद या जग सीजै,
कोई हँसिये कोई रोय ।। ६ ।।
कृष्णदास सतगुरु की महिमा,
जड़ काटे फिर बोय ।। ७ ।।

[७०]

जस गावे सब संसार,
सार बिन डूबे भव जल धार ।।ध्रु०।।
जो चली सनातन रीति,
वा को पकड़ धरे मजबूती ।
वाको पलक न करे विचार ।। १ ।।
अनेक देव बनाय के पूजै,
मागे संतत संपत रीझै,
माया ठग लीनी संसार ।। २ ।।
इतना जानत है सब कोई ।
फिर निश्चय क्यों नहीं होई ।
लीला प्रभु की न पावे पार ।। ३ ।।

कहे कृष्णदास निर्धारा।
रहे जग में जग से न्यारा।
सद्गुरु लखायो सारा सार ॥ ४ ॥

[७१]

करम तेरी पारख कौन करै ॥ टेक ॥
जयदेव स्वामी कु च्योर ही लूटै, कर चरण काट गिरै ॥ १ ॥
गोरा कुम्हार बालक को चेंदे, फिर कर काट धरै ॥ २ ॥
त्रिलोकीनाथ को मित्र सुदामा, भूकन काहे मरै ॥ ३ ॥
दुख सुख भोग करम के माथे, हरि भजन न टरै ॥ ४ ॥
कृष्णदास करम की जड़ को, सतगुरु काट धरै ॥ ५ ॥

[७२]

करम बिन कोई न जग में आय ॥ टेक ॥
करम लिखाय जगत में आवत,
करम ही कर कर जाय ॥ १ ॥
भिन्न भिन्न करम है सब के,
भिन्न भिन्न फल पाय ॥ २ ॥
माया ब्रह्म को सकल पसारा,
कोई अंत नहीं पाय ॥ ३ ॥
कृष्णदास करम जाल टूटै,
गुरु के चरण चित लाय ॥ ४ ॥

[७३]

कीनी अमरलोक पर चढ़ाई,
रे बाबा नित आनंद लड़ाई ॥ध्रु०॥

पांच पचीस बंड को तोड़े, सत निशान चढ़ाई।
निर्भय होय लडूं काया में चैतन फौज बढ़ाई ॥ १ ॥
धूम धाम काया गढ़ कीनी, सतगुरु शब्द सिपाही।
दसवें द्वारे रस बिदेही, निर्मल प्रभा समाई ॥ २ ॥

आत्मज्ञान का भरा खजीना, कृष्ण नाम से लुटाई ।
लूटे संत शब्द जो चीन्हे गुरु गम ज्ञान समाई ।। ३ ।।

सोहं सुरत तंबूरा बाजे, गगन महल चढ़ जाई ।
कृष्णदास आनंद दुमदुमी, सब ही संत बजाई ।। ४ ।।

[७४]

जाको दिखे संसार भयंकर, चमक उठे भैय पावे हो ।
सोही अनुरागी अनुराग चितावै, निराश होवे गुण गावे हो ।।ध्रु०।।

संसार करे मिथ्या कर माने, अंतर खोजत जावे हो ।
आशा करे संत संगत की, आत्मज्ञान सोही पावे हो ।। १ ।।

रहे उदास दास बन जावे, प्रेम सरोवर नहावे हो ।
शीतल रहे सम दृष्टि जग निरखे, सूक्ष्म पद सोही ध्यावै हो ।। २ ।।

गुरु चरनन विश्वास ही राखे, पांच पकर कर लावे हो ।
पांचों छेद अलख दरपन में, सोहं सुरत लगावे हो ।। ३ ।।

पूरब जनम की कछु होय कमाई, सोही सौदा कर जावे हो ।
कृष्णदास आधार कृष्ण के, कृष्ण चरण चित लावे हो ।। ४ ।।

[७५]

कोई कछु कहो सिर माथे,
अपने राम रिझाते ।।ध्रु०।।

सनातन पंथ है बाबा, सब वस्तु बताते ।
समागम करत ही अपनी, भेक टेक दिखाते ।। १ ।।

सनातन शब्द और साकी, घाव मार बताते ।
आतम विचार न कीन्हो, वाद विवाद चलाते ।। २ ।।

पंथ पक्ष नहीं बाबा सब को सीस नमाते ।
सम दृष्टि जग तोले, आनंद फल खाते ।। ३ ।।

सतगुरु के परसादे, निर्गुण गुण गाते ।
कृष्णदास जग वंदे, आतम सुख पाते ।। ४ ।।

[७६]

प्रपंच और परमार्थ करे, सोही सूर है।
ऊपर मुद्रा क्रूर भीतर चकनाचूर है ।।ध्रु०।।

राख दबे अंगार सो झलकत नूर है।
यों रहनी है जगत् समान ज्ञान अंकुर है ।। १ ।।

करम से नाच्यो है नाच, सो कर्म हजूर है।
करता हरता जगदीश, हमें क्या जरूर है ।। २ ।।

जैसो सौदागर होये, सौदा भरपूर है।
जैसो भाव बन आय, तैसो हर हजूर है ।। ३ ।।

मान रह्यो न गुमान, संत रज धूर है।
कृष्णदास जय मांही, ज्यों जलत कपूर है ।। ४ ।।

[७७]

किसे कहूँ भला और बुरा, मूरख और ग्यानी।
सब घट में वस्तु एक गुरु गम जानी ।।टेक।।

कोई चांदी सोने के बीच पानी भर पीवे।
कोई हांडी बरतन कोई चमड़ा ले सीवे।
सब में जानो एक भरा है पानी ।। १ ।।

जैसे सूरज का प्रकाश जग में होवे।
वह एक नजर से सब जग माहि जोवे।
घट अनेक रस है, एक ब्रह्म परमानी ।। २ ।।

दीपक है छोटा बड़ा वैसी है बाती।
यों लख चौरासी जीव बरन और ज्योती।
सब दीपक में है जोत एक रंग बानी ।। ३ ।।

अब रहा न झगड़ा, द्वैत का भांडा फूटा।
सब घट में तू ही खेले खेल अनूठा।
कहे कृष्णदास सब जग वंदन मन मानी ।। ४ ।।

[७८]

सतजुग बहे द्वापर ही बीते, त्रेता बहे कलजुग रहे ।।टेक।।
जो जुग बीते जगत ही बीते जो जुग रहे सो जगत रहे ।
अनेक कहे जगत कहलावे एक कहे जगदीश बहे ।। १ ।।
अनेक तरंग एक सागर मो सागर बीच तरंग रहे ।
जल को तरंग जल माही समायो कौन मरे और कौन रहे ।। २ ।।
तीनों ही लोक भरो है सागर अनेक जुगन जुग बीत गये ।
प्रभु को अंत कोई नहीं पायो तीनों लोक सब थकित भये ।। ३ ।।
जुगन जुगन प्रभु धूम मचायो कहुं जागे कहुं सोय रहे ।
कृष्णदास गुरू समरथ पायो अगम निगम समझाय कहे ।। ४ ।।

[७६]

जग में लाभ होवे की हान, या को कौन परमान ।।टेक।।
कहा अपराध पांडवन कीने, बनवास पठये बलवान ।
कवन पुण्य कौरव भये राजा दुरमति दुरअभिमान ।। १ ।।
कहा अपराध केकैयी को कीने बनवास पठये भगवान ।
कहा अपराध भृगुजी को कीनो, हरि उर मारी लत्ता तान ।। २ ।।
कहा अपराध श्रवण ने कीनो, दशरथ मारे बान ।
चल सुपंथ पाप कहा वाको, जो बीच ही लीनो है प्राण ।। ३ ।।
नेति नेति कर बेद थकित भये, हारे हैं तन मन जान ।।

[८०]

साधु बन जगत ठगाई हो ।
वाने नरक कमाई ।। टेक ।।
भोर ही राम नाम को बेचत ।
पोसत लोग लुगाई ।। १ ।।
चोर ही मुंडे जार ही मुंडे ।
मुंडत मन न लजाई ।। २ ।।
वाही मुंडे वाके कर्म न मुंडे ।
दिन दिन करत सवाई ।। ३ ।।

कृष्णदास कहे ऐसे पुरुष ने।
ब्रिद को डाग लगाई ।। ४ ।।

[८१]

कहा कहूँ कछु कहिये न जाय।
हरि गुण गावत रहिये न जाय ।।टेक।।
कविता रूप उठे घट भीतर।
सहज ही शब्द बन बन आय ।। १ ।।
पामर घट में हरि गुण उपजे।
सुन सुन जनम न द्वैत समाय ।। २ ।।
कहा कहूँ प्रभु बस नहीं मेरो।
शब्द उठायो ब्रीद काहे न उठाय ।। ३ ।।
तुम बिन कौन घट भीतर रीझै।
कृष्णदास नाँव देने मिटाय ।। ४ ।।

[८२]

जगत रूठे तो रूठे रे भाई, पर न होवे प्रभु से जुदाई ।। टेक ।।
गरचे रूठे पिता और माता, स्वामी रूठे जो है अन्नदाता।
सालो रूठे और ससरा लुगाई, पंच रूठे जिन कीनी सगाई ।। १ ।।
भाई रूठे जो गोती हमारो, मित्र रूठे तो झूठो गंवारो।
पाड़ रूठे पड़ोसिन माई, प्रभु न रूठे तो सब है सहाई ।। २ ।।
जा दिन लगन लगी सतगुरु से, वा दिन टूटो है नातो जग सब से।
प्रभु तुम सब जग है बाप माई, कृष्णदास दुजा न सोहाई ।। ३ ।।

[८३]

पंडित पढ़ पढ़ उमर गमावे। गुरु शब्द भेद न पावे ।। टेक ।।
जौं लौं माया से न हो उदासी, त्यों लो बंधे फिरे चौरासी।
जौं लों बैराग की राह नहीं जावे, त्यों लो सतगुरु कैसे जगावे ।।१।।
जौं लों सतसंगत नहीं कीनी, त्यों लों भक्ति को मारग नहीं चीन्ही।
जौं लों ममता की राह नित जावें, त्यों लों प्रेम प्रीत कैसी पावै ।।२।।

जौं लों पंच तत्व नहीं खोजे, वा के गुण अवगुण नहीं बूझे।
जौं लों पांचों की राह नित जावे, त्यों लों आत्मज्ञान कैसे पावे ।।३।।
काया में पांचों ही तत्व विकारी, पांचों बांधे सोही ब्रह्मचारी।
सतगुरु सहज ही सहज लखावे, कृष्णदास चरण बल जावे ।।४।।

[८४]

घर ही में बैठने हारी, चतुर्दश कुल को उधारी ।। टेक ।।
धरम न पुण्य करती है, आसन वस्तु से डरती है।
जो सत की धारना धारी, उसकी गत सबसे है न्यारी ।। १ ।।
जगत को तुच्छ कर माने, पति को ईश्वर पहचाने।
ऐसी कोई होयगी नारी, तारन में चन्द्र उजारी ।। २ ।।
मिले जो भाग से अपने, रहे संतुष्ट उस ही पर।
कहे कृष्णदास चरनन पर, जाऊँ मैं उसके बलिहारी ।। ३ ।।

[८५]

हीरा जनम अकारन खोना, अंत समय क्यों रोना रे ।। टेक ।।
बालपन में खेल गमायो, जवानी मद में सोना रे।
पर तिरिया संग प्रीत करन को, बिषय मद जादू टोना रे ।। १ ।।
माता पिता की सेवा चूकी, ना संत समागम ज्योना रे।
धन संपत बहु भांति कमावत, कहे मेरा चांदी सोना रे ।। २ ।।
दान धरम और तीरथ व्रत, सब ये कछु नहीं होना रे।
नाच रंग और ख्याल तमाशा, बहु आनंद सो ज्योना रे ।। ३ ।।
चीरे बंदी का बंगला, खासा पाया जंगी होना रे।
अपना पाया ढसल चला है, पड़ो है पलंग एक कोना रे ।। ४ ।।
कोना पड़ो है थर थर कांपे, कफ खांसी का होना रे।
बैद बुलावो को मोहे जिलावो, फँसे ममता बस सोना रे ।। ५ ।।
सब कर देखे काल नहीं छोड़े, अब कहे कैसा होना रे।
मूँछ मरोड़ गुमान गयो सब, जम बांधे चुप होना रे ।। ६ ।।
ऐसे जीव गये बहु भांति, बिरले ही सतगुरु ज्योना रे।
कृष्णदास सतगुरु परसादे, कर्म-मैल को धोना रे ।। ७ ।।

[८६]

ये न्याय कहाँ ले जाई, कलि में ऐसी है ठग ठगराई ।। ध्रु० ।।
पहले कहे पंडित पाय लागी, आशीर्वाद भर पाई ।
पीछे कहे ब्रह्म जाने न, बकुला निंदत मन न लजाई ।। १ ।।
जैसे एक गऊ ले आवे, जैसे पूजन भाव बताई ।
शस्त्र काढ़ बाको सीस उड़ाये, मन ही मन हरखाई ।। २ ।।
पहले बंदे पाछे निंदे, सो कालो काग है भाई ।
हंसन संग बैठे क्या होवे, अहार करे नरक जाई ।। ३ ।।
कृष्णदास प्रभु तुम सब जानो, और को जाने न जाई ।
कि जाने एक संत विवेकी, जो स्थिर होय गुन गाई ।। ४ ।।

[८७]

कलजुग आया बे आया बे, घर घर द्वैत समाया ।। टेक ।।
भाई से भाई बैर करता है, वासना दुष्ट मन में धरता है ।
पुण्य का ढसल रहा है पाया ।। १ ।।
स्त्री पति वचन नहीं माने, साला देख रहा घर खाने ।
ससरा बोले बोल बेहया ।। २ ।।
साधु मूंडे चोर और जार, चलो अपना घर संसार ।
आप ही डूबे शिष्य डुबाया ।। ३ ।।
कन्या चारों बरन ही बेचे, इनको जमराजा जब खेंचे ।
कृष्णदास बहुत समझाया ।। ४ ।।

[८८]

कलजुग के मोर अदल बदल कर डारे किरिया ।। टेक ।।
ब्राह्मण मद्य मांस को सेवे, शूद्रन जनेऊ डारे ।
बोद बहे त्रिलोकी के स्वामी, दश अवतार ही सारे ।। १ ।।
शूद्र सो ही राजा बन बैठे, छत्री सेवा धारे ।
पर निंदा परधन हरण के, चारों ही बरण स्वीकारे ।। २ ।।
पतिव्रता अलोप भई है, छिनरी घूंघट संवारे ।
भड़वन के जरतारी सेले, शूर भये हैं हत्यारे ।। ३ ।।

साधु के रूप में चोर जार हैं, कुटिल बहु मतिमारे।
कृष्णदास सतगुरु परसादे, रहे जग में ही जग से न्यारे ॥ ४ ॥

[८६]

ब्राह्मण जनम भिकारी।
नाम निज निर्भय भीक हमारी ॥ ध्रु० ॥
भोर होत असनान ध्यान कर,
कर्म करे अधिकारी।
संध्या संदेह त्रिकाल त्रिगुण सब
प्राणायाम कर डारी ॥ १ ॥
रहे नेह काम प्राणायाम यही हमरो।
शूद्र की छूत बिचारी ॥
ममता मांगीन अहंकार चंडाल है।
द्वैत धेड धुतकारी ॥ २ ॥
पांचों पोशाक निर्मल जब कीने।
गुरु ज्ञान अगिन बिना बारी ॥
काम क्रोध की देत आहुती।
सोहं मंत्र स्वाहाकारी ॥ ३ ॥
वृत्ति शून्य भयो या जग में।
खेले संचित खेल खिलारी ॥
कृष्णदास संत गुरू की महिमा।
तीन लोक से न्यारी ॥ ४ ॥

[९०]

जमदूत वारंट ले आवे, फिर छुपने नहीं पाओगे ॥टेक॥
इष्ट मित्र और सगा साईं से,
मिलने भी नहीं पावोगे ॥
भाई बिरादर बड़े सूरमा,
बल किन का दिखलाओगे ॥ १ ॥

घर भीतर बहु भरो खजाना,
एक पाई लेने नहीं पाओगे ।।
हाथ पसारे जाना होगा,
रिश्वत किन्हें खिलाओगे ।। २ ।।
सुंदर मुख दर्पण बीच निरखे,
नहीं मूंछ मरोड़न पाओगे ।
सुंदर तन इंधन बीच जलाये,
किन्हें गुमान बताओगे ।। ३ ।।
एक उपाय बहुत है सांचो,
गुरु शरण जब जाओगे ।।
राम नाम का लेकर दाखला,
कृष्णदास बन जाओगे ।। ४ ।।

[६१]

चलत ही हंस काया कैसी रोई,
हमें छोड़ कहां जाते हो तुम ।। टेक ।।
बहुत दिनन की प्रीत हमारी,
क्यो तोड चले क्या है ये सितम ।।
काहे बने बेदरद कमाई,
फिर न मिलोगे ये जाने हम ।। १ ।।
प्राण कहे सुन काया दिवानी,
क्यों नाहक करती हो गम ।।
तुम ऐसे साथ बहुत हम छोड़े,
नित उठ हमरो है ये ही करम ।। २ ।।
हमरे राज बहुत सुख भोगी,
न जानी हमें, परदेसी हम ।।
प्रीत करी पर मीत न जानी,
अब क्यों रो रो ठोके करम ।। ३ ।।
जब जमराज हल कारे आये,
निकस गये ये प्यारे दम ।।

कृष्णदास सपनो जग सारो,
सतगुरु चरणन निकसे भरम ॥ ४ ॥

[६२]

ससरे ना हम जावे री माता,
प्रीतम मोहे ना सुहावे ॥ टेक ॥
तू तो मोरी सुमति है माता,
कुमति सास जलावे ।
ममता ननंद मोरी पीछे ही लागे,
मोह देवरा जरवावे ॥ १ ॥
अहंकार बड़ो जेठ है माता,
क्रोध ससुर मारन धावे ।
मद मच्छर छोटे छोटे देवरा,
नित उठ हुकुम बजावे ॥ २ ॥
क्रोध ससुर जब मारे री माता,
दुर्मति सास चिथावे ।
काम मदन पिया कही न माने,
परघर रैन जगावे ॥ ३ ॥
सत्संग भैय्या हिरदे है माता,
सतगुरु पिता सुहावे ।
चैतन्य बहेनी जुग-जुग जीवे,
कृष्ण दासी बहु सुख पावे ॥ ४ ॥

८—गजल

[६३]

गजल—चाल-कवाली

घायल हुए हैं इश्क में न पीछे कदम धरे ।
सत पर चढ़े हैं सूर जो कट कट ही के मरे ॥

राजा हरीचन्द घायल हुए, पल में दे दिये हैं राज ।
बरबाद होके बिक गये मन में, न कुछ डरे ।। १ ।।
सुलताना सल्तनत छोड़ दिये, बलख बुखारे की ।
इश्क में घायल हुए फिरते हैं बिन सिरे ।। २ ।।
गोपीचन्द घायल हुए माता के संग से ।
राज छोड़कर जोगी बने न जरा सबर करे ।। ३ ।।
रब का मिलना आसान है ऐसा न जानिये ।
कृष्णदास भी घायल हुए गुण गाते ना टरे ।। ४ ।।

[६४]

दुनिया नहीं है दंगल है शाहनूर का ।
मुरशद ने मेरे दिखाया है दंगल हुजूर का ।।
हुजरे में पाक दिल के बिठाकर मुझे मगन ।
तुड़वा दिया है पुख्त किवाड़ा गुरूर का ।। १ ।।
टूटा किवाड़, दुई का पड़दा भी फट गया ।
मंजूर हुआ माफ मट्बा कुसूर का ।। २ ।।
बेडर हुआ हूँ मुझको दुनिया से क्या सला ।
बैठा रहूँ मैखाने में बिला जरूर का ।। ३ ।।
हैं मैखाने में भरे हुए बोतल शराब के ।
पीता हुआ हूँ मस्त शराबा सुरूर का ।। ४ ।।
मुरशद मेरा है मानपुरी कृष्णदास पाऊं खाक ।
हर फन में बाजा बज रहा अनहद के तूर का ।।

[६५]

अगर दिल दरद नहीं है तो,
बैद ढूंढे तो क्या होवै ।। टेक ।।
अगर किसी के कहने पर,
मुंड मूंडे तो क्या होवै ।
कितना ही खर पर लदे चंदन,
बोझ ढोमे से क्या होवै ।। १ ।।

अगर कोई मिलै दरदी तो,
बेदरदों को क्या होवै ?
नपुंसक को मिलै पदमिन,
तो क्योंकर सुख-भोग होवै ।। २ ।।
अगर आशक नहीं रब का,
तो भेक लेने से क्या होवै ।
न छूटै द्वैत का मैला,
मुंड मूंड़े तो क्या होवै ।। ३ ।।
मगन हो नाचै मीराबाई,
जगत रोने से क्या होवै ।
कहै 'कृष्णदास' दरदी को,
बैद मिलने से सुख होवै ।। ४ ।।

[६६]

इश्क की बाजी लगी, हार ही मानी गई ।
हे प्रभो माया तेरी न किसी से जानी गई ।। टेक ।।
धन्य धन्य जगत जननी सब जगत के आद है ।
ब्रह्मा विष्णु महेश, तीनों देव इसके बाद है ।
स्वर्ग और मृत्यु पाताल, इसने करी आबाद है ।
चराचर में है भवानी इसका ही सारा नाद है ।
तीन देव त्रिकाल छाने, तब भी न छानी गई ।। १ ।।
चार खानी चार बानी चार जाती रूप है ।
तीन गुण सेवा करै, पांच इसके भूप है ।
षट्चक्र पर बैठी है दुर्गा दुर्गनी (भी) अनूप है ।
दश गुणे दश अवतार में, छांव जैसी धूप है ।
जुगन जुग की है पुरानी न कोई जुग से पहचानी गई ।। २ ।।
पतिव्रत है धर्म इसका रात दिन सेवा में खड़ी ।
पुत्र की गिनती नहीं बांझ है खासी छड़ी ।
अनब्याही कर्ण कुमारी अर्ध मात्रे है अड़ी ।
निर्मल गंगा है अर्धंगा चित चैतन मो जड़ी ।
कृष्णदास कहे गुरु ज्ञान से, परब्रह्म में मानी गई ।। ३ ।।

[६७]

न सुझो और शाम दुपेरा है,
जब जागे तभी सबेरा है ।। टेक ।।
न ब्राह्मण क्षत्री न वैश्य शूद्रम्,
न घरबारी संन्यासी न कुल गोत्रम् ।
जो घायल बन के पुकारा है,
वह ही सब जग से न्यारा है ।। १ ।।
न तिथि वारं च नक्षत्रम्,
न घड़ी पल वार मूल भद्रम् ।
जब देखे दर्पन तो वही चेहरा है,
जब आँख खुले तो उजेरा है ।। २ ।।
घायल को बेल न फूल पत्रम्
अजपासन नाम को मंत्रम् ।
सहज झूलै जो हिंडोरा है,
कृष्णदास दासन कु चेरा है ।। ३ ।।

[६८]

वक्त सब यों खोया यों खोया, राम बीज नहीं बोया ।। टेक ।।
भोर बहे धंदा और उद्यम, देड़ पहर यों खोया ।
न्हाना खाना आलस ताना, स्त्री पुत्र को जोया ।। १ ।।
तीन पहर तो यों ही बीते, चौथा पहर आया ।
निंदा स्तुति और तेरी मेरी, राग द्वेष कर सोया ।। २ ।।
दिन दिन बीते बरस कई बीते, ऐसे ही जग भरमाया ।
कृष्णदास कहे प्रभु की माया का, कोई अंत नहीं पाया ।। ३ ।।

[६९]

करके वायदा आये वहाँ से, सौदा अब तक किये नहीं ।
माया मोह में लपट रहे हम, नाम राम का लिये नहीं ।। टेक ।।
बालकपन मो खेल गमाये, जवानी में अहंकार भर ।
परधन परतिरिया हरने को, कभी न अपने मन में डरे ।।

परनिंदा को बड़ो हरख है, पर-पीड़ा को नित ही हारे।
ऐसी मोट एक बाँधी पाप की, सिर पर अपने ढो ढो मरे।
बीती उमर भये तीस बरस के, कभी राम नाम को छिये नहीं ॥१॥
बढ़ा मोह स्त्री से सारा, कन्या पुत्र में जा अटके।
उनके काज अन्न धन को धावे, नीच ऊँच सहते फटके।
नहीं स्थिरता मन को भाई, बिन बोले चहुं दिसि भटके।
त्रिविध ताप में जले भुने, बढ़ी आग, लगते चटके।
बीती उमर भये साठ बरस के, साधु संगत किये नहीं ॥ २ ॥
साठ बरस के बाद लगे जब, तत्व सभी थकने को।
हुआ भरम और पड़ा अँधेरा, लगे भलता ही कुछ बकने को।
पैसा गांठ का कभी न छोड़े, जोड़ जोड़ लगे रखने को।
आये जमराज छाती चढ़ बैठे, टकमक लगे निरखने को।
कृष्णदास कहे खाली हाथ गये, जरा राम रस पिये नहीं ॥ ३ ॥

[१००]

शिकल और ऐब गैरों के हमेशा देखे जाते हैं।
अपनी सूरत और ऐबों को सरासर खुद छुपाते हैं ॥ टेक ॥
हमेशा गैर से झगड़ा मैं अपने आप को न रगड़ा।
चोरी कर साव बन जाते हैं बेइरक योंही उमर गमाते हैं ॥ १ ॥
उमर भर कर जारी चोरी अब आती है सिरजोरी।
ये खर लच्छन नहीं जाते हैं हम मन ही मन शरमाते हैं ॥ २ ॥
छुपाऊं कब तलक भाई चराचर में भरा सांई।
करम पड़दे में कर आते हैं प्रभु वहाँ भी झांक जाते हैं ॥ ३ ॥
कहे कृष्णदास करम मेरे मुझे हरदम भरमाते हैं।
मो सम और नहीं पापी नरक भी मुझसे भय पाते हैं ॥ ४ ॥

[१०१]

जो अपनापन आप खाता है।
अपने में आप समाता है ॥ ध्रु० ॥
जिने खोजा आप अपने को।
उने छोड़ा अपने-तुपने को ॥

सब जग से जिसका नाता है।
वही जग से नाता तुड़ाता है ॥ १ ॥
जो अपनापन आप खोता है।
वह जागा है न सोता है।
वह जिंदा है न मरता है।
वह आता है न जाता है ॥ २ ॥
जिने बंसी ऐसी बजाया है।
तिनो ही लोक नचाया है ॥
कृष्णदास उसके पग ध्याता है।
अवधूत चरन चित लाता है ॥ ३ ॥

[१०२]

चराचर में गर समाये हुए हो।
हमें तो कहो क्या बनाये हुए हो ॥ ध्रु० ॥
तुम से बनी आदमाया भवानी।
तुम्हीं ने तीनों लोक जमाये हुए हो ॥ १ ॥
त्रिलोकी नाथ प्रभु तुम हो सनातन।
हमें भी अनाथ बनाये हुए हो ॥ २ ॥
भक्त प्रतिपाल करे हो करोड़ों।
हर घट में आसन जमाये हुए हो ॥ ३ ॥
कहे कृष्णदास तुमने तुमको ही जाना।
अहं मिथ्या माया गमाये हुए हो ॥ ४ ॥

[१०३]

नेह काम हो संसार से, प्रभु को रिझाना चाहिए ॥टे
जो कुछ लिखा है भाग में, वो कम सरस होता नहीं।
इतना समझ संतोष हो, प्रभु को रिझाना चाहिए ॥ १
चाहे भीक भी न मिले, चाहे सिंहासन पर चढ़े।
तो भी हरख न शोक हो, प्रभु को रिझाना चाहिए ॥ २
चाहे कोई धुतकार दे, चाहे कोई आदर करे।
तो भी रोष ना, प्रेम हो, प्रभु को रिझाना चाहिए ॥ ३

ऐसी लगन कृष्णदास की, प्रभु के चरण पर जब लगे ।
तो भी न मन अभिमान हो, प्रभु को रिझाना चाहिए ।। ४ ।।

[१०४]

ताजा कलम ताजा कलम है,
फिर के नहीं प्यारे मृत्यु जलम है ।।टेक।।
निंदा स्तुति न उपदेश जग को,
लिखते हैं हरिगुण, न झूठी टलम है ।। १ ।।
नवीन नित कविता प्रेम की तलब है,
गाते हैं हरिगुण मनाते बलम हैं ।। २ ।।
श्री गुरू ही कृपा कर लगाये तलब ये,
हरख कर हरिगुण को लिखती कलम है ।।३।।
दर्द दिल ही जाने घायल के दुख को,
कृष्णदास घायल को हरिनाम ही मरहम है ।।४।।

श्री विनायकानन्द सरस्वती

(श्री विनायक रामचन्द्र टोपरे)

जीवन-परिचय

विनायकानन्द सरस्वती

श्री विनायकानन्द सरस्वती

(श्री विनायक रामचन्द्र टोपरे)

श्री विनायक का जन्म एलोरा में सन् १८८३ ई० शाके १८०५ में मार्ग शीर्ष शुक्ल द्वादशी के दिन हुआ। आपका वंश मल्हारस्वामी की शिष्य-परंपरा में आता है। इनका वंश परिचय इस प्रकार है :

बलवन्त
|
कृष्ण
|
गोविन्द [पूना निवासी भिक्षावृत्ति] — गोपाल [पूना में अफीम का व्यवसाय]

गोविन्द
|
रामचन्द्र (चिंचोली के जमींदार वामन मोहनीराज की कन्या मैनाबाई से विवाह) — नारायण

गोपाल
|
भिकूताई [पूना में भास्कर राव रायिरकर के साथ विवाह]

रामचन्द्र
|
विनायक — कृष्णा (बहिरगांव के सीताराम कुलकर्णी के साथ विवाह) — नारायण उर्फ बाबूराव
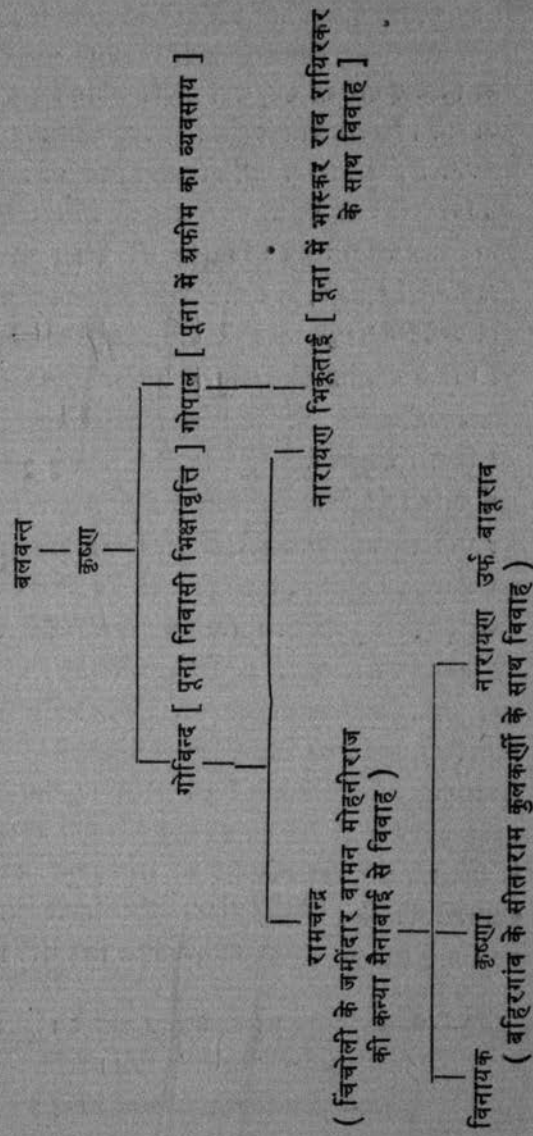
इनके पिता रामचन्द्र की शिक्षा नासिक में हुई। श्री यादव महादेव दबशे की इन पर विशेष कृपा रही। ये गाते भी अच्छा थे। औरंगाबाद मिल्स में उन्होंने नौकरी की, फिर वे लोणावा मिल्स में नौकरी करने चले गये। पर शीघ्र ही वे इन्दौर आ गये, जहाँ उन्होंने वकालत पास की और वहीं वकालत करने लगे। सरदार रामकृष्ण पंत जठार ग्वालियर में स्वानंद साम्राज्य लेखक थे। इनके द्वारा वे ग्वालियर बुला लिये गये। ग्वालियर में वे सूबेदार रहे, किन्तु दुर्दैव यह कि दो महीने बाद ही ढोलिबा के कुएं में गिर पड़े और संसार छोड़ कर चल बसे। विनायक की शिक्षा भी वेरूळ में आरंभ से तीसरी कक्षा तक हुई, फिर औरंगाबाद में आकर वे पढ़ने लगे। इन्दौर और उज्जैन में परचुरे मास्टर के पास; तदनन्तर ग्वालियर में इनकी शिक्षा हुई। पिता रामचन्द्र की सन्तान जीवित न रहती थी, इसलिये दादी ने विनायक को जन्मते ही स्वामिराज मल्हारस्वामी की समाधि पर अर्पण कर दिया। इस घराने के सुपुर्द विट्ठल मन्दिर का प्रबंध भी था। मन्दिर खर्च के लिये अहिल्याबाई होलकर ने थोड़ी सी जमीन लगा दी जिससे उन्हें ६४ रुपये १० आने नगद दिये जाते थे। यह नगदी उनके छोटे भाई नारायण उर्फ बाबूराव को भी मिलती रही। १६-२० वर्ष की आयु में विनायक फिर वेरूळ (एलोरा) आ गये। कुछ दिन यहाँ रहकर वे १२ वर्ष की तीर्थयात्रा पर निकल गये। काशी से लेकर रामेश्वरम् तक की तीर्थयात्रा की। इसी यात्रा में नरसोबा की बाड़ी में उनको एक संन्यासी मिला। विनायक ने यह इच्छा प्रगट की कि वे संन्यास ले लें, पर संन्यासी ने कहा कि मातृऋण से उऋण होने के पूर्व तीर्थयात्रा तथा संन्यास वृत्ति ले लेना उचित नहीं है। ३०-३१ वर्ष की आयु में वे पुनः वेरूळ आ गये, देवी मन्दिर में रहने लगे और माता मैनाबाई की सेवा-सुश्रूषा करने लगे। वे आजन्म ब्रह्मचारी बने रहे। संस्कृत, मराठी और हिन्दी भाषाओं का अच्छा ज्ञान था। उन्हें आजकल की अंग्रेजी सभ्यता से चिढ़ थी[1]। वे अंग्रेजी भाषा के

१—घेतलास गजवदना कां वेश हा नवा रे।

× × ×

घातलीस टोपी शिरसी राखिलेस बाला।

× × ×

नेसलास चड्डी कंठीं बांधलेस चीर—कविता संग्रह, पृ० २३

व्यवहार पर भी खिन्न थे[1]। वे मूर्तिकला तथा चित्रकला भी जानते थे। शीघ्र ही उन्होंने मल्हारस्वामी की समाधि के पास घृष्णेश्वर मन्दिर के निकट कोठरी बना ली और वे वहाँ रहने लगे। प्रत्येक चातुर्मास वे गणेश-गुहा में तपश्चर्या करते थे। मल्हारस्वामी की गद्दी पर आसीन होकर तो वे आषाढ़ शुक्ल १० से १४ पर्यन्त स्वामी जी का उत्सव करते और शिष्यों को उपदेश देते रहे।

वे बचपन से ही भस्म रमाने, सर्पधारण करने तथा शिवनाम जपने में अभ्यस्त थे। आषाढ़ शुक्ल पूर्णिमा शाके १८६१ के दिन आपने संन्यास ले लिया। तदनन्तर उनका नाम 'विनायकानन्द सरस्वती' हो गया। भाद्रपद बदी ८ शाके १८६१ (सन् १९३९ ई०) में वे ब्रह्मीभूत हो गये। उनकी समाधि वेरूळ के मल्हारस्वामी की समाधि के समीप अभी भी स्थित है। उनकी मराठी, हिन्दी और संस्कृत भाषा में लिखी हुई कविताएँ 'काव्य-रत्नावली', 'अरुणोदयमाला' तथा 'संदेश' आदि ग्रन्थों में प्रकाशित मिलती हैं। 'समश्लोकी', 'रामदासी', 'गृहस्थाश्रम', 'बालकृष्णाष्टक', घृष्णेश्वरस्तोत्र इत्यादि प्रकाशित हुआ है। औरंगाबाद के 'एकनाथ संशोधन मंडल' ने उनका मराठी हिन्दी कविता-संग्रह[2] प्रकाशित किया है। 'वृत्त कुसुमावली', 'अध्यात्म परिभाषा', 'समाज कलंक' तथा विशाल ग्रन्थ 'ब्रह्मसरोवर'[3] अभी भी अप्रकाशित हैं।

महाराष्ट्र सन्तों की यह तो सबसे बड़ी विशेषता रही है कि इन सन्तों ने मराठी के साथ-साथ हिन्दी में भी पद लिखे हैं। यह हिन्दी के लिए वस्तुतः गौरव की बात है। सन्त कवि विनायक महात्मा मल्हारस्वामी की शिष्य-परंपरा में से थे और वे अपने आपको शिवरूप मानते थे। जीव-बिन्दु से शिवबिंदु

× × ×

१—शुद्ध संस्कृताचा कंटाळा। आंग्ल भाषणा चा चाळा।
तेणे केवळ मराठीला। पारखे झाले॥ ६॥
पिता पुत्र मित्र सहोदर। भारतीय असून परस्पर।
आंग्लभाषेत व्यवहार। करूं लागले॥ ८॥

—कविता संग्रह, पृ० २४

२—प्रकाशन स्थल : एकनाथ संशोधन मंडल, औरंगाबाद।

३—प्राप्तिस्थान : एकनाथ संशोधन मंडल, औरंगाबाद।

तक पहुँचना ही तो सन्त-साधना है। बाल्यकाल से उनका भस्म रमाना, रुद्राक्ष माला धारण करना, शिवनाम जप करना, इसका प्रमाण है। अपने आपको स्वयं ज्योति समझते थे। इसी लिये अपने आपको वे "स्वयं प्रकाशक शशिर विनायक आपहि लेत पुजाई" कहते हैं। रविशशि के प्रकाशक ज्योतिर्मय शिव है। विनायक शिवभक्त और घृष्णेश्वर के उपासक थे। घृष्णेश्वर की "भज मन घृष्णेश्वर शिव सांब" इस स्तुति में यह भावना स्पष्ट है।

हरिहरैक्य कवि विनायक की प्रधान भक्ति है, मल्हारस्वामी के शिष्य-परंपरा में से होने के नाते उनकी यह समन्वय भावना सर्वोपरि है। इस हेतु कवि ने शिव, विष्णु, कृष्ण, राम, गणपति, हनुमान सभी की स्तुति की है। उनका पद है: "मन वा राम भजो भाई, छांड़ो अपनी चतुराई," और "राम राम राम राम, राम नयन माही। बसत विश्राम धाम निर्मल छबी छाई।"

मन को वे उपदेश देते हैं: "मनवा खूब दिवाना, ग्यान नहीं पहचाना", और "मनवा पांव परु तेरे, हर भज सांझ सबेरे", और "मनवा परमात्मा जानरे"; मल्हारस्वामी की ओर संकेत करते हुए वे कहते हैं: "दया करो स्वामीराज महाराज" और अन्त में गुरु की कृपा से भवबंधन छूट जाने पर वे कहते हैं: "अब तो गुरु ने तोड़ दियो भवबंध बे"।

अवतार भक्तों के लिये होता है। भगवान् के रूप का कवि ने सुन्दर वर्णन किया है। उनका पद है: "भक्त सहित, सगुण भयो श्री रंग। मंद स्मित मुख नयन मनोहर नीरद श्यामल अंग।"

विनायक जन्मभूमि भारत के प्रेमी थे। गुरु का बोध राम की भक्ति, मन के कलुषों का त्याग जीवन के लिये आवश्यक है। वे कहते हैं:

"त्यज मन कपट दंभ पाखंड। जनमभूमि अति पुनीत तेहारी सुन्दर भारतखंड", कवि विनायक के इन पदों में कितनी सुबोधता है, भक्ति के ये कितने सुरस पद हैं।

१—सद्गुरु

[१]

दया करो स्वामीराज महाराज ।। टेक ।।
चरण छांड़ बिखयन संग धावे आवे न मन को लाज ।। १ ।।
हृदय बीच तुम रहियो स्वामिन और नहि कुछु काज ।। २ ।।
भजनप्रिय कविनायक हौं तुम संतन के सिरताज ।। ३ ।।

[२]

धन्य जो सद्गुरु नाथ मनावे ।। टेक ।।
मनपंचीसे गुरु मुख निकसे सुमधुर शब्द चुनावे ।। १ ।।
संतसभा बिच अपने को नित गुरुसुत माहि गिनावे ।। २ ।।
कविनायक गुरु चरितामृतमय नव नव भजन सुनावे ।। ३ ।।

[३]

सुधारस गुरु ने खूब पिलायो ।। टेक ।।
सारासार विचार मनोहर झूलने माहि झुलायो ।। १ ।।
नींद लगी तब ज्ञान सेज पर अपने हाथ सुलायो ।। २ ।।
कविनायक गुरुशिष्यभाव सब इस बिध सहज भुलायो ।। ३ ।।

[४]

अब मैं गुरु भज सुमति लगाऊं ।। टेक ।।
सुनि सुनि बोध बिमल भजन की अंतर्धन लगाऊं ।। १ ।।
पुलकित गात प्रेमरुद्ध गल गुरुबिन कछुहि न गाऊं ।। २ ।।
सींच सींच निज नयन सलिल गुरुचरण सरोज भिगाऊं ।। ३ ।।
बिभ्रम करिणि स्वसुख निवारिणि माया ठगनि गाऊं ।। ४ ।।
कविनायक गुरु प्रेम रंग से अंतर्याम रंगाऊं ।। ५ ।।

[५]

गुरुपद, सुमिरऊं बारंबार, सुमिरऊं बारंबार ।। टेक ।।
प्रथम दयाकरि प्रगट्यो तासे, सारासार बिचार ।
परम अमोलिक मो पे चढ़ायो ग्यान बिराग सिंगार ।।
मोरे सहित जिन सहज करायो अखिल ब्रह्म निर्धार ।
होवन लागा अबतो अपना अपने माहि बिहार ।।
ज्यासे निरस्यो संसृतिदायक सकल अमंगल भार ।
कविनायक गुरु कृपा जलधि को किस बिध पाऊं पार ।।

[६]

अब तो गुरु ने तोड़ दियो भवबंध बे ।
अहंकार एक पारघ आयो भवजाले में मोहे फसायो ।।
अंधेरी अग्यान को कोठरी वो में किया था बन्द बे ।
काम क्रोध सब बैरी गाढ़े आगे है भयंकर ठाड़े ।।
दुष्ट जनों का मेल न छोड़े अधिक दियो दुंद बे ।
आशा तृष्णा सबहि बिखारी नागिनी वामे घोर अंधेरी ।।
फुफकार से जीव घबराया, बुद्धि भई थी मंद बे ।
शरण गये का राखन हारा, ग्यान कुंज से कुलुप निकारा ।।
स्वामी ने मोहे मुक्त किया तब पायो सहजानंद बे ।
घृष्णेश्वर शिव भोला शंकर, निर्विकार निःसंग निरंतर ।।
पूरण जैसा आदि गुरु ने कीन विनायक छंद बे ।।

[७]

वेदवचन सम गुरुवचनों पर धर मनुवा विश्वास ।
भवसागर में डूब मरेगा निकल जायगा सांस ।। टेक ।।
रामकृष्ण सम परमेश्वर के बड़े बड़े अवतार ।
गुरु चरणन से लिपट रहे सब जाने क्यों न गँवार ।।
चांद सुरुज और राजा परजा लेन देन संसार ।
तीन लोक विश्वास चलावे और कौन आधार ।। १ ।।

मात बिना कोऊ सत्य न जाने पिता कुँवर का कौन।
याही पर विश्वास सकल को परघट जग में जौन ।।
याही रीत से ठौर ठौर पर नित्य भरोसा रखना।
वेदशास्त्र और गुरुवचनों को क्योंकर झूठ समझना ।। २ ।।
वेदशास्त्र गुरु मात पिता का कहना नहिं माना।
रीति बड़ों की छोड़े जो कुई चलता मन माना ।।
परमारथ तो दूर हि वाको प्रपंच सुख नाहीं।
देख देख यह बाल विनायक हर हर कहते भाई ।। ३ ।।

[८]

सुखकर सद्गुनी जन को संग ।। टेक ।।
नयन बसे शुभ चित्रकार के हरिहर मूर्ति अभंग ।। १ ।।
गायक निशिदिनी हरि गुण गाकर रहते आपहि दंग ।। २ ।।
कबिजन को कबिता ही बतावत कविनायक शिव रंग ।। ३ ।।

[९]

दयानिधि क्षमा करहु गुरुराई ।। टेक ।।
मम अपराध अपार जगत में कछु नहि जात समाई ।। १ ।।
तीरथयात्रा करि करि तोहर व्यापकता हि गमाई ।। २ ।।
छीन लई तब मानस परता अंतर ध्यान लगाई ।। ३ ।।
कहा कहूं तव स्तवनहि करि करि वाक्परता भी डुबाई ।। ४ ।।
स्वयं प्रकाशक शशिरविनायक उपमा तोही लगाई ।। ५ ।।

[१०]

महात्मा पावे सुख न कलेश ।। टेक ।।
स्तुतीकरत पुन्य लै जावे पातक लेत खलेश ।।
अंतर बाहेर परमसुशीतल जिमि नभ विमल कलेश ।।
कबि नायक शिवरूप बिराजे कभिहिन कौतुक लेश ।।

२—श्री शंकर स्तुति

[११]

भज, भज, शंकर करुणानिधान ।।टेक।।
सुगम सबनको कलियुग माही साधन येहि प्रधान ।।
सकल कामना रहित भजन को लागत नाहि बिधान ।
सिद्धि बिनायक तात भजन बिन जग में न समाधान ।।

[१२]

उस तन मंदिर अंदर सुंदर शंकर रूप सुहावे ।
भक्त धुरंधर आशा तृष्णा सागर माहिं बहावे ।। टेक ।।
ब्रह्मरूप सब जगत पसारो निरखि सके समदृष्टी ।
लाभालाभ समानहि जाको कबहु न देखा कष्टी ।। १ ।।
बिसर गया अभिमान, दंभ, मद, अखंड शिवगुण गावे ।
वाको अघटित माया ठगनी किस विध आन ठगावे ।। २ ।।
एक न जाने दोउ न जाने नहिं जाने कछु ग्यान ।
सिद्धि विनायक शिवपद जाने और सबहि अग्यान ।। ३ ।।

३—श्री घृष्णेश्वर स्तुति

[१३]

भज मन घृष्णेश्वर शिव सांब, जिनके संग रहे जगदंब ।।
कोटि कोटि कंदर्प लजावे ऐसी सुन्दरताई ।
स्वयं प्रकाशक छवि प्रभु की किनसे वर्णि न जाई ।।
भंग धतूरा पाकर बैठे अंग बभूत रमाई ।
भालचन्द्र शुभ जटाजूट में निर्मल गंग सुहाई ।।
बाघम्बर कटि कसकर बांधे ओढ़ लीन गज छाला ।
भुजंग भूखन नीलकंठ में पड़ी रुण्ड की माला ।।
नंदी पर असवार महेश्वर डिमि डिमि डमरु बजावे ।
भूत प्रेत बेताल संग में त्रिशूल हात सुहावे ।।

भक्ती भाव से नारद तुंबर मधुरी तान सुनाते।
बाल विनायक शेष शारदा निशिदिन शिवगुण गाते ।।

४—श्रीकृष्ण स्तुति

[१४]

बिलसत बाल रूप नंदलाल ।। टेक ।।
सुंदर कोमल शामल मूरत, लोचन कमल विशाल ।।
ललित कपोल बिलोल सुकुंडल मृग मद चंदन भाल।
अलंकार सब अलंकार को सोहत दीनदयाल ।।
दरस परस कर मोहन के भये गोकुलबासी निहाल।
धन देखे जिन कबिनायक शिव मानस राजमराल ।।

[१५]

अद्‌भुत खेलत रास विहारी।
गोवर्धन धर रास रचो सब गोपी मानस हारी ।।
निवटि निवटि रिपु निजपद देवे करुणा नयन निहारी।
लखि न परे कछु बेद कहे बूझत गति न तिहारी ।।
सब कबिनायक शिवहि बखानत सगुन ललित बलहारी ।।

[१६]

धेनु चरावनहारे प्रभु तुम, धेनु चरावन हारे ।।टेक।।
निज वैकुंठ भुवन छांड़ के, ठाड़े बलि के दुवारे ।। १ ।।
निर्मल राधा छाँड़ दई अरु कुबरी बदन निहारे ।। २ ।।
जुद्ध विशारद कालयवन वह, जाके संग तुम हारे ।। ३ ।।
दुर्योधन की मेवा त्यजकर, बिदुर सदन सिधारे ।। ४ ।।
त्रिभुवन साखी बाल बने हो, कविनायक शिव प्यारे ।। ५ ।।

[१७]

मोहन मोहन, मो पे डार ।। टेक ।।
सच्चिद्‌सुखघन जगदारमा लीन मनुज अवतार ।।

एक निरंजन तदपि दिखावत देव भक्त व्यवहार ।
रज्जुसर्प सम तो पर भासत स्थिरचर जगदाकार ।।
मायापति सब विश्वरूप तूं नभ समान अविकार ।
बिनायक ध्वज सहज तिहारी लीला अपरंपार ।।

[१८]

बलवान महा मोह महिमान ।। टेक ।।
परनारी रत भयो देव गुरु, जाको बेद प्रमाण ।।
सहस बाहु सम परम सियाना कीन विप्र अपमान ।
बेद बिशारद मर्‌यो दशानन पुनि पुनि धरि अभिमान ।।
जसमत रोवे जमुना जल बिच डुब्यो श्री हरि मान ।
मानतहूँ मैं कबिनायक यदि केवल वृषभ समान ।।

[१९]

गोविंद नमो सच्चिदानन्द ।
नील कमल दल शामल कोमल निर्मल गोकुलचंद ।।
मंदहसन हरि कुंद दशन शुभ शुभ पीत बसन मुकुंद ।
निज जनरंजन अखिल निरंजन भवभंजन सुखकंद ।।
सुंदर मंदर गिरि कंदर बिच ध्यावत मुनिजनवृन्द ।
अति सुख दायक बिनायक ध्वज चरण सरोज सुगंध ।।

५—श्रीराम स्तुति

[२०]

प्रगट धन धन अवध बिहारी ।। टेक ।।
अंतर्यामी उदित प्रेम से, चिदानंद अविकारी ।।
त्रिभुवन सुंदर मोहनि साँवरी मूरति परम पियारी ।
लोचन सजल पुलक गात तनु कंपित रूप निहारी ।।
सूजत नाहीं अब कछु मो पर, प्रभु ने जादू डारी ।
जिनके निश्चल भक्त शुकादिक, कबिनायक सुविचारी ।।

[२१]

प्यारे, दशरथराज हमारे।
सुंदर मार बसंत पुरंदर आगे कछु न तिहारे ।।
कंदुक सम दशकंदर सहज उड़ावन हारे।
बानर बानर रहे न धन धन हम नर तेरे सहारे ।।
हरखि निरखि हम नयन नीर से कब पद पद्म पखारे।
निज सुखदायक सब कबिनायक धनुसायक रखवारे ।।

[२२]

भजमन दशरथ राजकुमार ।। टेक ।।
निर्बिकार बिभु भक्तन कू हित लीन राम अवतार ।।
सहज भजन से निरसत प्यारे सकल मंगल सार।
भक्त वत्सल प्रभु करुणा सागर प्रणत काम मंदार ।।
अपार करित मुनिजन गावत निज निज मति अनुसार।
कबिनायक सितिकंठ कंठगत निसि दिन जगदाधार ।।

[२३]

अद्भुत राम मनोहर सोही ।। टेक ।।
जामे रमते निसदिन योगी अंतर मुख मन होई ।।
जाके सुंदर तासे सुंदर भासत हू सब कोई।
कबिनायक प्रभु रूप समंदर जामे तनु मति खोई ।।

[२४]

भवन से सुलभ भयो रघुवीर ।। टेक ।।
ज्या कारण बन तपसी तपते, पेहरे बलकल चीर ।।
संतत मुनिजन फलमूलाशन, करते क्षीण शरीर।
मुदितांतर कब कबिनायक, तनु पुलकित नीर ।।

[२५]

बन में बिश्वंभर अभिराम।
धनुष बाण धर सुंदर बलकल बसन जटिल तनु राम ।। १ ।।

पाछे पाछे लखन चलत है जनकनंदिनी बाम ।। २ ।।
देत शिखावन पितुकारण त्यज धरणिराज धन धाम ।। ३ ।।
मायापति प्रभु तदपि बतावत टरत न बिधिगति बाम ।। ४ ।।
कबिनायक चतुरानन पूजित सहत शीत अरु धाम ।। ५ ।।

[२६]

केवल भगत भक्ति के धाम ।
निषादपति निज हृदय लगावत स्थिर चर अंतर्याम ।।
परमेश्वर प्रभु तदपि करत है मुनि जन देखी प्रणाम ।
धाट भूटे बेर शबरि के यद्यपि पूरण काम ।।
ज्ञान समंदर बंदर के संग बिहरत सुंदर शाम ।
शुक सनकादिक कबिनायक जन हृदय कमल विश्राम ।।

[२७]

कब मैं देखूं नयन भरि राम ।। टेक ।।
मंदहसन शुभ पीतवसनधर सुंदर नीरद श्याम ।।१।।
कमल बिलोचन कलिमलमोचन सकल चराचर धाम ।
किरीटमुकुट हारांगदभूषण चंदन ललित ललाम ।। २ ।।
धनुषबाणधर परम सुहावन त्रिभुवन पावन नाम ।
बहुसुखदायक सब कविनायक शिवमानस बिश्राम ।। ३ ।।

[२८]

सुनो मन, अद्भुत भजन प्रताप ।। टेक ।।
करि न सके कोऊ राम भजन से मिटे न ऐसो पाप ।।
बाल्या के मुनि भये बाल्मिक करि करि उलटा जाप ।
मगन भये कविनायक सज्जन कछु न रहा भवताप ।।

[२९]

भज भज भवभय भजन राम ।। टेक ।।
दीनदयाल प्रफुल्लित लोचन, नील कमल दल शाम ।।

श्रवण बिलोल सु कुंडल मंडित सोहत ललित ललाम।
कटि पीतांबर दिव्य धनुर्धर निज जन हृदय बिराम॥
मंगल भगिनि सहित लोकहित सकल सुमंगल धाम।
निज सुखदायक कबिनायक शिव रटत निरंतर नाम॥

[३०]

हमारो रामचरण विश्वास॥ टेक॥
और ठौर विश्राम न पायो, बहुत कीन सायास॥ १॥
राम राम श्रीराम रटेंगे, जब लक घट में साँस॥ २॥
दीन दयाल प्रसन्न भयो अब, नहिं काहू की आस॥ ३॥
राम सहाय लह्यो नर वाको छूटत है भवपाश॥ ४॥
स्वयं प्रकाशक शशि रविनायक रामहि विश्व विलास॥ ५॥

[३१]

अब मैं कीन राम पद ठाऊं॥ टेक॥
साम्राज्यहि को देवन लग्यो लेवुन खूब दटाऊं॥ १॥
राम कृपा बल एक ठौर पर चंचल चित्त बिठाऊं॥ २॥
बिचार करि करि विश्व ठगावनि माया मार हटाऊं॥ ३॥
मरि मरि उदर औरन से भी भजनानंद लुटाऊं॥ ४॥
अचरज नहि कविनायक विभुबल, सुखदुःख द्वंद मिटाऊं॥५॥

[३२]

राम राम राम राम राम नयन माही।
बसत विश्रामधाम निर्मल छबि छाई॥ टेक॥
शामसुंदर रूप कोटी मदनमति भुलाई।
कमलनयन हास्यवदन बिमलचंद्र नाई॥ १॥
कुंडल की झलक परी कपोल पर सुहाई।
भाल तिलक मुगुटधारी रतनहार सोही॥ २॥
पीतांबर धनुखधारी सज्जन सुखदाई।
अंगदादि भूषण सब बरणिन छबि जाई॥ ३॥

भरत शत्रुघन बिठाये निकट लखनभाई।
और सिया सोहै नयन चरण से लगाई ।। ४ ।।
हरीहर की भेट देख भिन्नता न पाई।
बाल विनायक सुरता राम से लगाई ।। ५ ।।

६—श्री रंग स्तुति

[३३]

भक्तहित, सगुण भयो श्री रंग ।। टेक ।।
मंदस्मित मुख नयन मनोहर नीरद श्यामल अंग ।। १ ।।
कुंडलतिलक गले बनमाला उदराबलि त्रिभंग ।। २ ।।
कटि पितांबर बिबिधालंकृत सोहत कमला संग ।। ३ ।।
गदादरांबुज चक्रमुगुटधर वाहनराज बिहंग ।। ४ ।।
ध्वजवज्रांकुश चिन्हित पदतल जासे निकसी गंग ।। ५ ।।
लज्जित रूप निरखि भयो तब सुंदर तनय अनंग ।। ६ ।।
स्वयं प्रकाशक शशिरविनायक निर्मल कीर्ति अभंग ।। ७ ।।

७—श्री पार्वती स्तुति

[३४]

जय जय जय गिरिराजकिशोरी ।। टेक ।।
भव भव विभव पराभवकारिणी मन मुखचंद्र चकोरी ।।
सुखवंदिनि, असुर निकंदिनि चंद्रचूड़ चितचोरी।
शुकसनकादिक कविकुल संकुल करत करत बहोरी ।।
सुरूपसागरी सकल गुणागरी बंदू नित करजोरी।
सिद्धिबिनायक जननि तिहारी बिमल कीर्ति किमि थोरी ।।

८—श्री हनुमान स्तुति

[३५]

जय जय महाबीर हनुमान ।। टेक ।।
सीय शुद्धि करि लंक जराई, तुच्छ दशानन मान ।।
भीम मेरु सम रूप धरे लघु केवल राइ समान ।
जग में रघुबर भक्ति बढ़ाई बिश्व बिदित महिमान ।।
अद्भुतबल अरु बुद्धि पराक्रम तदपि न लेश गुमान ।
कबिनायक शिवरूप कपीश्वर सहज लह्यो सन्मान ।।

९—मन

[३६]

मनवा नित हरि चरित बखान ।। टेक ।।
भजन बिना यह सुंदर मानुष देह सजीव पखान ।।
कलि में श्री हरि कथहि प्यारे सकल सुमंगल खान ।
सुख के कारण सब कविनायक लिखते येहि लिखान ।।

[३७]

मनबा, अस मति कौन सिखाई ।। टेक ।।
मनक्रम बचन जननि जनक गुरु सबकी चित दुखाई ।।
निपट कपट प्रिय अंतरजामी ऊपर संत दिखाई ।
कबिनायक गुरु बोधामृत त्यज प्रखर बिषय बिष खाई ।।

[३८]

अब मन कहा करत पछताई ।। टेक ।।
जान बूझ कर पातक कीनो तब न बुद्धि घबराई ।। १ ।।
निगमागम गुरुबोध छोड़कर अपनी कीनि ढिताई ।। २ ।।

जनम गयो सब परमेश्वर की जिनहि न कीरत गाई ।। ३ ।।
बंदन कबहु न कीन प्रभुसन हात जोरी शिर नाई ।। ४ ।।
कविनायक गुरु भज भज सन्निध कृतांत आयो भाई ।। ५ ।।

[३९]

त्यज मन कपट दंभ पाखंड ।। टेक ।।
जनमभूमि अति पुनीत तेहारी, सुंदर भारतखंड ।।१।।
पुनि पुनि नर तनु सुलभ न प्यारे भजले राम अखंड ।।२।।
कविनायक गुरु बोध सुनिहि किमि होत न हृदय दुखंड ।।३।।

[४०]

मनवा खूब दिवाना, ग्यान नहीं पहचाना ।। टेक ।।
बार बार कछु निश्चय करता बार बार फिसलाता ।
करम गति से घेर लियो है कबु हँसता कबु रोता ।। १ ।।
मनो राज्य जो करते आया वोमे से कछु थोरा ।
इच्छाफल तू पाया होगा वाको नगर उजारा ।। २ ।।
करता है कछु होता औरहि तासे दुखियारी ।
रोती सूरत काहू ने जिमि मूँ पर थप्पर मारी ।। ३ ।।
संकल्पहि नहीं करता जो कछु ग्यानवान होता ।
कर्ता हर्ता ईश्वर भज के अखंड सुख पाता ।। ४ ।।
तो को छांड़े भये निराले जाको रूप न नाम ।
तेरे से पर बाल विनायक जा रहे शिवधाम ।। ५ ।।

[४१]

मनवा राम भजो भाई, छांड़ो अपनी चतुराई ।। टेक ।।
पढ़ पढ़ पथ्थर भये घनेरे, मर्म न जानत कोई ।
स्वधर्म छांड़ भये बावरे, फिरते करत रसोई ।। १ ।।
ऋषि सम्मत को झूट समजकर उलटी बुद्धि चलाई ।
आप छांच बिन तरस रहे हैं चोरहि खात मलाई ।। २ ।।

जो देखा सो पंडित बनकर अपनी रीत बताता।
उलटी पुलटी को जन माने फिर पाछे पछताता ।। ३ ।।
स्वधर्म मंदिर टूटा फूटा, मट्टि बनेगी आगे।
जान बूझके योग याग तब नाम घाट पर भागे ।। ४ ।।
भजन बिना कछु उपाय नाहि काहे को भरमाते।
बाल विनायक सुन कर शिव का राजा राम मनाते ।। ५ ।।

[४२]

मनवा पांव परूँ तेरे, हरभज सांझ सबेरे ।। टेक ।।
छांड़ छांड़ जो ढंग आजतक कीने बहुतेरे।
बिखय संग से कबहुन टरते जनन मरण के फेरे ।। १ ।।
नारी पुरुख अपार जगत में, वाहू मै तू कौन।
धन विद्या का अंत न लागे काहे को अभिमान ।। २ ।।
आपहि पापी परनिंदा से क्या फल हात गहेगा।
तनकी नैया फूटे पर भवसागर माहि बहेगा ।। ३ ।।
काल सर्प के मुख में निर्भय बैठा मंडुक नाई।
मन राजा तू राज करत है याको अचरज भाई ।। ४ ।।
समझाने की भई सीमा अब किस बिधि समझावे।
बाल बिनायक शिव गुण गाके परब्रम्ह सुख पावे ।। ५ ।।

[४३]

मनवा परमात्मा जान रे ।। टेक ।।
अंतरयामी सुरत छुपाई स्थूलदेह में व्यापक होई,
करचरणादि पाचो माही।
कर्म चलावे जो सबका ही तीन लोक को स्थान रे ।।
सूक्ष्म देह की देखे लीला, पांचो प्राण दशेंद्रिय मेला,
तू भी सोलवा वामे भेला।
सबके रहिके सबसे निराला, साक्षी रूप परमाण रे ।।
जागर सपना सकल पसारा, सुषुपति का जो देखन हारा,
रविशशि को भी जासे उजारा।
घट घट व्यापक रहित विकारा, भूल गयो नादान रे ।।

सहज समझ में किस विध आवे, तर्क भी जाके पास न जावे,
शब्दज्ञान से कछु ना होये।
एक गुरु के घर ही पावे, अनुभव का सामान रे ।।
जगत पसारो खेल ही जाको, श्री घृष्णेश्वर स्वामी नीको,
आदि गुरु शिव जो सबही को।
लक्ष विनायक बाल उसी को, अनादि सिद्ध पैछान रे।।

[४४]

मोरे मन अब उपजावत है पाप ।। टेक ।।
देहरूप मैं मान आजलौं येहि कीन बड़ पाप ।। १ ।।
मिथ्या जगदाभास न जाना जिमि रज्जु पर साँप ।। २ ।।
घट घट आत्मा भिन्न मान करि वृथा कौन संताप ।। ३ ।।
बाचा विरहित वाकी कविता कौन लगाई छाप ।। ४ ।।
स्वयं प्रकाशक शशिरविनायक यह भी मिथ्या जाप ।। ५ ।।

१०—विनय पद

[४५]

प्रभु की शोभा बरणि न जात ।। टेक ।।
लोचन कमल सलिल भरि आये कंपित पुलकित गात ।।
शिव-शिव गद्‌गद् कंठभयो अब किस बिध निकसे बात।
नारदमुनि शुक शेष यथा मति सिद्धि बिनायक गात ।।

[४६]

प्रभु बिन मोर चित अकुलाई ।। टेक ।।
कब दर्शन करि चरण कमल पर परूँ लकुट की नाई ।।
शरणागत को नित तरसाना यामें कौन निकाई।
सब कबिनायक परमात्मा को बिरहन हृदय समाई ।।

[४७]

प्रभुगुण बरणि कवन बिधि जाई ।। टेक ।।
सुर मुनि सिद्ध नाग नर किन्नर सबकी सुमति लजाई ।। १ ।।
पार न लागे निगमागम सब कहते ढोल बजाई ।। २ ।।
सब बिद्यानिधि सिद्धिविनायक बैठे सिरहि खुजाई ।। ३ ।।

[४८]

इतना मोर कहा प्रभु कीजे ।
मिथ्या मायिक कलिजन निरखी खिन हि मानस खीजे ।।
ब्रम्ह बिचार हि करे निरंतर ऐसी सन्मति दीजे ।
स्वयं प्रकाशक शशिरविनायक चिंतन में चित रीझे ।।

[४९]

जिनको परमातमा पर नेह ।। टेक ।।
बिचार करि ब्रम्हार्पण कीया, प्राय सहित जड़देह ।। १ ।।
देव भक्तजन एकहि यामे कछु न रह्यो संदेह ।। २ ।।
कविनायक सज्जन को होवत विश्व चराचर गेह ।। ३ ।।

[५०]

वा बिन कवन चराचर माहि ।। टेक ।।
जापर मिथ्या विश्व विभासत बेद कहत समुझाई ।।
अंतरयाम निरखी होत है परमानंद बधाई ।
स्वयं प्रकाशक तासे कहावत शशि रविनायक भाई ।।

[५१]

अब मैं हरभजनन को गाऊं ।
घेरि घेरि अति चंचल मति से नव नव कबित रचाऊं ।।
संत सभा बिच आप नाचु अरु औरन कू भी नचाऊं ।
भजनामृत रस रोम रोम भरि बिखयन जहर पचाऊं ।।
भवसागर बिच डूबन लाग्यो आपनो जीव बचाऊं ।
सब जगदात्मा कविनायक शिव वा बिन और न चाहूं ।।

[५२]

कब मैंपन आप भुलाऊँ ।
बिबेक बिरागहि शमदम साधी इन्द्रिय निकर दमाऊं ।।
श्रवण मनन अरु निजध्यास बिच अंतःकरण रमाऊं ।
मायिक जगदाभास सहित यह शरीर बुद्धि निभाऊं ।।
ब्रम्हानंद जनित सुनिर्मल निश्चल शांति कमाऊं ।
हरिहर ब्रम्हा सिद्धि बिनायक भेदाभेद गमाऊं ।।

[५३]

हरिहर भेद नहीं लवलेश ।। टेक ।।
शिवपूजक हरि विमुख बने तों सहि न सकत महेश ।।
शिवनिंदक हरि भक्त कहावत वाको विमुख रमेश ।
विबिधरूप प्रभु होत भक्तहित व्यापक देश बिदेश ।।
अव्दय भजनहि सुखकर ऐसा निगमागम संदेश ।
शशिरविनायक सब जगदात्मा बूझत नहिं उपदेश ।।

[५४]

अब तो हरख न हृदय समाई, घरी मरण की आई ।। टेक ।।

सारासारविचार अग्नि में संशयरासि जराई ।
देहोऽहंमति कहती थी वह, आपहि आप लजाई ।। १ ।।

नित्य निजातमरूप निरंजन, जान लियो दृढ़ भाई ।
ब्रह्मानन्द लह्यो है निर्मल धन धन मों सम नाहीं ।। २ ।।

केवल मिथ्या मायिक संसृति दुःख न देत दिखाई ।
अज्ञान भाजि गयो कहाँ वाको पुनरपि सुधहि न पाई ।। ३ ।।

धन धन मानुष जन्म भयो अब रहा न करतब कोई ।
जो कछु जग में करने की थी सगरी कीन कमाई ।। ४ ।।

कविनायक गुरु करुणा से भई माया मोह बिदाई ।
धन धन धन धन धन धन हमरी तृप्ति न बरणी जाई ।। ५ ।।

[५५]

दयाघन समदर्शी नित संत ।। टेक ।।
साधक जन के सहज पठावत सुख दुख सकल दिगंत ।। १ ।।
भाव सहित जग निरखत सगरो एकहि ब्रह्म अनंत ।। २ ।।
स्वयं प्रकाशक शशिरविनायक स्वयं बने भगवंत ।। ३ ।।

[५६]

मोसम, कहो कौन बड़ भागी ।। टेक ।।
सकल छांड़ मन भयो सद्गुरुचरण कमल अनुरागी ।।
निजसुखदायक परमारथ में सदाबिमल मति जागी ।
कबिनायक गुरु करुणा से अब रह्यो न सुखदुःख भागी ।।

[५७]

गायक माधुरी तान सुनावो, सब घट व्यापी प्रभु को मनावो ।।टेक।।
ताल काल सुर राग घनेरे, वृथा शब्द जिन हरि न निहारे ।।१।।
सातो सुर को असुर न मानो । आदि अंत में हरि पहिचानो ।।२।।
संगीत विद्या निज पद दायी । वाही को मति हरि से लगाई ।।३।।
नारद सा कोऊ बिरला गाता । अंदर बाहेर निज सुख पाता ।।४।।
शशिरविनायक अंतर जामी । भूला सो नर लौन हरामी ।।५।।

———

निपट निरंजन वाणी
की
क्रम-सूची

संख्या	प्रथम पंक्ति	पद संख्या	पृष्ठ संख्या
८७	बातन के कहे ते गोरख तत्वज्ञान पाये	६०,	६२
८८	बातन के कहने से गोरख को ज्ञान भयो	६१,	६३
८९	बिना ही हलक बिसमिल्ला और अल्ला करे	२१,	३८
९०	बुद्धि के गनेस और ऋद्धि सिद्धि के विधाता,	४८,	४८
९१	बैठा ऐसा बैठा नहीं, खड़ा ऐसा खड़ा नहीं	५६,	५२
९२	बैठा है के तक्त पर के ऊपर के दूला अलबेला है	१११,	६८
९३	ब्रह्म का है पिता कौन माया की है माता कौन	५८,	५२
९४	ब्रह्मा हु न जान्यो मैं सृष्टि का रचनहार,	५७,	५१
९५	भीलनी के झूठे खाये बेर मित्र सदना से कसाई	६१,	५३
९६	भूमि कहै मैं हूँ बड़ी, शेष कहै शीश खड़ी	६३,	५३
९७	भूंख लगे, प्यास लगे, शीत अरु घाम लगे,	जीवनी	६
९८	भेजा दरबान हाथ शाही तोशफा शाहंशाह	जीवनी	२६
९९	मन्दिर खुदा न जावे, मजीद तो देव न आवे,	जीवनी	१६
१००	मन का कड़ासन आसन चढ़ा सहस्र दल	१०१,	६६
१०१	मन माया आदम नहीं, और न था शरीर	जीवनी	२८
१०२	मन मूरख निरख रहा नैनन सों	जीवनी	९
१०३	मन ही करे विरागी मन ही करत रागी	३३,	४२
१०४	मरे पढ़ैया बैल, मरे वो अड़ियल टट्टू,	८६,	६१
१०५	मलधारी मूत्रधारी अंग अंग छूतधारी	३८,	४३
१०६	महमद नूर नर जानत जहान सब,	जीवनी	२६
१०७	ये जग मूत ही सो भयो,	६९	५५
१०८	ये जिम्या ऐसी पापिनी सुधि न राखे आपनी	२८,	४०
१०९	ये मेरे मन्दिर औ ये मेरे महल मुलक	८०,	५९
११०	रति बिन भाई भरोसा न राखे	९३,	६३
१११	राजा और प्रजा रूठे मित्र और भाई रूठे,	८१,	५९
११२	राम जप कृष्ण जप कोई तो भी नाम जप	९४,	६४
११३	रूह को न रोटी दिया, त्रिकुटी पै न पानी पिया	२५,	३९
११४	रोम रोम चर्पट बसैं, जित देखूँ तित नाथ	जीवनी	२९
११५	लस्कर लवाज संग डफ ढोल चतुरंग	जीवनी	२४
११६	लोभ के बाजार में विचार कर बैठे मन	७९,	५९
११७	लंगड़ा क्या जानै दौड़ धूप करे	८,	३३

मानपुरी-वाणी
की
क्रम-सूची

संख्या	प्रथम पंक्ति	पद संख्या	पृष्ठ संख्या
४२८	साईं तेरो नाम जपती दासी वो	४६४,	२४०
४२९	साईं निर्त वह मारो तुही	४१८,	२२५
४३०	साईं भाव सो मिलि जाय	३४९,	२०२
४३१	साईं मन भावे रैन जगावे	३८०,	२१३
४३२	साईं मनवांछा कियो मोही	३७०,	२०९
४३३	साईं मेरा भूलि न जाय	४३२,	२३०
४३४	साईं मेरे दिल का मरहम	४५७,	२३८
४३५	साईं रे जैसे को तैसा	४०३,	२२०
४३६	साईं हर घट मों बोले	४३६,	२३१
४३७	साईं हरदम ज्यागो	७१,	११०
४३८	साजन घर आयलो	४७९,	२४५
४३९	साजन झूलत मोहि झुलावत	१६८,	१४२
४४०	साजन तन मों खेलत होरी	१७२,	१४३
४४१	साजन होरी खेले	१७४,	१४४
४४२	साजनवा सावध होरे रे	५०२,	२५३
४४३	साधु भवबंधन नहिं जाने	५२२,	२६०
४४४	साधो गाइये रिझाइये राम को	८५, ४७३,	११४,२४४
४४५	साधो न पाये जी पार तुम्हारा	३१३,	१९०
४४६	साधो मोरे मन मोहु बर हो रे	३६०,	२०६
४४७	साधो राम के दरसन सब माँही	१०१,	१२०
४४८	साधों सबद सिंधु को	४५३,	२३७
४४९	साधो सोई दिन उत्तम	५२५,	२६१
४५०	सारंग राग अति ही सलोना	२३५,	१६४
४५१	सावन घर घर गावत भावत हमकु	१६९,	१४२
४५२	साहेब गुरु के चरन मान	७९,	११२
४५३	साहेब देखावे	३१९,	१९२
४५४	सीतल छाया साजन की	४८०,	२४६
४५५	सुखदाई री साँवरो सुरवंग	३३४,	१९७
४५६	सुधि हु नर बिछुरे मिलबे की	२८७,	१८२
४५७	सुन्दर रुप देखा अगम अरूप	३२३,	१९४
४५८	सुन री जसोदा ग्वालनी बोले	१६३,	१४०

मराठी पद

अनन्तनाथ की वाणी

की

क्रम-सूची

कृष्णदास की वाणी
की
क्रम-सूची

विनायकानन्द सरस्वती की वाणी

की

क्रम-सूची